समन्वित कृषि प्रणाली प्रबन्धन

जगपाल सिंह

बी. गंगवार

दिनेश कुमार पाण्डेय

कामता प्रसाद

आशीष कुमार प्रूष्टि

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय

(भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान)

मोदीपुरम, मेरठ–250 110 (उ.प्र.), भारत

कृषि प्रणाली अनुसंधान निदेशालय, मोदीपुरम की एक झलक

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय (PDFSR) की शुरूआत ऐतिहासिक तौर पर 1952–53 में स्टीवर्ट स्कीम के द्वारा किसानो के खेतो पर उर्वरक अनुसंधान के रूप में प्रारम्भ हुई। तीन वर्ष के उपरान्त माँडल एग्रोनोमी एक्सपेरीमैन्ट स्कीम को इस प्रोजेक्ट में जोड़ दिया गया था। सन् 1968 में इन दोनो स्कीमों को जोड़कर AICRP बनाया गया इसके बाद सन् 1989 में फसल प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय के रूप में स्थापना की गयी। ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना के दौरान छोटे एवं सीमान्त किसानो की कृषि प्रणाली सम्वन्धी समस्याओ के समाधान एवं आर्थिक उन्नति के लिये अनुसंधान कार्य करने हेतु फसल प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय का नाम बदल कर वर्ष 2010–11 में कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय कर दिया गया। निदेशालय की प्राथमिकता विभिन्न कृषि प्रणालियों की उत्पादकता, जीवन–क्षमता एवं समस्याएं जानने हेतु, उनका अभिलक्षणन करना, विविध कृषि परिस्थितियों के लिये संसाधन कुशल, आर्थिक रूप से जीवंत एवं टिकाऊँ 'समेकित कृषि प्रणालियों' के प्रमाप एवं प्रति रूप विकसित करना, कृषि प्रणालियों के संदर्भ में संसाधनों की उपयोग दक्षता में सुधार हेतु उत्पादन तकनीकों पर आधारभूत एवं रणनीतिक शोध करना, कृषक प्रक्षेत्र पर कृषि आय एवं उत्पाद–गुणवत्ता मे वृद्विहेतु सस्य–प्रसंस्करण एवं मूल्य– संवर्धन तकनीकों का विकास करना एवं प्रणाली आधारित कृषि उत्पादन तकनीकों का कृषक प्रक्षेत्र पर परीक्षण, सत्यापन एवं परिष्करण करने पर केन्द्रित है। वर्तमान में अखिल भारतीय समन्वित कृषि प्रणाली अनुसंधान के 31 इकाईयाँ समन्वित कृषि प्रणाली केन्द्र, 11 उपकेन्द्र तथा 32 कृषक प्रक्षेत्र प्रयोग इकाईयाँ कार्यरत है तथा जैविक खेती के सन्दर्भ मे राष्ट्रीय स्तर पर अनुसंधान के लिये 13 केन्द्र है, जो कि देश के विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयो एवं अनुसंधान संस्थानों/केन्द्रों पर स्थित है। कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय के मार्ग दर्शन में देश के सभी प्रमुख पांच परिस्थितिकीय क्षेत्रों शुष्क, अर्द्व शुष्क, उपार्द, आर्द्व एवं समुन्द्र तटीय क्षेत्रो पर कार्य किया जा रहा है।

समन्वित कृषि प्रणाली प्रबन्धन

जगपाल सिंह
बी. गंगवार
दिनेश कुमार पाण्ड़ेय
कामता प्रसाद
आशीष कुमार प्रूष्टि

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)
मोदीपुरम, मेरठ–250 110 (उ.प्र.), भारत

सन्दर्भ : जगपाल सिंह, बी. गंगवार, दिनेश कुमार पाण्ड़ेय, कामता प्रसाद एंव आशीष कुमार प्रूष्टि (2012)। समन्वित कृषि प्रणाली प्रबन्धन। कृ॰ प्र॰ अ॰ प॰ नि॰ प्रकाशन संख्या 12, पेज 1–142।

प्रकाशन वर्श : 2012

प्रकाशक : परियोजना निदेशक, कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय,
मोदीपुरम मेरठ –250 110 (उ.प्र.), भारत

मुद्रक :–

युगान्तर प्रकाशन (प्रा.) लि., डब्ल्यू एच–23, मायापुरी, नई दिल्ली–110064
दूरभाष – 011–28115949, 28116018

डॉ. अनिल कुमार सिंह
उप महानिदेशक (प्रा सं प्रा)
Dr. Anil Kumar Singh
Deputy Director General (NRM)

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि अनुसंधान भवन-II, पूसा, नई दिल्ली-110 012
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
KRISHI ANUSANDHAN BHAWAN-II, PUSA, NEW DELHI-110 012

Ph. : 91-11-25848364 (O), 25843496, 25849786 (R)
Fax. : 91-11-25848366
E-mail: aksingh@icar.org.in; aks_wtc@yahoo.com

प्राक्कथन

भारत मुख्यतया गाँवों में बसा है और इसकी 70 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में ही बसती है, जिसकी मुख्य आजीविका कृषि पर आधारित हैं। जनसंख्या के बढ़ते स्वरूप का एक परिणाम है कि वर्तमान में लगभग 86 प्रतिशत किसान लघु एवं सीमांत हैं। उनके पास पर्याप्त काम करने योग्य हाथ तो हैं पर दूसरे संसाधन जुटाने में वे असमर्थ हैं तथा नई–नई कृषि तकनीकें अपनाने से भी वंचित रह जाते हैं। ऐसी स्थिति में उनके जीवन स्तर को किस तरह उपर उठाया जाए और किस तरह जो कृषि प्रणाली वे अपना रहे हैं उसमें सुधार किया जाय, एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए ''समन्वित कृषि प्रणाली प्रबंधन'' पर एक पुस्तक का संग्रह, कृषि प्रणाली अनुसंधान निदेशालय, मोदीपुरम के वैज्ञानिकों ने किया हैं। अभी तक कृषि प्रणाली पर, विशेषकर राष्ट्र भाषा हिन्दी में, उपलब्ध जानकारी न के बराबर है। इस पुस्तक में समन्वित कृषि प्रणाली का अभिप्राय, प्रक्रिया, कार्य पद्धति एवं कृषि व्यवसाय से जुड़े सभी घटकों (फसलोत्पादन, पशुपालन, बागवानी, मछली पालन, मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन एवं वर्मीकम्पोस्ट आदि) के बारे में सम्बंधित विद्धानों द्वारा तकनीकी एवं व्यवहारिक जानकारी दी गयी है। यह पुस्तक वैज्ञानिकों, प्रसारकर्ताओं, प्राध्यापकों, छात्रों, कृषकों एवं कृषि विभाग से सम्बंधित लोगों के लिए तकनीकी शिक्षा एवं ज्ञान प्रदान करने हेतु एवं एक दूसरे को जोड़ने में काफी उपयोगी सिद्ध होगी। मुझे विश्वास है कि यह प्रयास छोटे एवं मध्यम वर्ग के किसानों व बेरोजगार नौजवानों को अपनी खेती से सम्बंधित रोजगार स्थापित करने में कृषि पैदावार में बढ़ोतरी करने के लिए गरीबी एवं कुपोषण को कम करने में तथा कृषकों में खुशहाली लाने में महत्वपूर्ण साबित होगी।

अनिल कुमार सिंह

विषय–सूची

क्रमांक	लेखक	विषय	पृष्ठ स0
1	बी. गंगवार, जगपाल सिंह, दिनेश कुमार पाण्ड़ेय एंव आशीष कुमार प्रूष्टि	कृषि प्रणाली प्रबन्धन	1–8
2	जगपाल सिंह, बाबूजी गंगवार, एवं दिनेश कुमार पाण्डेय	उत्तर प्रदेश के पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों में लघु जोत वाले कृषकों हेतु कृषि प्रणाली मॉडल	9–28
3	एन. रविशंकर एवं ब्रजमोहन	एकीकृत कृषि प्रणाली द्वारा प्राकृतिक ससांधनो का प्रबन्धन	29–34
4	अनिल कुमार एवं बृजेन्द्र कुमार शर्मा	किसानों द्वारा अपनाई गयी कृषि–प्रणालियां एवं उनकी निरंतरता	35–42
5	चन्द्रभानु एवं वीना यादव	वैश्विक तपन (ग्लोबल वार्मिंग) व कृषि	43–53
6	आर्जव शर्मा, दिलीप कुमार मण्डल एवं महेश कुमार	लघु भूमि धारकों की आजीविका में डेरी पशुओं की भूमिका एवं समन्वयन	54–58
7	संजीव कुमार कोचेवाड, जगपाल सिंह एवं दिनेश कुमार पाण्डेय	समन्वित कृषि प्रणाली के अतंर्गत पशुधन प्रबंधन	59–61
8	पूनम कश्यप, आशीष कुमार प्रूष्टी एवं जगपाल सिंह	एकीकृत फसल प्रणाली में बागवानी का समन्वयन	62–67
9	शकुन्तला गुप्ता एवं ओमवीर सिंह	फलों एवं सब्जियों का महत्व तथा उत्पाद	68–76
10	आशीष कुमार प्रूष्टि, जगपाल सिंह,. पूनम कश्यप, दिनेश कुमार पाण्डेय एवं संजीव कुमार कोचेवाड	मीठे पानी में मछली पालन	77–86
11	सुधाशु सेखर पाल एवं कुलदीप सिंह	जैविक कृषि तंत्र एवं संसाधनो का टिकाऊपन	87–94
12	विनोद कुमार सिंह एवं एम.पी. शर्मा	प्रक्षेत्र विशेष पोषण तकनीकी द्वारा फसल पोषक तत्व प्रबंधन	95–100
13	वेदप्रकाश चौधरी एंव दिनेश कुमार पाण्ड़ेय	लघु जोत वाले कृषकों हेतु उपयोगी यन्त्र	101–112
14	कंचन सिंह	संसाधन संरक्षण यन्त्र एवं तकनीकें	113–115
15	समशेर	फसल कटाई उपरान्त तकनीकी एवं खाद्य प्रसंस्करण	116–120
16	एस.पी. सिंह एवं नवल सिंह	खेती में लागत कम तथा ज्यादा लाभ कैसे	121–128
17	हरबीर सिंह	समन्वित कृषि प्रणाली में सूचना का महत्व	129–131
18	सुनील कुमार एवं नंद किशोर जाट	भारतीय कृषि में सूचना प्रौद्योगिकी का महत्व	132–137
19	अनिल कुमार एवं बृजेन्द्र कुमार शर्मा	किसानो की समस्याओ को कैसे जाने एवं उनके निदान के उपाय	138–142

कृषि प्रणाली प्रबन्धन

बी. गंगवार, जगपाल सिंह, दिनेश कुमार पाण्ड़ेय एंव आशीश कुमार प्रूश्टि

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ 250 110

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी 72.2 प्रतिशत आबादी गॉवों में रहती है। इसमे से 65 प्रतिशत आबादी 35 साल से कम उम्र की है अर्थात प्रचुर मात्रा में श्रम शक्ति मौजूद है। एक अनुमान के अनुसार 2025 तक देश की जनसंख्या एक अरब 46 करोड और 2060 तक एक अरब 70 करोड हो जायेगी। इनके भरण पोषण के लिये अनुमानित भोजन वर्ष 2020 तक अनाज 343, दूध 171, सब्जी 168, फल 81, चीनी 22, खाद्य तेल 13 और मांस मछली अण्डा 27 मिलियन टन की घरेलू मॉग की आवश्यकता पड़ेगी। 2050 तक भारत में खाद्य वस्तुओं की मॉग में वर्षिक वृद्वि धान 2.6, गेंहूँ 2.2, दलहन 1.6, फल 4.2, सब्जी 2.5, दूध. 7.8, मछली 0.6 और मॉस अण्डा 0.4 मिलियन टन की आवश्यकता पडेगी लेकिन इनकी पूर्ति के लिये देश में औसत जोत सिकुड़ती जा रही है। सन् 1970–71 में, औसत जोत जो 2.30 हे0 थी अब घट करके 2011–12 में 1.11 हे0 ही रह गयी है। कृषि उत्पाद की ज्यादातर प्रयोग सामग्री मंहगी होती जा रही है लेकिन इस अनुपात में कृषि उत्पाद का उचित मूल्य नहीं मिल पाने की वजह से किसानो की आर्थिक दशा खराब होती जा रही है। जब तक किसानो की समस्याओं को ध्यान में रख करके कृषि वैज्ञानिकों द्वारा परीक्षण नहीं किये जाते है या कोई ऐसा कृषि प्रणाली मॉड़ल विकसित नहीं किया जाता है कि जिससे किसानो की आय में आशातीत वृद्वि हो सके तब तक विशेषकर सीमांत एवं छोटे किसानो का विकास सम्भव नहीं है। कृषि प्रणाली प्रबन्धन एक ऐसा विषय है जो किसानों की आर्थिक दशा सुधार सकता है परन्तु यह आसानी से कृषकों की समझ में नहीं आता। जाने–अनजाने कृषि कार्य करते समय सद्उपयोग करने योग्य अनेकों स्रोत्र व्यर्थ चले जाते हैं। सत्यता, उचित कृषि प्रणाली प्रंबधन के माध्यम से कृषि एवं किसानों की आर्थिक दशा में उल्लेखनीय सुधार सम्भव है अतः कृषि प्रणाली प्रंबधन विषय पर कुछ जानकारी कृषि कार्यकर्ताओं एवं किसानों के उपयोग हेतू यहॉ उल्लेख किया जा रहा है। क्यों कि सीमांत एवं छोटे किसान जो इस समय देश में 86% से अधिक हैं इनके विकास के फलस्वरूप ही भारत का एक आर्थिक महाशक्ति के रूप में उदय सम्भव प्रतीत होता है ।

कृषि प्रणाली

कृषक परिवार और उसके अन्तर्गत आने वाली सभी संसाधनो को समन्वित रूप में इस तरह उपयोग किया जाय कि अधिक आमदनी प्राप्त हो सके और छोटे एवं सीमान्त किसानो की घरेलू जरूरतो को पूरा करता हो वही' दूसरी ओर प्रक्षेत्र अपशिष्ट एवं फसल उत्पाद एवं अवशेषों के पुनः चक्रण द्वारा टिकाऊ फसलोत्पादन में सहायता प्रदान करता हो। साधारण शब्दों में कृषक परिवार के पास जो भी संसाधन हैं और उनके उपयोग कर समग्र परिवार का पालन पोषण सहित सभी कृषि क्रियाएँ कृषि प्रणाली अथवा फार्मिंग सिस्टम कहलाता हैं।

कृषि प्रणाली प्रबन्धन

कृषि क्रियाओं का समग्र रूप से देखभाल एवं सद्उपयोग करना कृषि प्रणाली प्रबंधन कहलाता है। इसमें एक तरफ जो भी इनपुट प्रयोग सामग्री उपलब्ध होती हैं वह खेत एवं घरेलू क्रिया कलापों के माध्यम से रूपान्तरित होकर उत्पाद में बदल जाती हैं।

चित्र 1: कृषि प्रणाली परिप्रेक्ष में प्रयोग सामग्री, कृषक परिवार एवं उत्पाद के बीच संबन्ध

वर्तमान कृषि परिदृ□य

जनसंख्या में अत्यधिक वृद्वि के कारण उत्पादन एवम खपत के बीच असंतुलन उत्पन्न हो गया है जिससे भोजन एवम चारा की मॉग प्रति दिन बढ़ती जा रही है जबकि दूसरी तरफ जमीन पानी, श्रम और जोत सिकुड़ रहा है। कृषि संसाधनो के अन्तर्गत मृदा में पोंषक तत्वों का ह्रास होता जा रहा है और भूजल का स्तर नीचे गिरता चला जा रहा है। जलवायु परिवर्तन की वजह से पर्यावरण गुणवत्ता पर भी अब सवाल उठने लगे हैं। नये–नये उन्नत प्रौद्योगिकी के हस्तान्तरण की रफ्तार भी धीमी होती जा रही है। इन सभी कारकों की वहज से कृषि उत्पादकता में अब ठहराव आ गया है।

एकीकृत कृषि प्रणाली के मुख्य उददे□य

1. अजीविका सुरक्षा

एकीकृत कृषि प्रणाली का सबसे मुख्य उददेश्य है कि किसान के परिवार की सभी जरूरतें उस मॉड़ल के द्वारा ही पूरी हो जिससे बाजार पर किसान की निर्भरता को कम से कम किया जा सके इससे हम किसान के सात

सदस्यों के परिवार के हिसाब से अनाज, दाल, तेल, शक्कर, दूध, फल, सब्जी, मॉस एवं अण्डा आदि की वर्ष भर कितनी जरूरत है और उसको उगाने के लिए कितनी जमीन की आवश्यकता होती है इन सभी चीजो का विशेष ध्यान रखते है।

2. पोशाहार सुरक्षा

इस कृषि मॉड़ल में हमारा यह भी उददेश्य होता है कि किसान एवं किसान के परिवार की खनिज तत्वों एवं विटामिन से भरपूर भोज्य प्रदार्थ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो, जिससे उसके परिवार का स्वास्थ ठीक रहे।

3. आय में वृद्वि

एकीकृत कृषि प्रणाली का यह भी उददेश्य है कि किसान की आय में जो भी किसान की जोत है उस जोत के द्वारा विभिन्न इन्टर प्राइजेज को शामिल करके अधिकतम् लाभ लिया जा सके।

4. गरीबी उन्मूलन

हमारे किसान की आर्थिक दशा काफी खराब है किसान कर्ज के बोझ तले दबता चला जा रहा है। एकीकृत कृषि प्रणाली के द्वारा किसान के पास जो भी साधन है उन साधनो का भरपूर उपयोग करके किसान के आर्थिक दशा को सुधारा जा सकता है एकीकृत कृषि प्रणाली का यह भी उददेश्य है।

5. रोजगार सृजन

ग्रामीण भारत की सबसे बड़ी समस्या रोजगार की है आज भी भारत की 70 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर है। उसके सामने रोजगार का अभाव है। लेकिन एकीकृत कृषि प्रणाली को अपनाकर किसान भाई स्वरोजगार के अवसर पैदा कर सकते है। और अपने परिवार के सदस्यो के अलावा दूसरे किसान भाई को भी रोजगार दे सकते है। एकीकृत कृषि प्रणाली का यह भी एक उददेश्य है।

6. भूमि एवम जल संसाधनो के विवेकपूर्ण उपयोग

एकीकृत कृषि प्रणाली का यह भी एक उददेश्य है कि जो भी हमारी जोत है उस जोत का विवेकपूर्ण उपयोग किया जाय। विवेकपूर्ण उपयोग से मतलब यह है कि किसान भाई किस इन्टर प्राइजेज में कितनी भूमि का उपयोग करे कि उससे अधिकतम उत्पादन लिया जा सके उसी प्रकार जल संसाधनो का भी विवेकपूर्ण उपयोग करना है। उपलब्ध जल का बहुउपयोग सुनिश्चित करना हैं ताकि एक–एक बूंद जल का समुचित उपयोग करके अधिक पैदावार प्राप्त की जा सके।

7. सतत् कृषि विकास

कृषि का विकास एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है इसमें समय–समय पर सुधार की आवश्यकता पड़ती रहती है और सुधार का क्रम निरन्तर चलता रहता है। एकीकृत कृषि प्रणाली के द्वारा जो भी नये अनुसंधान इस

सन्दर्भ में होती रहेगी उनको समय–समय पर इसमे शामिल करते रहना और नयी समस्याओं का समाधान करना भी एक उददेश्य है।

8. पर्यावरण सुधार

एकीकृत कृषि प्रणाली के द्वारा पर्यावरण को काफी हद तक सुधारा जा सकता है। इससे पर्यावरण को साफ सुथरा रखा जा सकता है।

एक अच्छा कृषि प्रणाली माँड़ल

एक अच्छा कृषि प्रणाली माँड़ल वह है जिससे किसान अपने जोत के अनुसार विभिंन्न इन्टरप्राइजेज को शामिल करके तथा संसाधनो एवम समय का भरपूर उपयोग करके अधिक कृषि उत्पाद प्राप्त कर सकता है। साथ ही फसल उत्पाद को बाजार में बेच करके अधिक आय प्राप्त कर सके। प्रक्षेत्र अपशिष्ट एवम फसल उत्पाद अवशेषों के पुनः चक्रण द्वारा टिकाऊ फसलोत्पादन किया जा सकता है। एवम पर्यावरण को साफ भी रखा जा सकता है। पूरे वर्ष स्वरोजगार के अवसर की प्राप्ति भी कर सकते है। एवम् वर्ष भर की घरेलू आवश्यकता की भी पूर्ति की जा सकती है। कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम पर विकसित समन्वित कृषि प्रणाली माँड़ल से प्राप्त जानकारी एंव अनुभवो को ध्यान मे रखते हुये क्षेत्र के कृषकों हेतु कृषि जोत आकार के उपयोग हेतु कृषि माँड़ल का लेख मे संक्षेप मे वर्णन किया गया है।

1.5 हेक्टेयर माँड़ल (प्रारूप 1)

इसके अन्तरगत फसल+पशुपालन (2 भैस + 1 गॉय) + बागवानी (फल एवं सब्जी) + मछली पालन + मधुमख्खी पालन+ मशरूम को सम्मिलित करके यदि वैज्ञानिक विधि सें कृषि क्रियाओं को किया जाय तो इस

सारणी–1. विभिन्न कृशि पद्वति प्रारूप की कुल आंवटित क्षेत्रफल, कुल आय एवम शुद्व आय का विवरण

क्रम संख्या	फार्म इकाई	प्रारूप 1 1.5 हेक्टेयर माँडल			प्रारूप 2 1.0 हेक्टेयर माँडल			प्रारूप 3 0.4 हेक्टेयर माँडल		
		आंवटित क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	कुल आय (रूपये / वर्ष)	शुद्व आय (रूपये / वर्ष)	आंवटित क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	कुल आय (रूपये / वर्ष)	शुद्व आय (रूपये / वर्ष)	आंवटित क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	कुल आय (रूपये / वर्ष)	शुद्व आय (रूपये / वर्ष)
1	फसल	1.00	243154	150183	0.72	170200	105128	0.34	77160	47658
2	पशु पालन + वर्मी कम्पोस्ट	0.08 + 0.01	284040	162465	0.06 + 0.01	189360	108310	0.02 + 0.01	94680	54155
3	वागवानी	0.23	85454	35934	0.18	57272	21560	–	–	–
4	मछली पालन	0.15	20000	14707	–	–	–	–	–	–
5	मधुमक्खी पालन	0.01	42000	26000	0.01	42000	26000	0.01	42000	26000
6	मशरुम	0.02	60000	40000	0.02	60000	40000	0.02	60000	40000
	कुल योग	1.50	734648	429289	1.00	518832	300998	0.4	273480	167813

मॉड़ल के द्वारा शुद्व लाभ प्रतिवर्ष फसल से 150183 रूपये, पशुपालन + वर्मीकम्पोस्ट से 162465 रूपये बांगवानी से 35934 रूपये मछली पालन से 14707 रूपये, मधुमख्खी पालन से 26000 रूपये एवं मशरूम से 40,000 रूपये प्राप्त किया जा सकता है। यदि हम सभी इन्टर प्राइजेज की कुल आय देखे तो हमें प्रतिवर्ष 734648 रूपये की प्राप्ति होती हैं यदि हम इसमें से कुल लागत रूपये 305359 को घटा दे तो हमें शुद्व लाभ रूपये 429289 की प्राप्ति होती है। यदि इसे हम प्रति महीने के अनुसार देखे तो हमें 35774 रूपये की प्राप्ति होती है। जिसको की सारणी –1 एवम चित्र 2 में दिखाया गया है। यह मॉडल सिंचित छोटे किसानों के लिए अधिक उपयुक्त है।

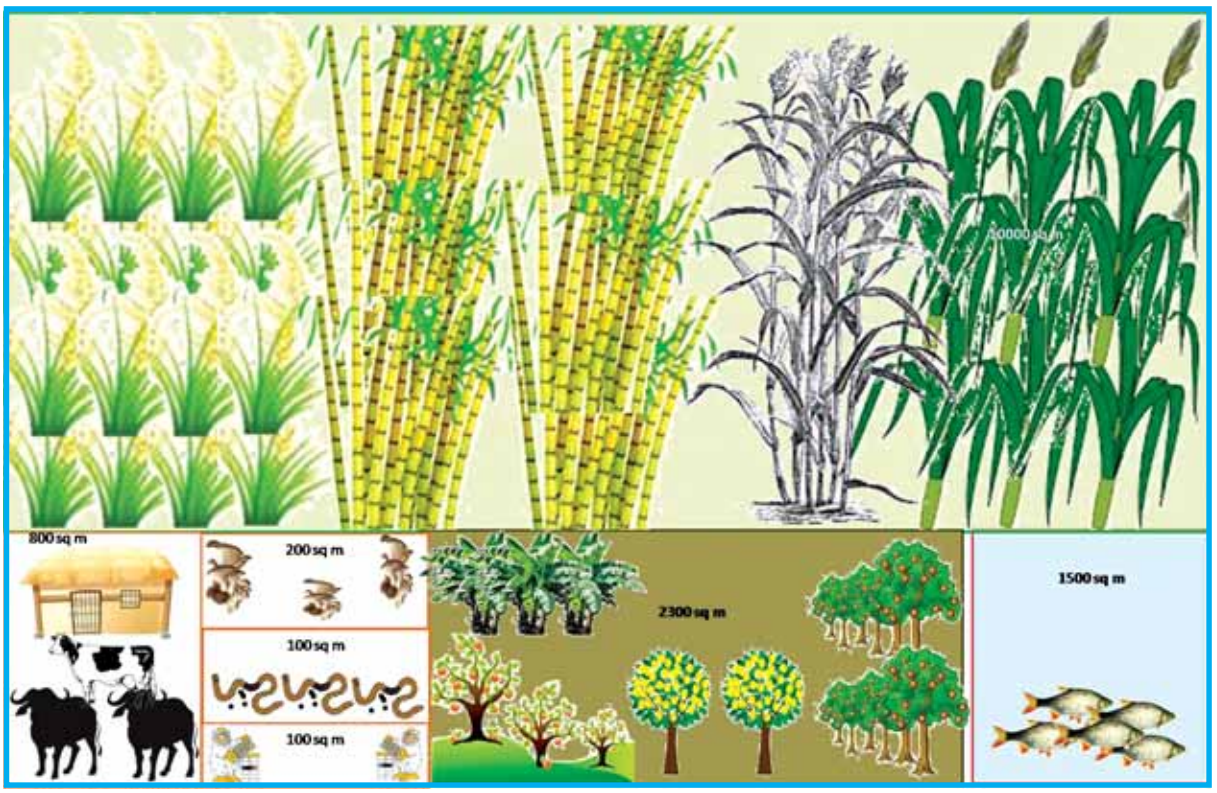

चित्र 2: कृषि प्रणाली परिप्रेक्ष में 1.5 हेक्टेयर का चित्रात्मक मॉड़ल

1.0 हेक्टेयर मॉड़ल (प्रारूप 2)

इस मॉड़ल के द्वारा यदि 1.0 हेक्टेयर जमीन पर किसान फसल + पशुपालन (1 भैस +1 गॉय) + बागवानी (फल एवं सब्जी) + मधुमख्खी पालन + मशरूम की खेती करता है तो उसे प्रतिवर्ष 518832 रूपये की कुल आय की प्राप्ति होती है यदि उसमें से कुल लागत 217834 को घटा दिया जाय तो 300998 रूपये की शुद्व आय की प्राप्ति होती है यदि इसको प्रति महीने के अनुसार देखे तो 25083 रूपये की प्राप्ति होती है। यदि इसमें हम इन्टरप्राइजेज के अनुसार देखे तो हमे फसल से 105128 रूपये, पशु पालन से 108310 रूपये, बागवानी से 21560 रूपये, मधुमख्खी से 26000 रूपये तथा मशरूम से 40,000 रूपये की शुद्व आय की प्राप्ति होती है। जिसको की सारणी–1 एवम चित्र 3 में दिखाया गया है। यह मॉडल पूर्णतया सिंचित छोटे कृषक परिवार विशेषकर उत्तरी भारत के किसानों को अधिक उपयुक्त है।

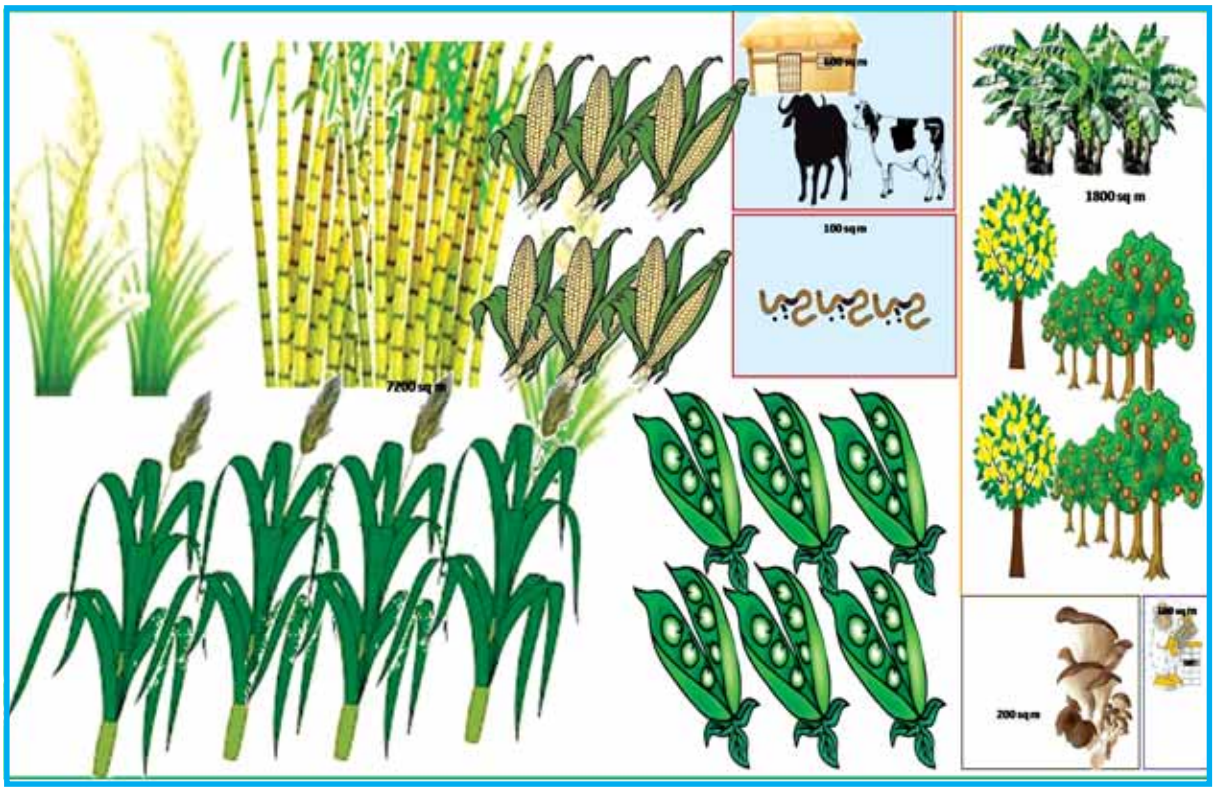

चित्र 3: कृषि प्रणाली परिप्रेक्ष में 1 हेक्टेयर का चित्रात्मक माँड़ल

0.4 हेक्टेयर माँड़ल (प्रारूप 3)

इस माँड़ल के अन्तर्गत यदि वैज्ञानिक विधि से फसल + पशुपालन (1 गॉय) + मधुमख्खी पालन + मशरूम को अपना कर किसान भाई कृषि कार्य करे तो प्रति वर्ष 273840 रूपये की कुल आय की प्राप्ति होती है। यदि इसमें कुल लागत 106027 रूपये को निकाल दिया जाय तो 167813 रूपये की शुद्व आय की प्राप्ति होती है। यदि हम प्रति महीने के अनुसार देखे तो हमें 13984 रूपये की प्राप्ति होती है। जिसको की सारणी–1 में दिखाया गया है। यदि हम इन्टरप्राइजेज के अनुसार देखे तो फसल से 47658 रूपये, पशुपालन से 54155 रूपये, मधुमख्खी पालन से 26000 रूपये और मशरूम से 40,000 रूपये की शुद्व आय की प्राप्ति होती है। यह मॉडल विशेषकर सिंचित क्षेत्र के अंतर्गत सीमांत कृषकों के लिए अधिक उपयुक्त है।

इस लिये किसान भाई इनमें से किसी भी माँड़ल को अपनाकर अपना एवं अपने परिवार की अच्छी तरह भरण पोषण कर सकते है एवं स्वरोजगार के अवसर भी पैदा कर सकते है।

कृषि प्रणाली के अर्न्तगत कृर्षक अपने संसाधनो का बहुउपयोग सुनिश्चित कर सकते है जैसे पशुओ को नहलाने के बाद वही पानी तालाब के उपयोग में आ जाता है। पशुओं के मल मूत्र तालाब में जाने से मछंली के आहार में उपयोग होता है एवं गोबर को पहले गोबर गैस प्लांट में फिर वर्मी कम्पोस्ट यूनिट में उपयोग किया जाता है। मधु मक्खियाँ बांगवानी एवम फसलों के परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है जिससे अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। तालाब में मछलियों का जो आहार प्रयोग करते हैं वह मछलियों के उपयोग के उपरान्त तालाब में सड़ करके अच्छा खाद बन जाती है। जिसका उपयोग फसल उत्पादन में भी किया जा सकता है। कृषि प्रणाली माँड़ल

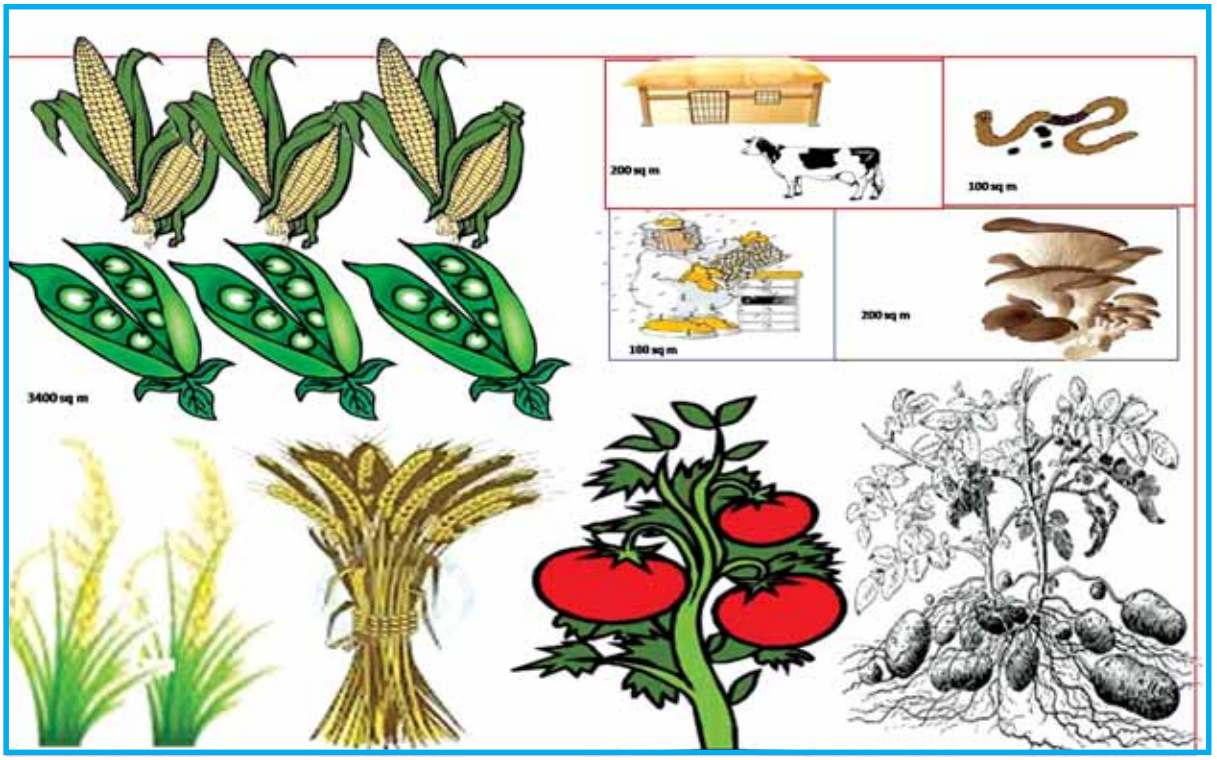

चित्र 4: कृषि प्रणाली परिप्रेक्ष में 0.4 हेक्टेयर का चित्रात्मक माँड़ल

के द्वारा दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी की जा सकती है क्यों कि इसमें ऐसी फसलों का समावेश किया जाता हैं जिसमें किसान को प्रतिदिन कुछ पैसा मिल सके। इसके द्वारा आधिक लाभ भी होता है। ग्रामीण वातावरण को भी सुधारा जा सकता है। इस माँड़ल से बाहरी प्रयोग सामग्री के उपयोग में भी कमी आती है। फसलों की कुल नत्रजन, फासफोरस एवम पोटाश की आवश्यकता का लगभग 36 प्रतिशत माँड़ल के द्वारा पूर्ति हो जाती है। रोजगार कार्य अवधि में बढ़ोत्तरी होती है। सम्पूर्ण वर्ष नियमित आय इस माँड़ल द्वारा प्राप्त होता रहता है। पशुओं के लिये सम्पूर्ण वर्ष नियमित हरा चारा उपलब्ध रहता है। यह माँड़ल किसानो की आजीविका की सुरक्षा प्रदान करता है साथ ही शिक्षा, स्वास्थ और अन्य कई सामाजिक दायित्वों की भी पूर्ति करता है।

कुछ सुझाव:

1. कुछ फल, सब्जी, पेड़ पौधें ऐसे लगाना सुनिश्चित किया जाएँ जो लगातार प्रतिदिन कुछ आय सुनिश्चित करें अथवा घरेलू उपयोग हेतु उत्पाद देते हैं जैसे केला, पपीता, हरी मिर्च, सहजन, कटहल, कड़ी पत्ता इत्यादि।
2. समय का सदुपयोग करने हेतु समय सारणी बना लें जिससे करने में सुविधा होगी।
3. कोई भी उत्पाद व्यर्थ न जाने दें। सभी उत्पाद उपयोग करना सुनिश्चित करें।
4. संसाधनों का बहुउदेशीय उपयोग सुनिश्चित करें।
5. आय–ब्यय का लेखा जोखा रखें।

6. बाजार एवं सामाजिक बातों को ध्यान में रख कर के ही इंटरप्राइजेज का चुनाव करें।

7. स्थिति विशेष को ध्यान में रख करके ही मॉडल बनाये जाएँ क्यों कि इनकी सार्थकता विविधता में ही हैं।

एक अच्छे कृषि प्रणाली मॉडल से सिंचित क्षेत्र में लगभग 3 लाख से अधिक का कुल लाभ प्रति वर्ष प्रति हेक्टेयर से प्राप्त करना संभव है। ऐसा होने पर सीमांत एवं छोटे किसानों कि खुशहाली लायी जा सकती हैं। हाँ इस दिशा में प्रयास करने कि आवश्यकता हैं क्यों कि स्थिति अनुसार ही मॉडल कि सार्थकता है। उपरोक्त सुझावों एवम तकनीकी का ध्यान रखते हुये कृषि प्रणाली प्रबन्धन के द्वारा कृषि प्रणाली मॉड़ल को अपनाने से किसान भाई अधिक कृषि उत्पाद की प्राप्ति करके अपनी आय में बढ़ोत्तरी कर सकते है और खुँशहाल जिन्दगी व्यतीत कर सकते है।

उत्तर प्रदेश के पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों में लघु जोत वाले कृषकों हेतु कृषि प्रणाली मॉडल

जगपाल सिंह, बाबूजी गंगवार एवं दिनेश कुमार पाण्डेय

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ (उ.प्र.)

उत्तर प्रदेश के पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों में रहने वाले 90 प्रतिशत कृषक परिवार लघु कृषक श्रेणी में शामिल हैं। लघु कृषकों की कृषि योग्य जोतभूमि 1.5 हेक्टेयर या उससे भी कम रह गई है। क्षेत्र के लघु एवं सीमांत कृषक सामान्यतया गरीब एवं कम पढ़े लिखे व रूढ़िवादी परम्परा से खेती करते हैं। साठ से अस्सी के दो दशकों की प्रथम हरित क्रांति का लाभ इस श्रेणी के कृषकों कों नहीं पहुच पाया। खेती व फसलोत्पादन से जुड़े कारकों जुताई, बुआई, बीज, उर्वरक, खाद, रासायनिक कीटनाशक व अन्य दवाएं तथा खेतिहर मजदूरी आदि लगभग सभी अवयवों (इनपुट्स) की दरों में असामान्य रूप से बढ़ोत्तरी होने तथा बिचोलियों के उत्पाद बिक्री में बढ़ते प्रभाव की वजह से लघु एवं सीमांत खेती एक अलाभकारी व्यवसाय बन कर रह गया। परिणाम स्वरूप ग्रामों की आबादी का एक बड़ा भाग आसपास के कस्बों व शहरों में पलायन करके मजदूरों के रूप में अपनी रोजी रोटी के जुगाड़ में लगे रहतें हैं और जीवन भर गरीबी का जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य हैं।

ग्रामीण ईलाकों की दुर्दशा में सुधार लाने एवं लघु एवं सीमांत खेती कों लाभकारी व्यवसाय बनाकर कृषक परिवार की रोजी रोटी कों सुनिश्चित करने की दिशा में भारत सरकार के प्रतिष्ठान "भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद", नई दिल्ली के तत्वाधान में कार्यरत संस्था "कृषि प्रणाली अनुसंधान निदेशालय," मोदीपुरम, मेरठ, उत्तरप्रदेश, द्वारा समस्त भारत में स्थानीय जलवायु एवं मृदा तथा छोटे व मझोले आकार की जोत वाले कृषकों के संशाधनों व परिवार की वार्षिक खाद्यान्न व चारे आदि की मूलभूत आवश्यकताओं कों ध्यान में रखते हुए देश के सभी कृषि विश्वविद्यालयों में स्थित 31 मुख्य केन्द्रों पर समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल विकसित किए जा रहें हैं।

इसी श्रंखला की शुरुवाती कड़ी में कृषि प्रणाली अनुसंधान निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ, उत्तरप्रदेश के वैज्ञानिको ने वर्ष 2004–05 से वर्ष 2009–10 की समयावधि में उत्तर प्रदेश के पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों में रहने वाले लघु एवं सीमांत कृषकों हेतु 1.5 हेक्टेयर सिंचित भूमि पर एक समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल विकसित किया है। समन्वित कृषि प्रणाली प्रक्रिया का मुख्य अभिप्राय है कि कृषक कि फार्म प्रछेत्र पर उपलब्ध संसाधनों, आर्थिक स्थिति एवं परिवार की मूलभूत खाद्यान्न एवं चारे आदि की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए तथा बहुतायत में अपनाई जा रही प्रचलित कृषि पद्धति में उपलब्ध तकनीकी ज्ञान एवं कम लागत से अधिक लाभ देने वाले मितव्ययी व्यवसायों का समन्वयन कर प्रति इकाई जोत भूमि व प्रति इकाई समय में अधिक से अधिक उत्पादन व लाभ प्राप्त करना है। समन्वित कृषि प्रणाली प्रक्रिया का दूसरा महत्व पूर्ण उद्देश्य संसाधनों का अधिकतम संरक्षण, फार्म उत्पाद का रिसाइक्लिंग व पर्यावरण सुधार भी होता है। कृषि प्रणाली मॉडल में विभिन्न इन्टर प्राइजेज का चुनाव करते

समय सभी आधारभूत सिद्धांतों एवं सावधानिओं पर ध्यान दिया गया। जिस क्षेत्र के लिये इन्टरप्राइजेज का चुनाव करते है क्या वहॉ के किसान उस इन्टरप्राइेज को अपनायेगा या नहीं यह सर्वे के द्वारा पहले पता लगा लेना चाहिये। इन्टर प्राइजेज के चुनाव करते समय किसान की सामाजिक एवं आर्थिक व खान–पान की आदतों तथा परिवार की अन्य जरूरतों का विशेष ध्यान रखना होता है। साथ साथ ही फार्म पर उपलब्ध संसाधनों तथा कृषि व्यवसाय से संबन्धित अन्य व्यवसायों जैसे बाजार एवं सरकारी संस्थाओं का कृषकों से जुड़ाव व दूरी आदि कारक भी इन्टरप्राइजेज के चुनाव पर प्रभाव डालते हैं। उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम के वैज्ञानिकों एवं तकनीकी स्टाफ की एक सर्वे टीम द्वारा पश्चिमी उत्तरप्रदेश खेती क्षेत्रों के समतुल्य (रिप्रेजेंटेटिव) खेती वाले जनपद मेरठ का सघन सर्वे किया गया व सर्वे में प्राप्त जानकारी को ध्यान में रखते हुए कृषि मॉडल तथा उसमें शामिल किए जाने वाले विभिन्न कृषि अव्ययों का चयन किया। कृषि मॉडल की प्लानिंग एवं उसे कार्यरूप देने हेतु संस्थान के विभिन्न विषय विशेषज्ञों व वैज्ञानिकों की एक टीम बनाई गई। विषय विशेषज्ञों व वैज्ञानिकों द्वारा किए गए प्रयास एवं विकसित कृषि मॉडल का विस्तृत लेखा जोखा लेख में क्रमबद्ध किया गया है ।

प्रचिलित पारंपरिक कृशि प्रणाली का वर्तमान परिदृस्य

जनपद मेरठ का विस्तृत सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि क्षेत्र की मुख्य फसलों व दुग्ध उत्पादन की अधिकतम संभव उत्पादन से वर्तमान में प्राप्त औसत उत्पादन में बहुत ही ज्यादा अंतर है। इस अंतर को नीचे दी गई सारिणी–1 में स्पष्ट किया गया है।

सारणी–1. कृशक औसत उपज एवं अधिकतम संभव उपज में पाया गया अंतर

मुख्य फार्म उत्पाद	औसत उपज	संभव उपज	अंतर (%)
गन्ना (पौधा)	540 कु०/हे०	1100 कु०/हे०	103.0
गन्ना (पेड़ी)	740 कु०/हे०	1300 कु०/हे०	75.70
गेहूँ	46 कु०/हे०	65 कु०/हे०	41.30
धान	42	65 कु०/हे०	54.80
दूध (उन्नत गाय)	7.36 लीटर/पशु/दिन दूध	20.0 लीटर/पशु /दिन	171.70
(उन्नत भैंस)	5.22 लीटर/पशु/दिन दूध	12.0 लीटर/पशु /दिन दूध	129.90

सारिणी में शामिल उत्पादों के अतिरिक्त अन्य व्यवसाय से प्राप्त उत्पादों जिनमें बागवानी, मछलीपालन व मधुमक्खिपालन आदि शामिल हैं, में भी महत्वपूर्ण अंतर पाया गया। कृषकों से उत्पादन में उपरोक्त अंतर के संभावित कारणों के बारे में विस्तार से जानकारी ली गई तथा विभिन्न एंटरप्राइजिज में जिम्मेदार कारकों को संछिप्त में नीचे उल्लेखित किया गया है ताकि उपज को सबसे अधिक प्रभावित करने वाले कारकों को ध्यान में रखकर मॉडल में उपयुक्त सुधारों (इंटरवेनसन) का चुनाव किया जा सके।

अधिकतम संभव उपज एवं औसत उपज में अंतर के लिए जिम्मेदार कारक

फसलें

देर से बुआई, आवश्यकता से अधिक बीज एवं असंतुलित उर्वरकों का इस्तेमाल, उन्नत प्रजाति एवं बीज की जानकारी का अभाव, आवश्यकता के अनुसार उपलब्धता की कमी, स्वंम के बीज का बीजोपचार करके नहीं बोना, बीज व उर्वरकों को सही विधि से इस्तेमाल न करना, पशुओं के गोबर का सही से कंपोस्टिंग न करना, उर्वरकों का असंतुलित प्रयोग, सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग गिने चुने किसानों द्वारा ही करना, पौध संरक्षण की उचित जानकारी का अभाव, उत्पाद को बाजार में भेजने से पहले गुणवत्ता में सुधार पर ध्यान न देना आदि।

दुग्ध उत्पादन

स्थानीय निम्न उत्पादन वाली प्रजातियों एवं अधिक संख्या में जानवरों का पालन, हरे चारे की कमी व वर्ष के कुछ ही महीनों में उपलब्धता, दलहनी चारों की कमी, चारों की उन्नत प्रजाति एवं बीज की जानकारी का अभाव, आवश्यकता के अनुसार उपलब्धता की कमी, संतुलित आहार न मिलना, पशुओं में बांझपन, खुरपका, मुंहपका एवं पेट के कीड़े आदि अन्य बीमारियों का समय पर सही इलाज की कमी, पशुओं को ब्रीडिंग हेतु उन्नत वीर्य की कमी या पशु डॉक्टर को बिना संपर्क किये ही स्थानीय जानवरों से हरा करना, क्रोसिंग, साल्ट व मिनीरल मिक्सचर का बहुत कम पशु पालकों द्वारा इस्तेमाल।

बागवानी

आम

प्रमाणित प्रजाति की पौध न मिलना, प्रत्येक वर्ष फल न आना, जीवाणु झुलसा, पाउड्री मिल्ड़िव, गुझिया, ईयरकोकिल, ब्लैकटिप, बंचीटोप आदि बीमारियाँ, जड़ों व तने की सूँडी, होप्पर (फड़का), मिली बग आदि कीट व तेज हवाएँ/आँधी/तूफान आम की फसल को नुकसान पहुंचाते हैं। कृषक अपने बागों को ठेके पर उठाते हैं जो सिर्फ पैदावार व आमदनी में ध्यान देते हैं और पौधों की देखभाल पोषण व सुरक्षा से उनका कोई लेना देना नहीं होता ।

सब्जियाँ

प्रमाणित बीजों का न मिलना, बीजोपचार न करना, संतुलित खाद व उर्वरकों का इस्तेमाल न करना, अपर्याप्त पौध सरंक्षण तथा बाजार पर किसान का कोई नियंत्रण न होना।

फूल उत्पादन

सबसे अधिक बिकने वाली मुख्य फूल फसल गेंदा के प्रमाणित बीजों का न मिलना, संतुलित खाद व उर्वरकों का इस्तेमाल न करना, अपर्याप्त पौध सरंक्षण तथा नियमित बाजार का न होना।

मधुमक्खी पालन

मधुमक्खी पालन के तकनीकी ज्ञान की कमी, वर्षभर फूलों वाली फसलों की कमी, उत्तम किस्म की मधुमक्खी कौलोनीज का अभाव तथा हानिकारक बीमारियों व कीटों का प्रकोप। पिछले कुछ वर्षों में आठ पैरों (अष्टपादी) वाले वैरावों नामक कीट ने शहद व्यापार को लगभग चौपट कर रखा है।

मुर्गीपालन

मुर्गीपालन के तकनीकी ज्ञान की कमी, रखरखाव हेतु उत्तम क्वालिटी के शैड (घरों) की कमी, पूरे समय विधुत आपूर्ति का न होना तथा मुर्गियों में बड़े पैमाने पर तेजी से फैलने वाली बीमारियाँ।

मछलीपालन

सामाजिक मान्यता की कमी, छोटे छोटे तालाब, तकनीकी ज्ञान की कमी, पोषक फीड का इस्तेमाल न करना, तालाब मे खरपतवारों का नियंत्रण न करना, तालाब पानी की अम्लीयता व झारीयता को ध्यान न देना तथा विपरीत परिस्थतियों में ऑक्सीजन की कमी।

उपरोक्त बातों के अतिरिक्त यह भी निष्कर्ष निकलता है की किसान गिनी चुनी तथा अधिक लाभ देने वाली फसलों को ही उगातें हैं और बाकी सभी घर की खाने की वस्तुओं के लिए साल भर स्थानीय बाजार पर निर्भर रहते हैं। यही नहीं बल्कि साल के 4–5 महीने (अक्टूबर–जनवरी) हरा चारा भी उपलब्ध नहीं होता। दुग्धोत्पादन हेतु पाले गए पशु आवश्यकता से अधिक, प्रतिदिन 3–4 किलोग्राम औसत दूध वाले तथा ज्यादातर समय सूखे भुसों, कड़वी व अदलहनी हरे चारों पर निर्भर रहते हैं। पशूओं की गर्भादान प्रक्रिया एवं बीमारियों पर अक्सर कम ध्यान दिया जाता है। फलोत्पादन अधिकतर मझोले या बड़े किसानों के फार्म पर किया जाता है तथा ठेकाप्रथा के कारण उनकी देखभाल निम्न से निम्नतर स्तर की है। मुख्यतया आम व अमरूद के एकल फलबाग जिनमें बिना किसी वैज्ञानिक ज्ञान के अंतफसलें (इंटरक्रॉप) ली जाती हैं। सालभर फूलवाली फसलों के अभाव व कीट व बीमारियों के अधिक प्रकोप के कारण मधुमक्खी पालन या तो बागवानी करने वाले कृषकों या व्यापारिक रूप से खेती करने वाले कृषकों तक ही सीमित है। इसी प्रकार मछली पालन भी कुछ बड़े कृषकों व व्यापारिक लोगों द्वारा अपनाया गया व्यवसाय रहा है।

कृशि प्रणाली मॉडल की रूपरेखा

पश्चिमी उत्तरप्रदेश की जलवायु, मृदा एवं क्षेत्र के लघु जोत कृषकों के संसाधन एवं आवश्यकताओं तथा सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी को ध्यान में रखते हुए संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा 1.5 हेक्टेयर भूमि पर एक समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल विकसित किया गया। सम्पूर्ण प्रक्षेत्र भूमि (1.5 हेक्टेयर) में से 0.7 हे0 भूमि खाद्यान्न (अनाज, दलहन, तिलहन आदि) फसलों, 0.34 हे0 भूमि चारे वाली फसलों, 0.23 हे0 भूमि बागवानी (फल, फूल व सब्जियाँ) फसलों, 0.10 हे0 भूमि मछली तालाब, 0.01 हे0 भूमि वर्मी कम्पोस्ट तथा बाकी बची जमीन अन्य संबन्धित व्यवसायों जैसे मधुमक्खी पालन, पशुपालन, बकरी पालन, मशरूम व बायो गैस आदि के लिए प्रयोग में लाई गई। कृषि

प्रणाली अनुसंधान निदेशालय, मोदीपुरम द्वारा विकसित समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल के 2004–2010 की समयावधि के औसत आंकड़ों के निष्कर्ष व अनुसंधान उपलब्धियों के आधार पर कृषि प्रणाली मॉडल का कृषकों की आय एवं भरण पोषण तथा पर्यावरण पर प्रभाव का ब्यौरा लेख में किया गया है।

प्रचिलित फसल एवं खेती पद्धति में विविधिकरण एवं सघनीकरण, समन्वित कृषि प्रणाली पद्धति की महत्वपूर्ण एवं प्रभावी प्रक्रियाएँ हैं जिन्हें वैज्ञानिक एवं प्रयोगात्मक तथ्यों के आधार पर अपनाकर न केवल कृषकों की आय एवं भरण पोषण को सुनिश्चित किया गया बल्कि दैनिक भोजन एवं चारे की पोषकता में भी गुणात्मक सुधार संभव हुआ है। विविधिकरण एवं सघनीकरण के फलस्वरूप फार्म प्रक्षेत्र पर वर्ष भर अनाज, दालें, तिलहन, सब्जिया, फल, दूध, मछली, हरा चारा, ईधन आदि न केवल भरपूर मात्रा में उपलब्ध रही बल्कि आवश्यकता से अधिक उत्पादन को बाजार में बेचकर अतिरिक्त आमदनी संभव हुई। समन्वित कृषि प्रणाली पद्धति मॉडल में समिम्लित विभिन्न व्यवसायों का विस्तृत विवरण नीचे दिया जा रहा है।

फसल उत्पादन

कृषि मॉडल की रूपरेखा बनाते समय यह ध्यान में रखा गया कि 7 सदस्यों के किसान के परिवार की जरूरतो का सभी फार्म उत्पाद अपने ही फार्म से पैदा किया जाय तथा किसान को बाजार पर निर्भर नहीं रहना पडे। 1.5 हेक्टेयर के कृषि माडल में से 1.04 हेक्टेयर क्षेत्रफल फसल उत्पादन के लिये निर्धारित किया गया था। प्रक्षेत्र पर ली गई फसलों एवं फसल प्रणालियों मे से 0.4 हेक्टेयर झेत्र गन्ना आधारित फसल चक्र के अन्तर्गत रखा गया। बाकी बचे क्षेत्र को 1600 वर्ग मीटर के चार बराबर भागो में बाटकर अलग अलग चार फसल चक्र इस तरह से बनाए गए कि कृषक परिवार की अनाज, दालें, तिलहन व चारे आदि की सभी जरूरतों को न सिर्फ पूरा ही किया जाय परन्तु अतिरिक्त उत्पाद को बाजार में बेचकर परिवार की अन्य जरूरतें भी पूरी की जा सकें। इसके लिए फसल चक्रों में गन्ना व अन्य मुख्य फसलों के साथ साथ गेंदा व आलू (चित्र–1) जैसी नकदी बागवानी फसलों को भी शामिल किया गया जिससे किसानो को साल भर कुछ न कुछ अतिरिक्त आय होती रहे।

फस्लोत्पादन इकाई का एक दृश्य

गेंदा फूल–सबसे अधिक आमदनी

आलू–फसल प्रणाली का महत्वपूर्ण घटक

चित्र–1 : फसलोत्पादन इकाई में 1.04 हे० भूमि का खाद्यान्न, चारे एवं नकदी फसलों में अनुपातिक वितरण

कृषि मॉडल 2004–2010 की अवधि में शामिल विभिन्न फसलों एवं फसल चक्रों का विवरण तथा उनसे होने वाली उत्पादन व लाभ का लेखा जोखा नीचे दी सारिणी–2 में दिया गया है।

सारणी–2. वर्श 2004–05 से 2009–10 की अवधि में मॉडल के फस्लोत्पादन अन्तर्गत अपनाए गए फसल चक्रों तथा उनसे प्राप्त आय व्यय का विवरण

क्रमांक	प्रयोग अवधि में अपनाए गए फसल चक्र	गन्ना समतुल्य उपज (टन/हे०/वर्श)	भुद्ध आय (रु०/हे०/वर्श)	लाभ : लागत अनुपात
1	बसंतकालीन गन्ना+प्याज–गन्ना पेडी (2 साल का फसलचक्र)	95.94	63887	1.53
2	ग्रीष्म गन्ना+लोबिया (हरी खाद)–गन्ना पेडी–गेहूं (2 साल का फसलचक्र)	86.98	53818	1.28
3	मक्का–चना+सरसों–मक्का+लोबिया (हरा चारा) (1 साल का फसलचक्र)	64.03	35649	1.02
4	ज्वार–उर्द–गेहूं (1 साल का फसलचक्र)	71.67	42443	1.66
5	धान–आलू–गेहूं–ढेंचा (हरी खाद) (1 साल का फसलचक्र)	131.01	47312	0.56
6	ज्वार+ग्वार–जई–मक्का+लोबिया (हरा चारा) (1 साल का फसलचक्र)	50.39	32762	1.44
7	ग्रीष्म ज्वार–खरीफ ज्वार–सरसों (1 साल का फसलचक्र)	38.20	16150	0.62
8	धान–बरसीम+सरसों–बाजरा (1 साल का फसलचक्र)	100.62	70162	1.73
9	बासमती धान–आलू–गेंदा (1 साल का फसलचक्र)	164.54	150812	1.57
10	ग्रीष्म ज्वार–हाइब्रिड धान–बरसीम (1 साल का फसलचक्र)	146.42	166637	3.14
11	मक्का+अरहर–गेहूं (1 साल का फसलचक्र)	82.23	123343	1.94

सारणी–2 में दिये आंकडों से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि क्रमांक 8 से 11 पर दिये फसल चक्र क्षेत्र के प्रचलित गन्ना आधारित फसल चक्रों से ज्यादा उपज व लाभकारी फसल चक्र साबित हुए। अधिक जानवर पालने वाले कृषक क्रमांक 8 व 10 पर दिये फसल चक्रों को अपना सकते हैं जबकि शहरों के आसपास वाले कृषक क्रमांक 9 वाला फसल चक्र अपनाकर अधिक लाभ ले सकते हैं। क्रमांक 11 वाला फसल चक्र यद्यपि गन्ना आधारित फसल चक्रों से कम उपज देता है परंतु कृषकों कि खाद्यान्न, दलहन व चारे कि मांग व अधिक शुद्ध लाभ को देखते हुए अपनाने योग्य फसल चक्र है।

दुग्ध उत्पादन

कृषि प्रणाली मॉडल में फस्लोत्पादन हेतु जो 1.04 हेक्टेयर क्षेत्र रखा गया है उसमें परिवार की खाद्यान्न फसलों के साथ–साथ विभिन्न चारा फसलों का अपनाई गई फसल प्रणालीयों में इस तरह समन्वयन किया गया कि खाद्यान्न फसलों कि आपूर्ति के साथ ही पशु यूनिट के 2 भैस, एक गॉय, एक भैसा एवम उनके बछ्डे बछड़ियों हेतु सभी आवश्यक हरे व सूखे चारे कि पूर्ति भी संभव हो सके तथा चारा उत्पादन हेतु अलग से भू क्षेत्र की जरूरत भी न पड़े। मॉडल में यह भी ध्यान रखा गया है कि किसान को पूरे साल 15 से लेकर 20 लीटर दूध प्रति दिन मिलता रहे जिससे किसान की पूरे साल अपनी जरूरतो को पूरा करने के लिये आय होती रहे। दूध के साथ ही पशु एकाई से प्राप्त अन्य बाई प्रोडेक्ट अवशेष बेकार न चले जाय और उनका समुचित उपयोग हो

इसीलिये उसके गोबर को फसल अवशेष आदि के साथ मिलाकर वर्मी कम्पोस्ट एवं पशुओं के पेशाब एवम जानवरों के नहलाने के उपरान्त बेकार जल को मछली तालाब में मछली का भोजन के रूप में एवम जानवरो के नीचे बिछावन का उपयोग कम्पोस्ट यूनिट में किया जाता है। पशु पालन यूनिट हेतु वर्षभर फार्म पर उपलब्ध विभिन्न प्रकार का हरा एवं सूखा चारा का विवरण नीचे तालिका में दिया जा रहा है। सारणी–3 में दिये आंकड़ों से पता चलता है कि जानवरों कि यूनिट कि समस्त हरे एवं सूखे चारे कि मांग पूर्ति (456 कुंटल हरा एवं 140 कुंटल सूखा चारा) फार्म उपज से ही संभव हो जाती है। इस प्रकार चारा उत्पादन हेतु अलग से जमीन कि आवश्यकता नहीं होती।

सारणी–3. समन्वित कृशि प्रणाली द्वारा फार्म प्रक्षेत्र पर साल भर हरे व सूखे चारे की उपलब्धता

फसल	(उपलब्धता समय)	फार्म प्रक्षेत्र पर हरे चारे का औसत वार्शिक उत्पादन (कुन्तल)	सूखा चारा की औसत वार्शिक उत्पादन (कुन्तल)
गन्ना (गन्ने का अंगोला)	अक्तूबर से अप्रैल	–	89
गेहूं एवं अन्य फसलों का भूसा	साल भर	–	32
मक्का की कड़वी	अगस्त से सितंबर	–	5
मक्का + लोबिया	मई से जून	44	–
बाजरा	जून से जुलाई	50	–
ज्वार	जुलाई से नवंबर	241	–
बरसीम	दिसम्बर से अप्रैल	72	–
जई	दिसम्बर से मार्च	53	20
नेपियर घास एवं फार्म बार्डर पर उगाये चारा पेड़ व झाड़ियाँ	वर्षभर		60 –
कुल		**520**	**146**

दुग्ध उत्पादन इकाई का सालाना उत्पादन एवं भुध लाभ

कृषि मॉडल की पशु इकाई से वर्ष 2005–2010 की अवधि में दुग्ध उत्पादन तथा आर्थिक लेखा जोखा नीचे दी गई सारणी–4 मे दिया जा रहा है।

सारणी में दिये आंकड़े स्पष्ट करते हैं की पशुपालन खेती प्रणाली का एक अति आवश्यक एवं लाभकारी व्यवसाय होने के साथ साथ कृषक को वर्ष भर लगातार कुछ न कुछ आमदनी का एक महत्वपूर्ण साधन है जिसे पशुओं की उचित देख रेख, हरे चारों की वर्ष भर उपलब्धता (चित्र–2) एवं मिनिरल मिक्सचर आदि के दैनिक प्रयोग द्वारा लाभकारी व्यवसाय में परिवर्तित किया जा सका।

सारणी–4. पशु पालन इकाई से वार्शिक उत्पादन, कुल एवं शुद्ध लाभ

वर्श	वार्शिक दुग्ध उत्पादन (लीटर)	कुल आमदनी * (रुपया/वर्श)	शुद्ध लाभ (रुपया/वर्श)
2005–06	5748	51850	22450
2006–07	5667	116330	40700
2007–08	2083	111280	32290
2008–09	11315**	291000	192670
2009–10	5792	248970	147020
औसत	**6121**	**163880**	**87020**

*डेरी यूनिट से प्राप्त दूध एवं अन्य सभी उत्पादों (गोबर, मूत्र, वर्मीकम्पोस्ट, गोबर खाद व अतिरिक्त जानवरों की बिक्री आदि) की कीमत के आधार पर

**वर्ष 2008–09 में दुधारू पशुओ की संख्या लगभग दोगुनी थी जिसे बाद में पशु बेचकर कम किया गया

पशु इकाई (मुर्राह भैंस व एच०एफ० गाय)

अधिक गुणवत्ता वाला चारा (मक्का, लोबिया)

भारदकालीन चारे (बरसीम व जई)

ग्रीश्म व वर्शा कालीन हरे चारे (ज्वार व बाजरा)

चित्र–2 : कृशि मॉडल पर उन्नत पशु प्रजातियां एवं साल भर हरे चारों की उपलब्धता

बागवानी (फल, फूल व सब्जियाँ)

बागवानी फसलों को 0.21 हेक्टेयर क्षेत्र में रोपा गया है। बगीचे के चारों तरफ करोंदा की जीवित बाड़ तैयार की गई है जिससे की बगीचे के अन्दर अवान्छनीय तत्व एवम जानवर आदि प्रवेश न कर सके और किसान को अतिरिक्त आमदनी सालो साल मिलती रहे। बाग के अन्दर 5 मीटर लाईन से लाइन की दूरी एवम 3 मीटर पौधे से पौधे की दूरी पर आम व अमरूद के पौधे लगाये गये है। बागवानी में ध्यान देने योग्य मुख्य बात यह है कि कमजोर या मरे हुए पोधों कि जगह नए पोधों को तुरंत बदल दिया जाय व किसानोप्योगी फलवृक्षों को मिलि जुली अनुपात में पोधारोपन करें ताकि भाँति भाँति के फल प्राप्त करके भोजन कि पोषकता को सुधारा जा सके। आम व अमरूद फल पोधों के बीच के खाली पड़ी भूमि पर पपीता (चित्र–3) एवं सब्जियाँ (टमाटर, बैगन, मिर्च, शिमला मिर्च, गोभी, हरी मटर फली आदि मौसमी सब्जियों), गेंदा फूल व चारे वाली सह–फसलों को उगाया गया।

फल उद्यान में रोपित अमरूद प्रजाति एल० 49

फल उद्यान में रोपित आम प्रजाति आम्रपाली

अमरूद व आम की लाइनों में खाली स्थान पर रोपित पपीता प्रजाति पूसा नन्हा

केला–तालाब बंधो व नीची भूमि हेतु आदर्श फल वृक्ष

चित्र–3 : फल उद्यान में भाामिल मुख्य एवं अंतः फसलीय फल वृक्ष

उपरोक्त सारणी–5 में दिये आंकड़ो से विदित होता है की बागवानी में पौधारोपण के शुरुवाती वर्षों में फलों से कोई आमदनी प्राप्त नहीं होती परन्तु फल पौधों के बीच की जगह को विभिन्न कम ऊंचाई की फसलों जैसे पपीता,

सारणी–5. बागवानी से प्राप्त आय व व्यय का ब्योरा

उत्पादन वर्ष	कुल आमदनी (रुपया)	भुद्ध लाभ (रुपया)	अन्य विवरण
2006–07	15500	3370	प्रथम वर्ष में केवल पपीता से प्राप्त आय
2007–08	22670	13450	दृतीय वर्ष में पपीता + सब्जियों से प्राप्त आय
2008–09	20800	14040	चारे की फसलों से प्राप्त अतिरिक्त आय शामिल नहीं –20.5 टन जई व बरसीम का चारा जानवरों हेतु प्रयोग में लाया गया
2009–10	17400	10260	बरसीम व जई चारा एवं सब्जियां अतिरिक्त
2010–11	46330	39990	विस्तृत विवरण नीचे दी तालिका–6 में दिया गया है

दलहन फसलें, सब्जियाँ, फूल या कम बढ़ने वाले चारे आदि की फसलों को उगाकर उत्पादन खर्च की पूर्ति संभव होती है। बाद के वर्षों में फल वाले वृक्ष उत्पादन शुरू कर देते है तथा फिर नियमित आमदनी तो होती ही है साथ साथ भोजन को अधिक पोषक बनाने हेतु फल एवं सब्जियाँ परिवार को वर्ष भर उपलब्ध रहती हैं। नीचे दी गई सारणी–6 में परियोजना के छटवें साल फल उद्यानों से प्राप्त फल, फूल, सब्जियाँ व चारे आदि से प्राप्त उपज तथा लाभ आदि का ब्योरा दिया गया है जिससे पता चलता है कि फल उद्धयानों की समयावधि बढ़ने के साथ साथ कुल उत्पादन व लाभ भी बढ़ता चला जाता है।

सारणी–6. मॉडल विस्थापना के छटवें वर्श में कुल उत्पादन, आमदनी एवं भुद्ध लाभ में वृद्धि की स्थिति

फल प्रजातियाँ	उत्पादन मात्रा (किलोग्राम)	बाजार भाव/किलो (रु०)	कुल कीमत (रु०)
अमरूद	1540	10	15,400
आम	110	15	1,650
करोंदा	560	20	11,200
नींबू	400	20	8,000
नासपाती	53	10	5,30
बैंगन	325	10	3,250
टमाटर	210	20	4,200
हरी मिर्च	50	20	1,000
बरसीम (चारा)	1100	1	1,100
कुल आय	–	–	**46,330**
भुद्ध लाभ	–	–	**39990**

मछली पालन

विगत कुछ वर्षों में मछली पालन व्यवसाय काफी लाभकारी व्यवसाय के रूप में उभर कर आया है। इसी के फल स्वरूप 0.125 हेक्टेयर क्षेत्रफल में कृषि प्रणाली के यूनिट के रूप में इसको शामिल किया गया है। मछली पालन को लघु एवं सीमांत कृषकों के स्तर पर अधिक लाभ व प्रचलित व्यवसाय बनाने हेतु यह ध्यान रखा गया की उत्पादन खर्च को स्थानीय संसाधनों का अधिक से अधिक इस्तेमाल करके कम से कम रखा जाय। मछली पालन के लिए 50 × 25 × 2.5 मीटर का एक तालाब बनाया गया। जिसके बार्डर पर फल वृक्ष, नींबू, केला, अमरूद व चारा झाड़ी सुबबूल के पौधे लगाये गये। तालाब के अंदर पानी की गहराई 1.5 मीटर रखी गयी। मत्स्य पालन हेतु भारतीय मूल की कार्प मछलियों (रोहू, कतला एवम् नैन) के साथ तीन विदेशी मूल की मछलियाँ जैसे ग्रासकार्प, सिल्वर कार्प एवं कामन कार्प का बीज 10000 प्रति हेक्टेयर के दर से हर साल संचय किया जाता है। मछली के वृद्धि हेतु तालाब में प्राकृतिक भोजन जैसे प्लान्कटोन की उपलब्धता करने के लिए समय–समय पर गोबर की खाद, जानवरों के मल मूत्र एवम रासायनिक उर्वरक एन0 पी0 के0 को तालाब के आकार अनुसार उचित मात्रा में डाला जाता है।ग्रास कार्प मछली हेतु दल्हनी फसलों की पत्तियाँ व घास आदि भी पानी की सतह पर डालते रहते हैं। तालाब पानी को स्वच्छ एवं बीमारियों रहित रखने हेतु समय समय पर बुझा हुआ चूना तथा तालाब की दो या तीन वर्ष में पूर्ण सफाई भी जरूरी होती है। तालाब में अंगुलिका आकार की छोटी मछलियों के पूरक आहार व कृत्रिम भोजन की पूर्ति हेतु चावल की पोलिश को आवश्यकता अनुसार डाला जाता है। जाल चलवाकर तालाब में संचित मछलियों की स्वास्थ व बढ़वार की जांच भी नियमित समय पर की गई। इस विधि को अपनाकर 0.125 हेक्टेयर की यूनिट से 4.5 से 5.0 कुन्तल के बीच मछली का उत्पादन के साथ साथ तालाब बार्डर पर लगाए गए फल वृक्षों एवं चारा झाडियों (चित्र–4) से अतिरिक्त आय प्राप्त किया गया है। मछलीपालन से किसान एक छोटे भूभाग से लगभग 30000 रुपये प्रति वर्ष आय प्राप्त कर सकता है।

मछली तालाब से प्राप्त उत्पादन

तालाब तटबंधो पर रोपी गई चारा प्रजाति सुबबूल झाड़ी

चित्र–4 : मछलीपालन के साथ साथ तालाब तटबंधों का प्रबंधन एवं आर्थिक उपयोग

मधुमक्खी पालन

मधुमक्खी पालन यूनिट में 10 बाक्स से मधुमक्खी पालन शुरू किया गया। मधुमक्खी के बक्सों को जाड़े में फार्म हाऊस के सामने खाली जगह पर रख दिया गया एवम गर्मी के मौसम में बक्सों को बगीचे के अन्दर रख दिया

जाता है जिससे मधुमक्खी को घूप व सर्दी से बचाया जा सके। मधुमक्खी अक्टूबर से लेकर अप्रैल मई तक शहद बनाती है। इस लिये फार्म पर ऐसी फसलों व फल वृक्षों को प्राथमिकता के अनुसार बोया जाता है कि जिससे मधुमक्खी का शहद बनाने हेतु आवश्यक भोजन अर्थात फूलों से प्राप्त होने वाला नेक्टर साल भर मिलता रहे (सारणी–7) और शहद बनता रहे। मधुमक्खी के बक्सों की प्रत्येक सप्ताह में एक बार देखभाल करके साफ सफाई करते रहना चाहिये (चित्र–5) जिससे कीड़ो एवम बिमारियों से बचाया जा सके। 8 से 10 दिन के प्रक्षिक्षण से मधुमक्खी पालन किया जा सकता है। औसतन 15 से 18 किलोग्राम शहद/बॉक्स/वर्ष प्राप्त किया जा सकता है। यह व्यवसाय भी आजकल किसानो के बीच काफी लोकप्रिय होता जा रहा है।

सारणी–7. फार्म पर मौन पालन में अधिक भाहद उत्पादन हेतु फसलों का चुनाव

नेक्टर के स्रोत	जून–अगस्त	सितम्बर–नवम्बर	दिसम्बर–फरवरी	मार्च –मई
फसलें	मक्का	मक्का, अरहर, कटे गन्ने का जड़ भाग	सरसों, सूरजमुखी, कटे गन्ने का जड़ भाग	कटे गन्ने का जड़ भाग, गैंदा
फल	नींबू,	अमरूद	–	नींबू, अमरूद, आडू
सब्जियाँ	कददू वर्ग	–	–	कददू वर्ग
वन /वानिकी पेड़ पोधे	–	–	–	यूकेलिप्टिस , सागौन

चित्र–5 : मौन पालन एवं डिब्बों में रखे मधुमक्खी की देखभाल

वर्मीकम्पोस्ट

वर्मीकम्पोस्ट यूनिट 100 वर्गमीटर क्षेत्रफल में शुरू किया गया। इस यूनिट के लिये गोबर पशुपालन यूनिट से एवम् फसलों के अवशेष फसल उत्पादन यूनिट से मिल जाता है। 100 वर्गमीटर क्षेत्रफल को 20 छोटी–छोटी क्यारियॉ (चित्र–6) बना कर उसमें गोबर +फसलो के अवशेष से क्यारियों को भर दिया गया और उन क्यारियों में केचुओं की बराबर–बराबर मात्रा में मिला दिया गया। उसके उपरान्त सप्ताह में एक बार क्यारियों में भरे गोबर+अवशेष को फावड़े से पलट दिया जाता है तथा दूसरे सप्ताह उस पर पानी का छिड़काव किया जाता है

इस प्रकार से वर्मी कम्पोस्ट प्रक्रिया अपनाने पर करीब 2 से 3 महीने में वर्मी कम्पोस्ट बन कर तैयार हो जाता है। फिर इसको लोहे की जाली से छान लिया जाता है। और केचुओ को दुबारा ताजा गोबर+अवशेष के साथ मिला दिया जाता है। इससे एक बार में 55 से 90 कुन्तल तैयार वर्मी कम्पोस्ट मिल जाता है। सभी प्रक्रियाएँ समय व सही से अपनाने से वर्ष में 3–4 बार उत्पादन ले सकते हैं।

तैयार वर्मिकम्पोस्ट को छानती हुई महिला श्रमिक

केंचुआ प्रजाति एपिीना फेटिडा

चित्र–6: फार्म पर बनाई गयी इकाई में वर्मिकम्पोस्ट का उत्पादन एवं प्रयोग में लाई गई केंचुआ प्रजाति

फार्म बाउंड्री पौधारोपण

समस्त फार्म बाउंड्री को बार्डर–प्लानटेशन के तहत लंबी अवधि तक सालो साल फल देने वाले फल वृक्षों तथा चारे वाली बहुवर्षीय झाड़ियों (चित्र–7) से आच्छादित किया गया हैं। कटहल, बेल, ऑवला, जामुन, नींबू एवम झाडीनुमा चारा वृक्ष सुबबूल के पौधे फार्म के चारों ओर लगा दिये गये थे। इसी प्रकार फल उद्यान के चारों ओर जीवित बाड़ बनाने हेतु करोंदा झाड़ी वृक्ष को एक एक मीटर की दूरी पर सीधी पंक्ति में उगाया गया। बाउंड्री

फार्म की सम्पूर्ण बाउंड्री पर फलवृक्ष, चारा झाड़ियाँ आदि उगाकर फसलों की तेज हवाओं से सुरक्षा के साथ साथ अतिरिक्त आमदनी होती है

फलझाड़ी करोंदा एक उत्तम जीवित बाड़ का ही काम नहीं करती बल्कि टनों फल भी पैदा करती है

चित्र–7 : फार्म बाउंडरी एवं फल उद्यान के चारों तरफ उगाये फल एवं चारा पेड़ व झाड़ियाँ

पौधारोपन के तीन से चार वर्ष बाद ही कृषक को पर्याप्त मात्रा में चारा, ईधन व फलों की प्राप्ति होने लगती है जो फार्म आमदनी के अलावा लम्बी अवधि तक नियमित होने वाले अतिरिक्त लाभ के रूप मे देखी जा सकती है।

ज्यादा रोजगार

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में रोजगार की काफी कमी महसूस की जा रही है। हमारी ज्यादातर ग्रामीण आबादी का हिस्सा बेरोजगार घूम रही है। समन्वित कृषि प्रणाली में विविधिकरण एवं सघनीकरण के कारण प्रति इकाई समय प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक कृषि क्रियाओं के जुडने से अधिक कृषि मजदूरों की आवश्यकता पड़ने से ग्रामीण युवाओं की बेरोजगारी को काफी कम किया जा सकता है और स्वरोजगार के अवसर पैदा किये जा सकते है। नीचे दी गई सारणी–8 में मोदीपुरम फार्म पर विकसित समन्वित कृषि मॉडल में कुल वार्षिक रोजगार की संभावना का ब्योरा दिखाया गया है। सारिणी के आँकड़े बताते हैं कि रोजगार में 400% तक कि वृद्धि संभव हुई।

सारणी–8. कृशि पद्धति मॉडल में विभिन्न व्यवसायों में रोजगार की संभावनाएं

क्रम संख्या	फार्म व्यवसाय	रोजगार की संभावना (संख्या/वर्श)
1	फसल / हे०	189
2	पशु पालन (5–12 पशु इकाई)	315
3	वगवानी (2300 वर्ग मीटर)	100
4	मछली पालन (1000 वर्ग मीटर)	42
5	मधुमक्खी पालन (10–15 डिब्बे)	38
6	बकरी पालन (15 पशु इकाई)	71
7	वर्मी कम्पोस्ट (100 वर्ग मीटर)	40
	कुल योग	**795**

समन्वित कृशि प्रणाली में जैविक खेती को बढ़ावा

समन्वित कृषि प्रणाली के मूल सिद्धांतों के अनुसार फार्म प्रक्षेत्र पर उत्पादित सभी उपलब्ध फार्म उत्पादों, फसल अवशेषों एवं विभिन्न प्रकार के जैविक एवं हरी खादों आदि को फसल व मृदा में पुनःचक्रण (रिसाइक्लिंग) द्वारा मिलाकार रासायनिक उर्वरकों में कटोती के साथ साथ कम खर्चीली एवं वातावरण अनुकूल जैविक खेती को बढ़ावा दिया जाना भी संभव हुआ है। नीचे दी गई चित्र संख्या–8 एवं सारणी–9 में फार्म पर पिछले 6 वर्षों के औसत उत्पादित फार्म उत्पादों, फसल अवशेषो व विभिन्न प्रकार के जैविक खादों जिन्हे मृदा में पुनःचक्रण (रिसाइक्लिंग) द्वारा मिलाना संभव हुआ का विवरण दिया गया है।

उपरोक्त सारिणी से विदित होता है कि कृषि प्रणाली मॉडल प्रक्षेत्र पर पैदा उपलब्ध पशुओं के गोबर व मूत्र, फसल अवशेष, हरी खाद, जैविक उर्वरक, मछली तालाब की मृदा एवं जल आदि को वैज्ञानिक विधियों से पुनरावृति (रीसाइकल व कंपोस्टिंग) द्वारा प्रति वर्ष लगभग 46.8 किलो0 नत्रजन, 68 किलो0 फास्फोरस व 123.6 किलो0

गन्ना फसल में सूखी पत्तियों का बिछावन

धान–गेंहू फसल चक्र में गेंहू के बाद ढेंचा की फसल की हरी खाद

चित्र–8 : गन्ना फसल अवशेष व ढेंचा की हरी खाद

सारणी–9. समन्वित पद्वति मॉडल के अर्न्तगत फार्म पर उपलब्ध जैविक उर्वरकों के स्रोत एवं उनसे प्राप्त पोशक तत्व

उर्वरक का स्रोत (नाइट्रोजन, फासफोरस, पोटाश का प्रतिशत)	फार्म पर उपलब्धता (किलोग्राम)	नाइट्रोजन (किलोग्राम)	फासफोरस (किलोग्राम)	पोटाश (किलोग्राम)	कुल योग
हरी खाद की फसल					
i. ढैचा (1.29:0.36:1.64)	8800	18.9	5.3	24.0	48.2
ii. लोबिया (1.29:0.36:1.64)	8500	18.3	5.1	23.2	46.6
फसलो की सूखी पत्तियॉ					
i. गन्ना की सूखी पत्तियॉ (0.4:0.18:1.28)	900	3.6	1.6	11.5	16.7
ii. अरहर की सूखी पत्तियॉ (1.29:0.36:1.64)	232	3.0	0.8	3.8	7.6
iii. आलू की पत्तियॉ (0.52:0.21.1.06)	1450	7.5	3.0	15.4	25.9
गोबर की खाद (सूखा वजन) (0.04:1.2:1.9)	17600	70.4	211.0	334.0	615.4
कुल प्राप्त पोषक तत्व		121.7	226.8	411.9	760.4
30% की दक्षता के साथ		46.77	68.0	123.6	228.1
उर्वरक की जरूरत/वर्ष (फसल + बागवानी)		285.3	116.3	109.9	511.5

पोटाश तत्व की मात्रा को मृदा में मिलाकर न केवल रासायनिक खादों पर कृषक की निर्भरता (45%) कम की जा सकी बल्कि रसायनिक खादों के खर्चों में कमी के साथ साथ पर्यावरण सुरक्षा में भी महत्वपूर्ण योगदान करती है।

बायोगैस उत्पादन

पशु इकाई पर उपलब्ध गोबर का कम्पोस्ट खाद, वर्मी कम्पोस्ट के साथ–साथ बायोगैस उत्पादन करके परिवार की ईंधन एवं रोशनी के खर्चों में कमी लाने में भी मदद की जा सकती है। 3–4 जानवरों वाली पशु इकाई से 1.

5 किलोवाट की बायोगैस यूनिट की स्थापना करके एक परिवार की खाना बनाने लायक गैस, प्रकाश हेतु 2–3 बल्ब जलाने की सुविधा तथा यूनिट से प्राप्त गोबर स्लरी से अधिक पोषकता वाली तथा दीमक रहित गोबर खाद प्राप्त होती है। बायोगैस इकाई (चित्र–9) की स्थापना हेतु प्रदेश सरकार के नेडा विभाग से 50% या अधिक अनुदान की भी सुविधा उपलब्ध हैं।

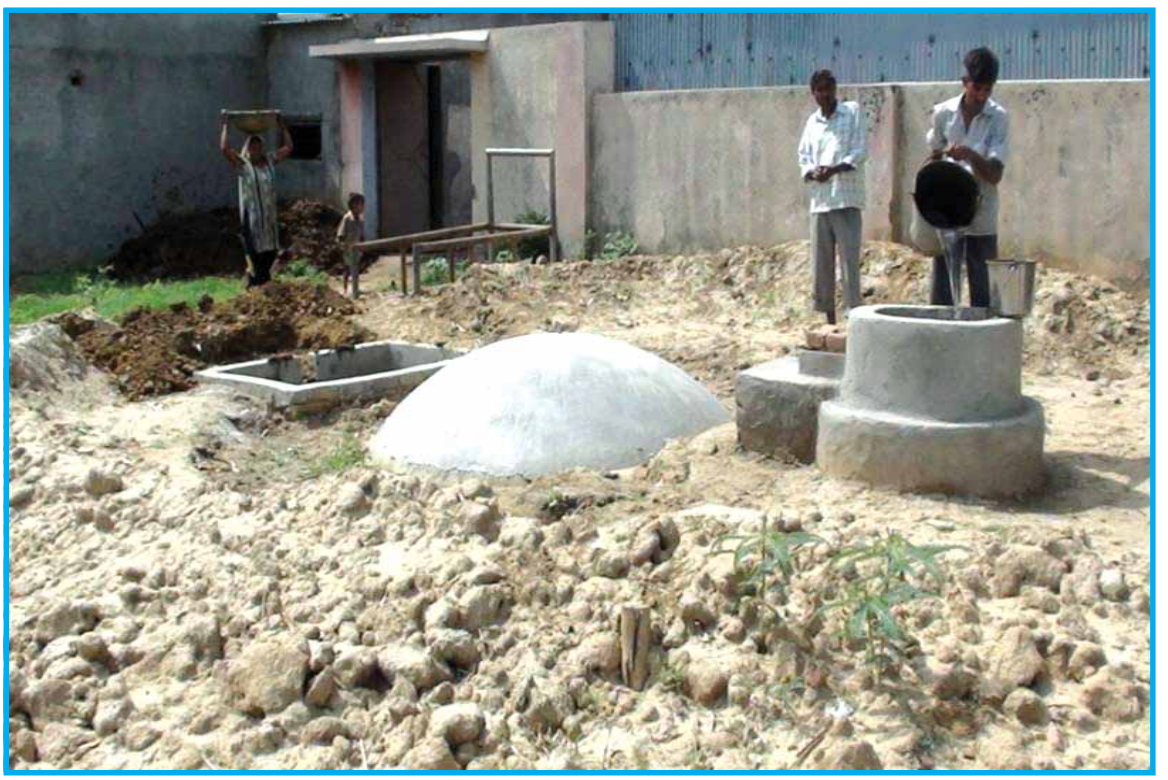

चित्र–9 : कृशि मॉडल में स्थापित बायोगैस यूनिट

समन्वित कृशि प्रणाली में फार्म उत्पादों एवं उप–उत्पादों के पुनःचक्रण (रिसाइक्लिंग) से प्राप्त आर्थिक लाभ एवं खेती में योगदान

समन्वित कृषि मॉडल में शामिल सभी व्यवसायों (इंटरप्राइसेस), उनसे प्राप्त उत्पादों एवं प्रयोग में लाये गए इनपुट–आउटपुट तथा रीसाइकल किये गये पदार्थों का गहनता से अध्ययन करने पर पता चलता है कि उपरोक्त उपायों के अपनाने से कृषि मॉडल की कुल लागत में लगभग 57 प्रतिशत (सारणी–10) तक की बचत संभव हुई है। इस प्रकार न केवल खेती को सस्ता, टिकाऊ व लाभकारी बनाना संभव होगा बल्कि मृदा व वातावरण को भी लंबे समय तक विभिन्न विकारों से सुरक्षित रखा जा सकेगा।

सुनि□चित जीविकोपार्जन एवं आर्थिक द□ा में सुधार

समन्वित कृषि प्रणाली पद्धति द्वारा भारतीय ग्रामीण परिवार की वार्षिक खाद्यान्न, चारे, दूध, ईंधन व मांस की सुनिश्चित पूर्ति तो संभव होती ही है साथ–साथ ही परिवार की अन्य मूलभूत आवश्यकताओं जिनमें शिक्षा, मेडिकल उपचार व अन्य सामाजिक व आर्थिक जिम्मेदारियाँ शामिल हैं को निभाने हेतु रु० 55,574 (प्रथम छः

सारणी–10. फार्म पर उत्पादित विभिन्न उत्पाद एवं उनका परस्पर उपयोग हेतु पुनःचक्रण व तालमेल

विभिन्न फार्म उत्पादों का औसत उत्पादन/उत्पाद/फार्म के उप उत्पाद	कुल उत्पाद (किलो०/ली०/स०) एवं स्थानीय बाजार भाव	फार्म उत्पाद/उप उत्पाद व एक व्यवसाय से प्राप्त उत्पाद का दूसरे व्यवसाय में उपयोग (किलो०/ली०/टन/स०)						पुनः चक्रित उत्पाद का बाजार मूल्य (रु०)
		फसलें	पशु–पालन	बागवानी	मछली पालन	केंचुआ खाद	कुल योग	
फसलें								
खाद्यान्न (किलो०)	3280 @ रु० 09 / किलो०	48	900	–	–	–	948	8532
दलहन (किलो०)	380 @रु० 30/ किलो०	5	.	.	.	.	5	150
तिलहन (किलो०)	180 @ रु० 30/ किलो०	2	.	.	.	.	2	60
गन्ना (टन)	24.48@ रु० 1500/टन	3	.	.	.	.	3	4500
हरा चारा (टन)	61.03@ रु० 600/ टन	.	44	.	0.36	.	44.36	26616
भूसा / सूखी पुआल (टन)	920 @ रु० 3500/ टन	.	8.20	.	.	1.00	9.20	32200
हरी खाद (टन)	17.30(94.8 किलो० एन०पी०के)	13.00	.	4.00	0.30	.	17.30	1346
फसल अवशेष (टन)	2.58 (50.2 किलो ०एन०पी०के)	2.00	.	.	.	0.58	2.58	712
खरपतवार (टन)	2.10	.	2.10		.	.	2.10	.
कुल योग (फसलें)	–	–	–	–	–	–	–	74116
बगवानी								
फल (किलो०)	1520 @ रु० 15/ किलो०	.	.	.	.	.	..	
सब्जियां (किलो०)	3280 @ रु० 8/ किलो०	.	.	.	.	.	..	
फसल अवशेष (टन)	2.10 (40.86 किलो ०एन०पी०के)	2.00	0.10	.	.	.	2.10	580
ईंधन (टन)	2.50 @ रु०1500/ टन	.	.	.	.	.	..	
कुल योग (बागवानी)		–	–	–	–	–	–	580
पशुपालन								
दूध (ली०)	5890 @ रु० 28 /ली०	.	.	.	.	.	..	
केचुआ खाद (टन)	2.50 @ रु० 1500/ टन	5.00	.	2.00	0.05	.	7.05	35240
गोबर कि खाद (टन)	5.80 @ रु० 250/ टन	5.00	.	0.80	.	.	5.80	1450
मूत्र (ली०)	14235 ली०	.	.	.	4235	10000	14235	.

विभिन्न फार्म उत्पादों का औसत उत्पादन/उत्पाद/फार्म के उप उत्पाद	कुल उत्पाद (किलो०/ली०/स०) एवं स्थानीय बाजार भाव	फार्म उत्पाद/उप उत्पाद व एक व्यवसाय से प्राप्त उत्पाद का दूसरे व्यवसाय में उपयोग (किलो०/ली०/टन/स०)						पुनः चक्रित उत्पाद का बाजार मूल्य (रु०)
		फसलें	पशु-पालन	बागवानी	मछली पालन	केंचुआ खाद	कुल योग	
बछड़े (इकाई)	3 @ रु० 3000/ बछड़ा	-	-	-	-	-	-	-
कुल योग (पशुपालन)		–	–	–	–	–	–	36700
मछ्ली पालन	-							
मछ्ली (किलो०)	261 @ रु० 50/ किलो०	-	-	-	-	-	-	-
तालाब कि मिट्टी (घनमीटर)	120 किलो० एन०पी०के	120	-	-	-	-	120	950
तालाब का पानी(घनली०)	2400	1800	-	600	-	-	2400	-
तालाब मेंड़ों से चारा व फल आदि (टन)	2.10 @ रु० 600/ टन	-	2.10	-	-	-	2.10	1260
कुल योग (मछलीपालन)		–	–	–	–	–	–	2210
मधुमक्खीपालन	-							
शहद (ली०)	160 @ रु० 150 /ली ०	-	-	-	-	-	-	-
(बाउंड्री पौधारोपण)								
हरा चारा (टन)	0.90 @ रु० 600/ टन	-	0.90	-	-	-	0.90	540
फल किलो०	200 ***	-	-	-	-	-	-	-
ईंधन (टन)	3.50 @ रु० 1500/ टन	-	-	-	-	-	-	-
कुल योग (बाउंड्री पौधारोपण)	–	–	–	–	–	–	–	540
सकल योग	कुल उत्पाद मूल्य रु० 5,02,706	पुनःचक्रित (रिसाइक्लड उत्पादों का बाजार मूल्य)						**1,14,146**

नोटः फार्म बाउंडरी पर लगाये गए फल वृक्षों ने भी उत्पादन शुरू कर दिया है जिससे आने वाले सालों में अतिरिक्त आमदनी मिलेगी

वर्ष) से रु० 77,605 (सातवें वर्ष) की वार्षिक बचत (सारणी–11) भी संभव हुई। इन सब से न केवल समन्वित कृषि प्रणाली पद्धति की उपयोगिता एवं महत्व का पता चलता है बल्कि फसल एवं फार्म विविधिकरण से होने वाले लाभों जिनमें नियमित दैनिक आय, अधिक पोषक भोजन एवं जलवायु व अन्य आपदाओं से परिवार की सुरक्षा तथा वातावरण को साफ सुथरा रखने में भी मदद मिली।

सारणी–11. समन्वित कृशि प्रणाली का परिवार के भरण पोशण एवं आर्थिक स्थिति पर प्रभाव

फार्म उत्पाद	भारतीय परिवार की वार्शिक मांग (टनों में)	औसत उत्पादन (2004–10) (टनों में)	औसत उत्पादन (2011–12)** (टनों में)	बाजार भाव (2011–12) (रुपयों में)
अ. फसले (0.70 हे०)				
खाद्यान्न	1.55	3.28	4.94 @ रु० 12/किलो०	59280
तिलहन	0.13	0.18	0.42 @ रु० 30/किलो०	12000
दलहन	0.20	0.38	0.25 @ रु० 30/किलो०	7500
चारेवाली फसलें	36.5	61.03	53 @ रु० 75/किलो०	40500
गन्ना	1.60	24.48	33.7 @ रु० 1800/टन०	60660
ब. बागवानी (0.22 हे०)				
फल	0.20	1.52	2.66 @ रु० 10–20/किलो०	36780
सब्जियां	0.90	3.28	2.08 @ रु० 4–20/किलो०	14450
स. प□ुपालन (0.32 हे०)				
दुधारूपशु (2 भैस + 1 गाय)–दूध	1.12	5.81	3.72* @ रु० 26/ली० (औसत मूल्य गाय ओर भैस के दुध का)	96642
द. मछलीपालन (0.10 हे०)				
मछली	–	–	0.24 @ रु० 50/किलो०	12050
न. मधुमक्खी पालन व अन्य (0.01 हे०)				
(शहद)	0.02	0.26	0.12 @ रु० 120/किलो०	10080
प. म□ारूम	10.00	0.16	50 @ रु० 40/किलो०	2000
फ. केचुआ खाद (वर्मिकम्पोस्ट)	–	12.00	18 @ रु० 2/किलो०	36000
भ. प□ुओं की बिक्री से प्राप्त आय			एक भैस	23000
कुल कीमत (रु०) सभी फार्म उत्पाद की	119560	362775	–	410942
कुल लागत (रु०)	–	197883	–	213777
शुद्ध लाभ (रु)	–	164887	–	197165
परिवार खर्चे घटाकर शुद्ध बचत (रु०)	–	55574	–	77605

*पशुओं की संख्या में लगभग आधी कटोती

**सन 2011 में संशोधित मॉडल में मशरूम व बायोगैस यूनिट का समावेषण किया गया

उपरोक्त आर्थिक विश्लेषण से समन्वित कृषि प्रणाली की उपयोगिता एवं महत्व का पता लगता है। मॉडल में अपनाए गई विविधिकरण प्रक्रिया के फलस्वरूप न केवल कुल आमदनी में इजाफा हुआ बल्कि भोजन की उत्तम पोषकता के साथ साथ कृषकों को साल के हर महीने लगातार आमदनी मिलने में भी समन्वित कृषि प्रणाली कि उपयोगिता परिलछित होती है। कृषि प्रणाली अपनाने से एवम उपलब्ध संसाधनो का समुचित सदुपयोग करने पर अधिक उत्पादन एवम लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इससे किसान भाइयो को स्वरोजगार भी मिलता है एवम् एक दूसरे का अवशेष एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय में प्रयोग करने पर कम लागत आती है। भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ जाती है एवम् पर्यावरण में भी सुधार होता है। समन्वित कृषि प्रणाली पद्धति की सफलता के लिए जरूरी है कि कृषक फार्म पर उपलब्ध संसाधनों का परिवार की दैनिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए समुचित निर्धारण एवं वितरण करें एवम् संसाधन सरंक्षण पर सबसे अधिक ध्यान दें एवम प्रक्षेत्र की एक एक इंच जमीन का सघनता से प्रयोग करें, कम खर्च तथा कम जमीन चाहने वाले नए व्यवसायों व प्रभावी सस्ते इनपुट्स व तकनीक का ही प्रयोग करें। फार्म पर पैदा होने वाला कोई भी उत्पाद, उप उत्पाद व फसल अवशेष व्यर्थ न जा पाएँ। खाली पड़ी सभी फार्म व फील्ड बाउंड्री तथा अनुपयोगी जमीन का यथोचित उपयोग कर अधिकतम उत्पादन व लाभ लिया जाय। सूर्य व गोबर से प्राप्त ऊर्जा का उत्पादन व प्रयोग को भी बढ़ावा मिले।

किसान भाइयो समय की यही पुकार है कि लेख में सुझाई गई उन्नत तकनीकों को अपनाकर आप सभी लोग खेती करें जिससे आपके परिवार में समृद्धि व खुशहाली आ सके।

एकीकृत कृषि प्रणाली द्वारा प्राकृतिक ससांधनो का प्रबन्धन

एन. रविशंकर एवं ब्रजमोहन

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ (उ.प्र.)

कृषि एवं कृषि से सम्बन्धित क्षेत्रो के उत्पादन एवं उत्पादकता के निर्धारण में प्राकृतिक संसाधन जैसे भूमि, मिट्टी, जल, विभिन्न प्रजाति के पौधे, जलवायु एवं ऊर्जा एक महत्तवपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन सभी संसाधनो में, जहॉ एक ओर पानी जीवन के लिए आवश्यक है वही दूसरी ओर, मिट्टी एक माध्यम की तरह कार्य करता है। ये दोनो कारक (जल एवं मिट्टी) मानवता की सभी कीमती आवश्यकताओ की पूर्ति एवं पर्यावरण की रक्षा हेतु सहायक है। जनसंख्या वृद्वि के कारण सभी क्षेत्रों जैसे कृषि, उद्योग एवं शहरीकरण में विकास हुआ जिसके कारण जल संसाधन की मांग लगातार बढती जा रही है। लगातार जल की बढती मांग भूमिगत जल संसाधन का अत्यधिक दोहन, भूमि की ऊपरी सतह से पानी का बहाव के कारण पानी की उपलब्धता लगातार कम होती जा रही है जिससे खाद्य उत्पादन एवं सन्तुलित वातावरण को स्थिर बनाये रखना कठिन हो रहा है। मिट्टी एवं जल, प्राकृतिक महत्वपूर्ण संसाधन है। लगातार बढती मनुष्यों एवं पशुओ की जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति बनाये रखने हेतु सही तरीके से इनका उपयोग कर सावधानी पूर्वक इनका संरक्षण करने की आवश्यकता है।

मिट्टी और जल संसाधन संरक्षण के उपाय

(अ) भास्य उपाय

मृदा एवं जल संरक्षण के लिए अपनायी जाने वाली पद्वतियॉ वर्षा की बूंदो का अवरोधन कर मृदा बिखराव को कम करती है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढाकर, एवं मृदा संरचना में सुधार के द्वारा, बेहतर पानी ग्रहण करने में मदद करती है, कन्टूर खेती, पलवार, अधिक फैलने वाली फसलें, पट्टी फसल एवं मिश्रित फसलो के द्वारा मृदा एवं जल संरक्षण में मदद मिलती है।

पलवार

भूमि की ऊपरी सतह पर पलवार बिछाने से जहां एक ओर पानी एवं तेज हवाओं द्वारा, मिट्टी के कटाव को रोकने में सहायता मिलता है वही दूसरी ओर भूमि को ऊपरी सतह से वाष्पोत्सर्जन द्वारा होने वाले जल का नुकसान भी कम होता है। पलवार द्वारा खरपतवारो को पनपने से रोका जा सकता है एवं भूमि की भौतिक दशा में सुधार किया जा सकता है। जिसके परिणाम स्वरूप फसल की पैदावार बढ़ाने में सहयता मिलती है। हल्की वर्षा के बाद भूमि में बनने वाली परत को भी तोड़ने में पलवार सहायक है।

अधिक आच्छादन वाली फसले उगाकर जल बहाव एवं मृदा ह्रास को कम करना

सामान्यतः दलहन फसले साधारण फसलों के मुकाबले भूमि पर अधिक आच्छादित होकर खेती योग्य भूमि के कटाव को रोकने में उपयोगी सिद्व होती है। स्वाभाविक तौर पर फसले एवं फसल प्रणालियॉ मृदा एवं मौसम के कारण अलग–अलग क्षेत्रों में बदलती रहती है।

पट्टी फसले (strip cropping)

पट्टी फसल खेती द्वारा भूमि के कटाव को नियन्त्रित कर, मिट्टी उर्वरता को बनाए रखने में एक सार्वभौमिक मान्यता है। पट्टी फसल खेती के प्रभाव के अन्तर्गत खेती के अच्छे तरीकों जैसे फसल चक्र बोना, कन्टूर खेती, उपयुक्त कर्षण क्रियाये, पलवार एवं अधिक फैलने वाली फसले उगाना आदि पद्वतियॉ अपनायी जाती है।

मिश्रित फसले (mix cropping)

भारतीय किसानो का जोत का आकार कम होना, पट्टी फसल खेती के प्रति रूझान की कमी का एक प्रमुख कारण है ऐसी परिस्थितियों में कृषको का रूझान मिश्रित खेती की ओर जाता है मिश्रित खेती के कुछ महत्वपूर्ण उद्वेश्यो में किसी न किसी फसल से भूमि ढकी रहने के कारण वर्षा के कारण होने वाले मिट्टी कटाव में कमी व विपरीत परिस्थितियो व आपदा के समय कम से कम एक फसल की निश्चित उपज मिलना प्रमुख है। विभिन्न फसलों की जड़े भूमि के विभिन्न स्तरों से पोषण ग्रहण करती है।

(ब) मिट्टी और जल संरक्षण के लिए यान्त्रिक उपाय

कृषि भूमि पर मृदा कटाव को नियन्त्रित करने में यान्त्रिक उपाय एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। सस्य क्रियाओं को अधिक प्रभावी बनाने के लिए यान्त्रिक उपायों को अपनाया जाता है। इन उपायो के अन्तर्गत कन्टूर मेड बन्दी, वर्गीकृत मेड बन्दी, ढ़लान वाली भूमि पर बैन्च टैरोसिगं (पट्टीदार खेती) आदि शामिल है। कटाव को नियन्त्रित करने के लिए यान्त्रिक उपयो के मुख्य उद्देश्य निम्न है :

- जल बहाव को रोककर पानी के भूमि में रिसाव का समय बढाना
- एक लम्बे ठलान वाले खेत को कई छोटे भागो में विभाजित कर पानी के बहाव को कम कर मृदा कटाव को रोकना

ऐसी कृषि भूमि जहां पर भूमि का ढ़लान 6 प्रतिशत है वहां पर कन्टूर मेड बन्दी कर शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में पानी का सरंक्षण किया जाता है। ऐसे क्षेत्र जहां प्रतिवर्ष 80 सेमी से अधिक वर्षा होती है मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए वर्गीकृत मेड बन्दी उपयोगी सिद्ध होती है।

भूमि की स्थिति एवं ढ़लान के आधार पर बैन्च ट्रैसिंग की जाती है सामान्य ढ़ाल पर वर्गीकृत मेड बन्दी की दर्ज पर ऊर्ध्वाधर ढ़ाल 60 से 180 तक विभिन्न ढ़लान एवं मिट्टी की स्थिति में अनुसार प्लेट फार्म की श्रंखला के

रूप में होती है तथा कर्षण क्रियाओं को आसानी से समपन्न करने के उद्देश्य से आवश्यकतानुसार चौडाई को रखा जाता है।

अधिक वर्षा वाले क्षेत्रो में सूखा एवं बाढ़ की स्थितियों से निपटने के लिए जल एकत्रित करना बहुत प्रमुख है इस एकत्रित जल द्वारा कृषि उत्पादन में स्थायीत्व लाया जा सकता है। भौतिक दशाओं के अनुसार जल एकत्रित करने के अलग अलग तरीके है।

(स) एकीकृत कृशि प्रणाली में मृदा उर्वरता बनाये रखने हेतु संसाधनो का पुर्नःचक्रण

कृषि अधिक सघन होने से मृदा में जहरीलेपन तथा विभिन्न प्रकार की कमियां, कृषि उत्पादन को स्थिर रखने के लिए एक चुनौती है। जिसके कारण पैदावार का घटना शुरू हो जाता है। एकीकृत कृषि प्रणाली के मुख्य उद्देश्यों में एक घटक उत्पादन/कचरे का पुनःचक्रण (Recycling) भी है। ऐसे पुनः चक्रण द्वारा अन्तिम पौधो के उत्पाद को हमेशा फसलों के लिए मृदा में जैविक खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है।

फसल और प□ु अप□ाश्ट उपयोग

पशुओं की उत्पादकता मुख्यतः चारे की गुणवत्ता एवं उपलब्धता पर निर्भर करती है। यह पाया गया है कि देश में अधिकांश पशु अल्पपोषित है। विभिन्न फसलों के अवशेष पशुओ के लिए चारे का एक प्रमुख भाग है। भारत में 1980 तक पोषण का मुख्य स्रोत पशुधन को मुख्यतः पारम्परिक कृषि फसलो के अवशेष जैसे ज्वार, मक्का के डंठल गन्ने की पत्तियॉ, गेंहूँ धान का भूसा पुआल और दालो की डंठल आदि थे। अनाज एवं भूसा के अनुपात के आधार, हमारे देश के लगभग 321.4 मि0 टन कृषि फसलो का अवशेष उपलब्ध है। हरे–चारे की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए हरे–चारे के अन्तर्गत क्षेत्रफल नहीं बढ़ रहा है। दूध और मांस हेतु उपलब्ध जानवरो को प्रतिस्थापित किया जा रहा है जिनके लिए अच्छे सान्द्रित दाने के आवश्यकता है, इस प्रकार 2020 तक आवश्यक फसल अवशेषों की मात्रा लगभग 447 मि0 टन होगी। वर्तमान में भारत में, फसलों के अवशेष के अलावा, पशुओं द्वारा विसर्जित पदार्थ गोबर व मल–मूत्र ईधन के रूप में, कम्पोस्ट खाद के रूप में उपयोग किया जा रहा है, जबकि बायोगैस इकाई के माध्यम से पुर्नःचक्रण द्वारा उर्जा उत्पन्न करने के साथ–साथ एक अच्छी गुणवत्ता वाली जैविक खाद को तैयार किया जा सकता है। जोकि प्रमुख पोषक तत्वों के साथ–साथ सूक्ष्म पोषक तत्व एवं दुर्लभ पोषक तत्व (Trace nutrient) की उपलब्धता को बढ़ाता है। इस प्रकार आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी जैसे एकीकृत कृषि प्रणाली अपनाने से पुर्नःचक्रण द्वारा जहां एक ओर भूमि में अप्रयुक्त क्षमता में सुधार होता है वही दूसरी ओर उत्पादन में वृद्वि की सम्भावना बढ़ती है।

संसाधन पुनःचक्रण

सदियो से एकीकृत कृषि प्रणाली जिसके फसल एवं पशुधन प्रमुख घटक हैं, व लगातार बढती जनसंख्या को खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराता है। इस प्रणाली के अन्तर्गत पशुओ को कृषि अवशेषों द्वारा पोषित किया जाता है व पशु शक्ति कृषि क्रियाओं के लिए एवं ईधंन कार्बनिक खाद के लिए प्रयुक्त की जाती है। इस प्रकार एक उद्यम का बेकार पदार्थ दूसरे उद्यम के लिए आगत (Input) का कार्य करता है तथा वातारण भी दूषित नहीं होता है।

तालाबों के ऊपर चिड़ियों के स्थल ऐसे बनाये जाते हैं कि उनके अपशिष्ट सीधे तालाब में गिरे, इस प्रणाली के अर्न्तगत पक्षियों को अनाज, टूटे चावल, बेकार नारियल और सब्जियां आदि को खिलाया जाता है। मुर्गियों द्वारा विसर्जित पदार्थ तथा गाय गोबर मछलियों के भोजन के रूप में प्रयोग कर, मछली के दाने की कीमत में कमी करने के साथ–साथ इस तरह तैयार की गयी खाद सब्जियां तथा चारे वाली फसले उगाने हेतु खेत में प्रयोग की जाती है। किसानो द्वारा स्थानीय स्तर पर उपलब्ध फसलो के अवशेषों धान पुआल, बेकार सब्जी चारे पोषण के साथ घटकों को सांन्द्रित कर पशु चारा बनाकर मवेशियों को खिलाया जाता है। बैलो का प्रयोग खेत की जुताई एवं अन्य कृषि कार्यो के लिए किया जाता है तथा गाय एवं बैलो से प्राप्त विसर्जित पदार्थो को गोबर की खाद के रूप में परिवर्तित कर, खेतो में प्रयोग किया जाता है।

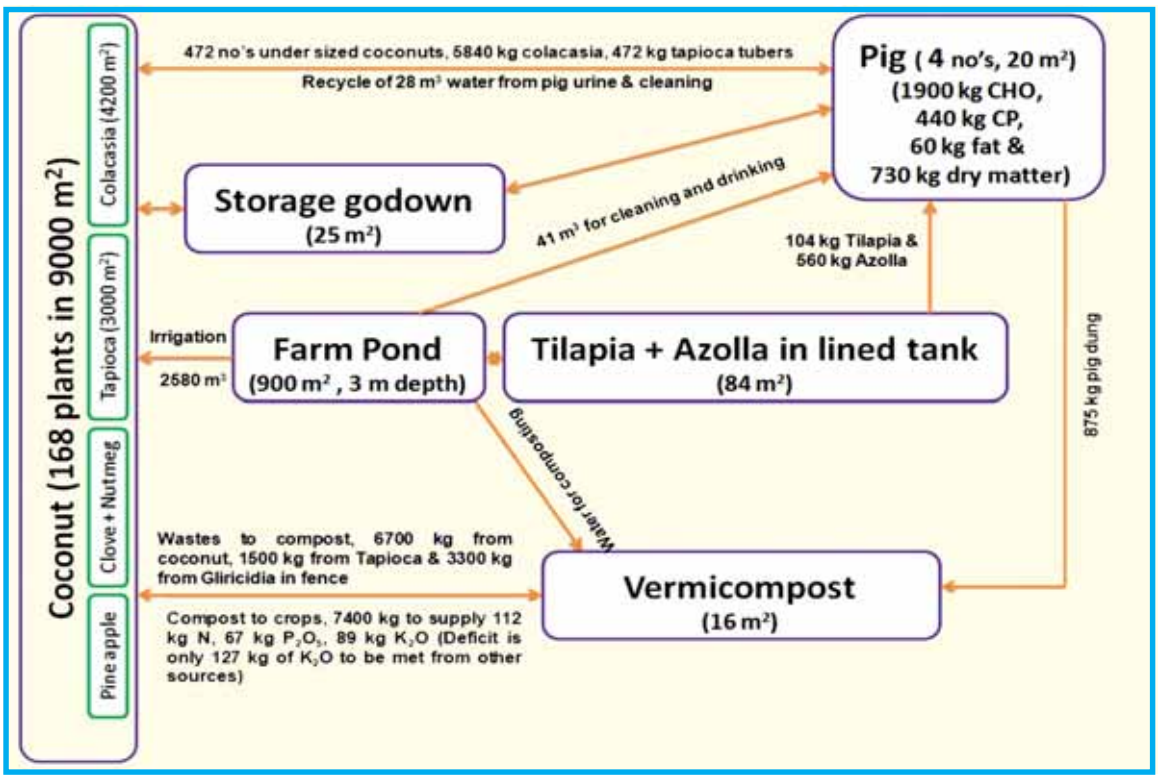

जल संचयन और पुनःचक्रण

प्राकृतिक ससांधनो का विवेकपूर्ण उपयोग कृषि आय बढ़ने और कृषि के सत्त विकास के लिए पूर्व अपेक्षा है। आधुनिक कृषि एवं सम्बन्धित क्षेत्रों में नयी प्रौद्योगिकी को अपनाने हेतु गांव स्तर एक बैन्च मार्क सर्वे का आयोजन किया गया जिसमें पानी की कमी, तकनीकी ज्ञान की कमी, मानव श्रम की कमी को कृषि सघनता के लिए एक बाधा के रूप में इगिंत किया गया है। जल अभाव, जोकि मानव एवं कृषि को प्रभावित करता है को दृष्टिगत रखते हुए एकीकृत कृषि प्रणाली एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा इष्टतम् तरीके से प्राकृतिक ससांधन विशेष रूप से भूमि एवं पानी का उचित इस्तेमाल करता है। प्रतिकूल समय में जल संकट को, उथले कुएं, तालाब या घाटी में पानी को इकट्ठा कर कम किया जा सकता है। ऊपरी क्षेत्रों में अच्छी तरह से बनाये गये बांधो द्वारा कुछ समय के लिए ऐसे क्षेत्रो में पानी को पुर्नभरण के लिए मदद मिलती है। पानी की कमी के दौरान एकीकृत कृषि प्रणाली में खेत

और तालाब में जमा पानी का (Precision) सिचाई विधि एवं आधुनिक कर्षण क्रियाओ द्वारा पानी की कमी को कम किया जा सकता है।

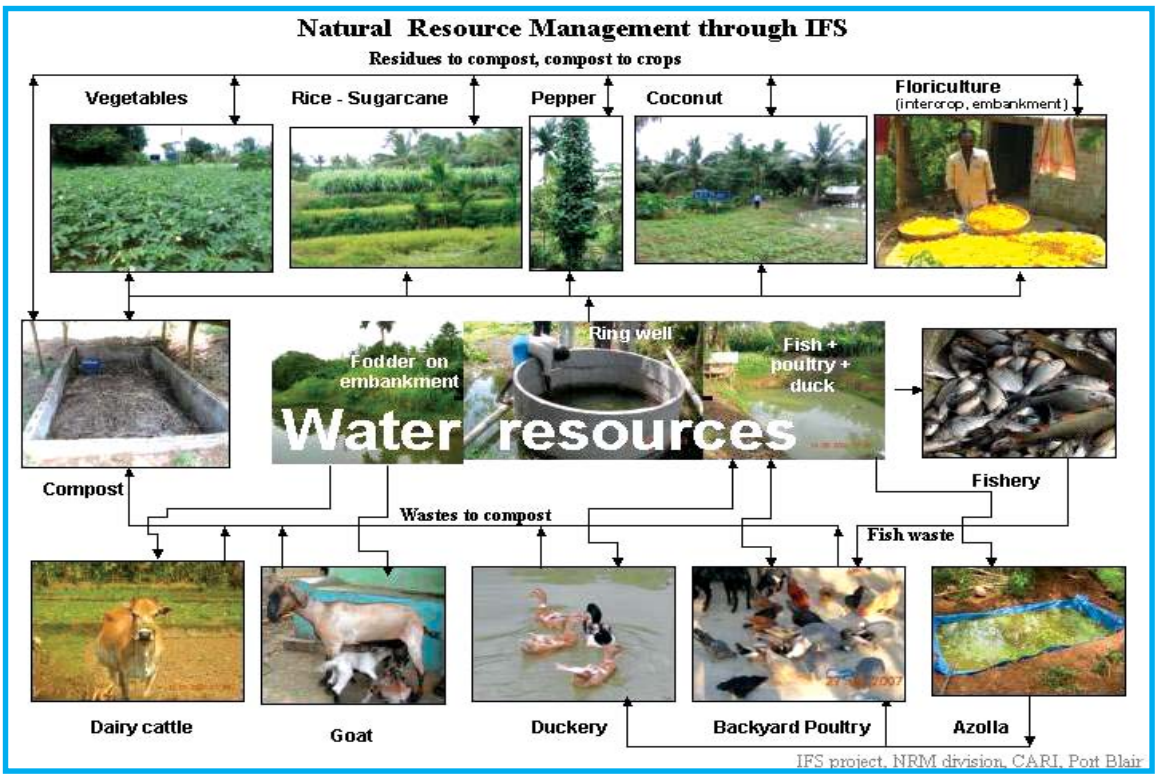

संसाधन योगदान

डा0 स्वामीनाथन (1975) के अनुसार भारत में एकीकृत कृषि प्रणाली में डेयरी मवेशियों के शामिल हो जाने से मौजूद परिस्थितिकी और समाजिक–आर्थिक की प्रासंगिकता हो गयी है। जिसके कारण खाद एवं फसल उत्पादन में वृद्वि हुई है। विक्राम नैयर एवं अन्य (1976) के अनुसार, एकीकृत कृषि प्रणाली में खेतों से उत्पादित चारा पशुओं द्वारा खाये जाने पर खेतो से पौषक तत्वों के नुकसान को पशु विसर्जित खादो द्वारा कम किया जा सकता है। पशु विसर्जित पदार्थो द्वारा तैयार खाद की गुणवत्ता एवं मात्रा पशु की प्रजाति पशु के आकार, चारे की किस्म, रातब की मात्रा, पानी पीना की मात्रा एवं वातावरण आदि कारको पर निर्भर करता है। एकीकृत कृषि प्रणाली फसल +पशु के द्वारा ससांधन पुर्नःचक्रण विधि द्वारा बाहरी आगतो (Inputs) की कमी एवं मृदा उत्पादकता को बढ़ाकर उत्पादन को स्थिर रख सकते है। एकीकरण के लिए फसल के साथ–साथ पशुपालन, मत्सय पालन, मुर्गी पालन बकरी पालन जैसे उद्यमो के अवशेषो का पुर्नः चक्रण कर जैविक पदार्थ की आपूर्ति की जा सकती है। मछली आधारित एकीकृत खेती फार्म ससांधनो का बेहतर उपयोग एवं परिस्थितिकी तन्त्र के संरक्षण के लिए कम वर्षा वाले क्षेत्रो के लिए आदर्श है ।

फसल, जानवर और मछली अपशिष्ट उपयोग

पशुओ की उत्पादकता मुख्य रूप से पशुओ को दिये जाने वाले चारे और रातब की उपलब्धता एवं गुणवत्ता पर निर्भर करता है। यह देखा गया है कि देश में अधिकाशतः पशुधन को दिये जाने वाला चारा निम्न स्तर का होता

है। विभिन्न फसलो के अवशेष पशुधन के चारे का मुख्य स्रोत है। फसल अवशेष जैसे धान पुआल, गन्ने की पत्तियां सब्जियां, टूटा चावल आदि पशुओं को चारे के रूप में खिलाये जाते है। कुछ सडी–गली सब्जियां एवं गन्ने की सूखी पत्तियो को इकट्ठा कर कम्पोस्ट खाद बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है तथा इस तैयार खाद को पुनः खेत में प्रयोग किया जाता है। मछली सह मुर्गीपालन एकीकरण में मुर्गी खाद, मछलियों के लिए भोजन का कार्य करती है। प्रत्येक मुर्गी द्वारा 40–50 किलो/वर्ष (गीला वजन) मल–मूत्र पैदा किया जाता है। मुर्गी की खाद में सभी पौषक तत्व अधिक मात्रा में पाये जाते है। मुर्गी पालन के लिए पक्षियो को अंडे देने के दौरान दिये गये फीड में सामान्य फीड़ से पौषक तत्वों की मात्रा अधिक होती है। मुर्गीयों द्वारा विसर्जित पदार्थ मल–मूत्र को इकट्ठा कर मछलियों को भोजन के रूप में देते है। चूंकि इनमें पौषक एवं अन्य तत्व अधिक मात्रा होने के कारण मछलियां इन्हे खाने से प्राकृतिक रूप में अपने जीव उत्पादन करने को प्रेरित होती हैं। फसलों के अवशेष तथा सम्बन्धित क्रिया कलापो के अवशेषो का पुर्नःचक्रण द्वारा तैयार जैविक खाद, रसायनिक उर्वरको के लिए पूरक का कार्य करती है। इसके अलावा, रसायनो का निर्माण करने की प्रक्रिया में जीवाश्म ईधन के जलने के माध्यम से पर्यावरण प्रदूषण को कम करने का अवसर प्रदान करेगा। रसायनिक खाद के अधिक और अधिक प्रयोग से मृदा स्वास्थ्य में आयी समस्या का समाधान जैविक खाद द्वारा किया जा सकता है। यदि एकीकृत कृषि प्रणाली के कार्यक्रमो में छोटे और सीमान्त किसानो को शामिल किया जाय तो निश्चित रूप से उत्पादकता के साथ–साथ लाभांश बढेगा तथा साथ ही साथ मृदा उत्पादकता को स्थिर रखने मे मदद मिलेगी।

किसानों द्वारा अपनाई गयी कृषि–प्रणालियां एवं उनकी निरंतरता

अनिल कुमार एवं बृजेन्द्र कुमार शर्मा

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ 250 110

भारत सदियों से कृषि प्रधान देश रहा है जहां कृषि के विकास के साथ–साथ सभ्यता एवं संस्कृति का भी विकास हुआ। आर्थिक उदारीकरण के वर्तमान युग में भी भारत की 60 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या कृषि से प्राप्त आय पर निर्भर है। हाल के वर्षों में जनसंख्या के दबाव के कारण कृषि योग्य भूमि के जोत का आकार घटा है जिससे कृषि की निरंतरता पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। सन् 1950–51 से 1999–2000 के दौरान भारत में प्रति व्यक्ति भूमि जोत 0.5 हेक्टेयर से घटकर 0.15 हेक्टेयर हो गई। भूमि जोत के घटने का क्रम यदि इसी दर से जारी रहा तो सन् 2020 तक प्रति व्यक्ति भूमि जोत की उपलब्धता सिर्फ 0.1 हेक्टेयर रह जाएगी, जिससे छोटे एवं सीमांत किसानों की संख्या और अधिक बढ़ जाएगी। ऐसे में इन किसानों की आय सुनिश्चित करने हेतु रोजगार के विविध अवसर प्रदान करने की रणनीति तैयार करनी पड़ेगी।

इस परिदृश्य में फसल एवं फसल–प्रणाली आधारित कृषि विकास की बजाय सम्पूर्ण कृषि–प्रणाली आधारित विकास को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है, क्योंकि कोई भी अकेला कृषि व्यवसाय छोटे एवं सीमांत किसानों के जीविकोपार्जन हेतु पर्याप्त आय प्रदान नहीं कर सकेगा। कृषि को अधिक लाभकारी एवं भरोसेमंद बनाने के लिए अन्य सहायक व्यवसाय जैसे फसल, बागवानी, डेयरी, मछली पालन, मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन, आदि को समन्वित एवं एकीकृत करना पड़ेगा। अतः भारत में कृषक समुदाय के आर्थिक विकास की निरंतरता को बनाए रखने के लिए कृषि–प्रणाली आधारित विकास का दृष्टिकोण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह प्रणाली प्राकृतिक संसाधनों तथा समस्त पर्यावरण को संरक्षित रखने में भी सहायक सिद्ध होगी ताकि आगे आने वाली पीढ़ी अपने विकास हेतु इनका समुचित उपयोग कर सके।

कृषि–प्रणाली एक–दूसरे पर आधारित कई कारकों के जटिल प्रभाव का परिणाम होता है जिसमें किसान अपने पास उपलब्ध भूमि, श्रम, पूंजी एवं प्रबन्धन का आवश्यकतानुसार मात्रा एवं गुणवत्ता के आधार पर आवंटन करता है। समन्वित कृषि–प्रणाली का प्रमुख उद्देश्य उपलब्ध संसाधनों के उपयोग एवं विकास की ऐसी पद्धति विकसित करना है जिसमें कृषि उत्पादन की निरंतरता को बनाए रखा जा सके। समन्वित कृषि–प्रणाली में यदि प्रबंधन दक्षता–पूर्वक किया जाए तो जोखिम कम होता है क्योंकि इसमें विविध प्रकार के उत्पाद प्राप्त होते हैं, तथा इसमें अपनाई गई पद्धतियां पर्यावरण के प्रति मैत्रीपूर्ण होती हैं। इस प्रणाली में किसान परिवार को पूरे वर्ष रोजगार प्राप्त होता है जिससे उनकी आय बढ़ती है और जीवन–स्तर में सुधार होता है।

किसानों को जीविकोपार्जन की सुरक्षा प्रदान करने हेतु कृषि–प्रणाली के अन्तर्गत अपनाए जाने वाले कुछ प्रमुख उद्यम इस प्रकार हैं :–

फसल उत्पादन

यह एक महत्वपूर्ण उद्यम है जो सदियों से अधिकतर किसानों द्वारा अपनाई जाती रही है। यह उद्यम मनुष्य को भोजन और पशुओं को चारा उपलब्ध कराता है तथा परिवार के अन्य खर्चों के लिए आय प्रदान करता है। इस उद्यम में वातावरण, मृदा, जल एवं अन्य संसाधनों के समुचित उपयोग हेतु विभिन्न प्रकार की फसल–प्रणालियां विकसित की गई हैं जिन्हें अपनाकर किसान भरपूर लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

पशुपालन

फसल उत्पादन के साथ–साथ पशुपालन भी आदि काल से ही मनुष्यों का एक मुख्य उद्यम रहा है। फसल उत्पादन एवं पशुपालन वास्तव में एक दूसरे के पूरक् हैं। पशुओं से गोबर की खाद प्राप्त होती है जिसे फसल उत्पादन के लिए मिट्टी की उर्वरकता को सुधारने में उपयोग किया जाता है। दूसरी तरफ खेतों से प्राप्त चारा एवं उप–उत्पादों को पशुओं के भोजन के लिए उपयोग किया जाता है। पशुपालन मुख्यतः दूध, मांस अथवा ऊन उत्पादन के लिए किया जाता है तथा इसमें गाय, भैंस, भेड़, बकरी, सूअर आदि का पालन किया जाता है।

मुर्गी एवं बत्तख पालन

यह उद्यम भारत में पहले अधिक प्रचलित नहीं था, लेकिन अब यह एक प्रमुख व्यवसाय का रूप ले चुका है। प्रारम्भ में कुछ समुदाय अपने घर के पिछवाड़े में मुर्गी–पालन किया करते थे तथा मुर्गियों को छंटे हुए अनाज के दाने खिलाया करते थे। हाल के वर्षों में यह उद्यम अण्डा एवं मांस उत्पादन हेतु एक अत्यन्त लाभकारी व्यवसाय के रूप में उभरा है। खेतों से प्राप्त अनाज मुर्गियों को खिलाया जाता है तथा मुर्गी खाद को मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने एवं मशरूम कम्पोस्ट बनाने में उपयोग किया जाता है।

मछली पालन

जिन मैदानी क्षेत्रों में वर्षा अधिक होती है वहां प्रायः तलाब भी पाए जाते हैं, जिनसे सिंचाई तथा घर के कार्यों में उपयोग होने वाले पानी की आपूर्त्ति होती है। साथ ही इन तलाबों में मछली पालन का कार्य भी किया जाता है जिनसे किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। खेती–बाड़ी से प्राप्त धान की भूसी और तिलहन की खली मछलियों के भोजन के लिए तलाब में डाल दिए जाते हैं। इनके अलावा पशुपालन और मुर्गीपालन से प्राप्त जैविक खाद भी तलाब में डाले जाते हैं, ताकि तलाब के अन्दर जलीय पौधों की बढ़वार हो सके जिन्हें मछलियों द्वारा भोजन के रूप में उपयोग किया जाता है।

मधुमक्खी पालन

मधुमक्खियां पौधों, विशेषकर फल के पौधों में परागण का काम करती हैं, जिससे फल उत्पादन संभव हो पाता है। साथ ही फूलों से एकत्रित किए गए पराग से मधुमक्खियां अपने लिए शहद बनाती हैं। शहद में कई औषधीय गुण पाए जाते हैं तथा इसे मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए कई प्रकार से उपयोग में लाया जाता है। इस उद्यम को व्यावसायिक तौर पर अपनाए जाने से किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। इसमें कम लागत होने के कारण यह उद्यम छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

खुम्ब उत्पादन

खुम्ब या मशरूम एक खाद्य फफूंद है जिसे अत्यन्त साफ–सुथरे वातावरण के तहत संरक्षित कमरों में उगया जाता है। खुम्ब को सब्जी की तरह खाया जाता है तथा इसमें उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन एवं सभी आवश्यक एमीनों एसिड पाए जाते हैं। भारत में प्रमुख रूप से बटन और ढींगरी मशरूम का उत्पादन किया जाता है। फसल उत्पादन के उप–उत्पाद, जैसे धान की भूसी को खुम्ब उत्पादन हेतु कम्पोस्ट बनाने में उपयोग में किया जाता है। दूसरी तरफ, खुम्ब उत्पादन के बाद बचे हुए कम्पोस्ट को खेतों में खाद के रूप में उपयोग किया जाता है।

कृशि–वानिकी

इस उद्यम में एक ही भूमि–प्रबंधन के तहत फसल उत्पादन के साथ–साथ फल, चारा, ईंधन और लकड़ी प्राप्त करने हेतु पेड़ों को लगाया जाता है। इस व्यवस्था में दो या दो से अधिक प्रकार के पेड़–पौधे उगाए जाते हैं जिसमें कम–से–कम एक प्रकार सदाबहार पेड़ों के होते हैं। कृषि–वानिकी न केवल मनुष्यों एवं पशुओं की दैनिक जरूरतों को पूरा करता है, बल्कि वातावरण के प्रति भी लाभदायक होता है क्योंकि पेड़, मृदा एवं जल को संरक्षित करने, मृदा की उर्वरकता को बनाए रखने तथा जल–जमाव और मृदा की लवणता को नियंत्रित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह उद्यम किसानों को अतिरिक्त आय प्रदान करने में काफी मददगार सबित हो रहा है जिसके कारण यह देश के विभिन्न कृषि–प्रणालियों का महत्वपूर्ण अंग बनता जा रहा है।

बायो–गैस उत्पादन

बायोगैस का उत्पादन कम खर्च में तथा साधारण तरीके से किया जाता है। यह ऊर्जा का सस्ता एवं साफ–सुथरा स्रोत है जिसे खाना पकाने, बल्ब जलाने तथा पम्प चलाने आदि कार्यों में उपयोग किया जाता है। बायोगैस का उत्पादन पशुपालन से प्राप्त गोबर से किया जाता है। बायोगैस उत्पादन के उपरान्त् बचे हुए उप–उत्पाद को स्लरी कहते हैं, जिसमें पोषक तत्व अधिक मात्रा में पाए जाते हैं तथा इसमें कीड़े भी नहीं लगते हैं। इस स्लरी को खेतों में जैविक खाद के रूप में उपयोग किया जाता है तथा इसे जलीय पौधों के विकास हेतु मछली के तलाब में भी डाला जा सकता है।

समन्वित कृषि प्रणाली का मुख्य उद्देश्य भूमि, श्रम, पूंजी, समय एवं अन्य संसाधनों का बुद्धिमत्ता पूर्वक उपयोग करना है, ताकि किसान परिवार को पूरे वर्ष रोजगार एवं आमदनी प्राप्त होती रहे तथा विकास की निरंतरता

को बनाए रखा जा सके। उपरोक्त वर्णित उद्यमों में से कोई भी उद्यम अथवा उद्यम–समूह किसानों द्वारा क्षेत्रीय आवश्यकता एवं संसाधनों की उपलब्धता के अनुसार अपनाए जाते हैं। भारत वर्ष में अपनाई जाने वाली कुछ प्रमुख कृषि–प्रणालियां इस प्रकार हैं :

- फसल + पशुपालन
- बागवानी + पशुपालन
- फसल + बागवानी + पशुपालन
- फसल + कृषि वानिकी + पशुपालन
- फसल + मछलीपालन
- फसल + पशुपालन + मुर्गीपालन
- बागवानी + मधुमक्खीपालन
- फसल + बागवानी + कृषि वानिकी + पशुपालन

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय के वैज्ञानिकों द्वारा पंजाब के होशियारपुर जिले में सन् 2010 में किए गए एक सर्वेक्षण में यह पाया गया कि 48 प्रतिशत किसान फसल + डेयरी प्रणाली को अपनाते हैं, जबकि 20 प्रतिशत किसान फसल + डेयरी + कृषि–वानिकी प्रणाली को अपनाते हैं। इन्हीं वैज्ञानिकों द्वारा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले में सन् 2011 में किए गए सर्वेक्षण में पाया गया कि 30 प्रतिशत किसान फसल + डेयरी प्रणाली को अपनाते हैं, जबकि 22 प्रतिशत किसान फसल + डेयरी + कृषि–वानिकी प्रणाली अपनाते हैं। होशियारपुर जिले में प्रमुख फसल प्रणालियां धान–गेहूं, मक्का–गेहूं, मक्का–मटर–गेहूं, सूर्यमुखी–मक्का–मटर तथा मूंगफली–गेहूं/मक्का पाई गईं। मेरठ जिले में प्रमुख फसल प्रणालियां गन्ना–गन्ना–गेहूं/आलू/सरसों, धान–गेहूं आदि पाई गईं। होशियारपुर जिले में किसानों को फसलों से लगभग 63 प्रतिशत आय प्राप्त होती है, जबकि मेरठ जिले के किसानों को कुल आय का 53 प्रतिशत फसलों से प्राप्त होता है।

होशियारपुर जिले में उगाई जाने वाली प्रमुख फसलें धान, गेहूं, मक्का और मूंगफली पाई गईं, जबकि मेरठ जिले में उगाई जाने वाली प्रमुख फसलें गन्ना, गेहूं, धान एवं आलू पाई गईं। इन क्षेत्रों में कृषि–वानिकी एक प्रमुख उद्यम के रूप में उभर रहा है। यह उद्यम विशेषकर उन किसानों द्वारा अपनाया जा रहा है जिनके पास खेती के लिए पर्याप्त समय नहीं है। इस उद्यम में मुख्यतः पॉपुलर एवं यूकेलिप्टस (सफेदा) के पेड़ लगाए जा रहे हैं। किसानों के पास औसतन 2 गाय और 2 भैसें पाई गईं। सर्वेक्षण में यह पाया गया कि किसान अपने खेतों से प्राप्त होने वाले गेहूं और मक्का के दाने तथा ज्वार, बाजरा, मक्का और बरसीम के हरे चारे पशुओं को खिलाते हैं। किसान खेतों से प्राप्त होने वाले उप–उत्पाद जैसे धान एवं गेहूं की भूसी तथा सरसों की खली भी पशुओं को खिलाते हैं और पशुओं से प्राप्त होने वाले गोबर की खाद को खेतों में डालते हैं। इस प्रकार खेती एवं पशुपालन के बीच समन्वयन 32 प्रतिशत तक पाया गया।

कृशि प्रणाली की निरंतरता

कृषि–परिस्थितिकी में हो रहे बदलाव के कारण कृषि एवं समस्त कृषि–प्रणाली की निरंतरता पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। निरंतरता से अभिप्राय उस व्यवस्था से है जिसमें मनुष्य द्वारा अपनी वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्राकृतिक संसाधनों का इस प्रकार उपयोग करना है ताकि अगली पीढ़ियां भी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सक्षम रह सकें। विकास की निरंतरता मानव जीवन की गुणवत्ता को प्रकृति की सीमाओं में इस प्रकार निर्धारित करता है, जो समस्त प्राणी जगत एवं अगली पीढ़ियों के लिए न्यायपूर्ण हो। विकास की निरंतरता को बनाए रखने के लिए यह जरूरी है कि मानव द्वारा संसाधनों का उपभोग दर संसाधनों के नवीकरण दर से अधिक न हो तथा कचरों का उत्पादन दर भी उनके अवशोषण दर से अधिक न हो।

निरंतरता के तीन मुख्य पहलू हैं– सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरण–सम्बन्धी। ये तीनों पहलू एक दूसरे को प्रभावित करते हैं तथा इनकी अन्तःक्रिया से विकास प्रक्रिया की निरंतरता निर्धारित होती है। कृषि प्रणाली की निरंतरता के कुछ प्रमुख कारक इस प्रकार हैं:

सामाजिक अनुकूलता

सामाजिक अनुकूलता से अभिप्राय यह है कि कृषि–प्रणाली में अपनाई जाने वाली तकनीक ऐसी हो जो सामाजिक मूल्यों के परिपेक्ष्य में लोगों द्वारा स्वीकार्य हो। आमतौर पर किसान उसी कृषि–प्रणाली को अंगीकृत करते हैं जो उनकी जरूरतों की पूर्ति करने में सक्षम होता है।

उत्पादन खर्च

कृषि तकनीकों का अंगीकरण किसानों की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। ऐसी कृषि–प्रणाली जिसमें किसान उत्पादन खर्च को आसानी से उठा सकते हैं, उसका अंगीकरण लम्बे समय तक होता है। छोटे एवं सीमान्त किसानों के लिए ऐसी कृषि तकनीक अथवा उद्यम होने चाहिए जिसमें उत्पादन लागत कम हो।

संसाधन उपयोग दक्षता

किसी भी कृषि–प्रणाली में प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करके ही उत्पादन संभव हो पाता है। चूंकि प्राकृतिक संसाधन सीमित हैं, ऐसी प्रणाली जिसमें संसाधनों का उपयोग दक्षतापूर्वक होता हो, उसका किसानों द्वारा अंगीकरण लम्बे समय तक संभव है।

उत्पादकता

उत्पादकता से अभिप्राय प्रति इकाई भूमि अथवा अन्य संसाधनों के उपयोग से उत्पादन की निश्चित मात्रा उपलब्ध होना है। उत्पादकता को विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया जाता है, जैसे उत्पादन प्रति इकाई भूमि, प्रति इकाई श्रम, प्रति इकाई ऊर्जा खर्च, आदि। जिस प्रणाली अथवा विकास प्रक्रिया में उत्पादकता अधिक होती है,

उसमें कम–से–कम संसाधनों के उपयोग से अधिक–से–अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। ऐसी प्रणाली लम्बे समय तक चलती है क्योंकि इसमें किसानों को लाभ प्राप्त होने की संभावनाएं अधिक होती हैं।

लाभ

प्रति इकाई लागत खर्च पर प्राप्त होने वाली आमदनी को लाभ कहते हैं। जिस प्रणाली में किसानों को अधिक लाभ प्राप्त होता है, वह प्रणाली ज्यादातर किसानों द्वारा तथा लम्बे समय तक अपनाई जाती है।

जोखिम

साधारणतः प्रत्येक कृषि–प्रणाली के अंगीकरण में कुछ–न–कुछ जोखिम जुड़ा होता है। किसानों की भी जोखिम उठाने की अपनी–अपनी क्षमता होती है जो मुख्यतः उनकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है। किसान उसी कृषि तकनीक अथवा प्रणाली को लम्बे समय तक अपनाते हैं जिसमें उनकी क्षमता के अनुसार जोखिम कम होता है।

नवीनीकरण

नवीनीकरण से अभिप्राय कृषि तकनीक अथवा संसाधनों का दुबारा उपयोग होना है। ऐसी व्यवस्था जिसमें संसाधनों का एक बार उपयोग होने के बाद उनके अवशेषों का भी पुनः उपयोग संभव हो, वह व्यवस्था लम्बे समय तक चलती है क्योंकि इसमें प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव कम पड़ता है तथा कचरे का उत्पादन भी कम होता है। ऐसी कृषि–प्रणाली में नवीकरणीय ऊर्जा अथवा संसाधनों का अधिक–से–अधिक उपयोग किया जाता है ताकि पर्यावरण ह्रास को रोका जा सके। साथ ही इस बात का भी ध्यान रखा जाता है कि संसाधनों का उपभोग दर उनके नवीकरण की दर से कम हो तथा परिस्थितिकी में मौजूद दूसरे जीवों के अस्तित्व को खतरा न पहुंचे।

पर्यावरण के प्रति मैत्रीपूर्ण

उस कृषि तकनीक अथवा कृषि–प्रणाली का लम्बे समय तक अपनाया जाना संभव है जो हमारे पर्यावरण के प्रति लाभदायक हो अथवा कम–से–कम हानिकारक नहीं हो। सम्पूर्ण कृषि–परिस्थितिकी में प्राकृतिक संसाधनों एवं जीवों की एक–दूसरे के ऊपर निर्भरता होती है। यदि हमारे किन्हीं क्रिया–कलापों द्वारा इस निर्भरता में कोई परिवर्तन होता है तो इससे सम्पूर्ण कृषि–प्रणाली के टिकाऊपन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। ऐसे में कुछ जीवों के विलुप्त होने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं तथा मानव–जीवन का अस्तित्व भी खतरे में आ जाता है।

कृशि–पारिस्थिकी के बारे में किसानों के विचार

पिछले 20 वर्षों में किसानों के कृषि–पारिस्थिकी में आए बदलाव के बारे में जब उनके विचार पूछे गए तब किसानों ने यह बताया कि कृषि–पारिस्थिकी में निरंतर हो रहे बदलाव से खेती–बाड़ी के टिकाऊपन पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। लगभग 46 प्रतिशत किसानों ने बताया कि उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है, जबकि 36 प्रतिशत किसानों ने कहा कि पिछले 20 वर्षों में उनकी आर्थिक स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया है (सारणी 1)। ज्यादातर किसानों ने बताया कि रसायनिक खाद एवं कीटनाशकों का प्रयोग बढ़ा है, जिसके कारण उनकी मिट्टी

और पानी की गुणवत्ता में ह्रास हो रहा है। औसत तापमान में वृद्धि हुई है तथा औसत वर्षा की मात्रा में कमी आई है जिसके कारण खेती–बाड़ी में कई प्रकार की समस्याएं पैदा हो रही हैं। किसानों ने यह भी बताया कि लोगों के लालच के कारण वन, चारागाह और सामुदायिक भूमि का क्षेत्रफल घटा है, जिसके परिणामस्वरूप गांव का सामाजिक ताना–बाना बिखर रहा है।

सारणी 1: पिछले 20 वर्शों में कृशि–पारिस्थिकी के बारे में किसानों के विचार

विवरण	प्रति□ात किसान		
	बढ़ोत्तरी / सुधार	कोई बदलाव नहीं	कमी / ह्रास
आर्थिक स्थिति	46.1	35.9	17.9
मिट्टी की स्थिति	10.3	20.5	69.2
रसायनिकी खाद का प्रयोग	74.4	20.5	5.1
कीटनाशकों का प्रयोग	84.6	12.8	2.56
भूमिगत जल स्तर	7.6	46.1	46.2
पानी की गुणवत्ता	0.0	89.7	10.3
हवा की गुणवत्ता	5.1	71.7	23.1
तापमान	82.0	17.9	0.0
वर्षा की मात्रा	17.9	10.2	71.7
बागवानी क्षेत्रफल	51.2	23.0	25.6
वानिकी क्षेत्रफल	10.2	12.8	76.9
चरने की जमीन	0	5.1	94.8
समुदायिक जमीन	0	0	100
दुधारू पशु	12.8	10.2	76.9
जगंली जानवर	74.3	10.2	15.3
जंगली पक्षी	2.5	20.5	76.9

सर्वेक्षण के अनुसार दुधारू पशुओं की संख्या में पिछले 20 वर्षों में महत्वपूर्ण कमी आई है क्योंकि नई पीढ़ी पशुपालन में रूचि नहीं ले रही है। इसके कारण खेतों के लिए गोबर की खाद पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हो पा रहा है। किसानों ने यह भी बताया कि जंगली जानवरों जैसे नील गाय, बन्दर, सूअर आदि की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई है जो खेतों में खड़ी फसल को नष्ट कर देते हैं, जिससे खेती–बाड़ी के टिकाऊपन पर बड़ा प्रश्न–चिन्ह लग रहा है। वहीं दूसरी तरफ लाभदायक जंगली पक्षियों जैसे बगुले, चील, गिद्ध, कौए आदि की संख्या में उल्लेखनीय कमी आई है, जिसके कारण कृषि, वातावरण और मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। ये पक्षी जुताई के समय मिट्टी में मौजूद कीड़ों को खाकर कृषि में सहायक होते हैं, साथ ही ये मृत जीवों को खाकर वातावरण को स्वच्छ रखने में भी मदद करते हैं। लेकिन कृषि में अत्यधिक कीटनाशकों के प्रयोग तथा जुताई की

पद्धतियों में आए बदलाव के कारण इन पक्षियों की संख्या कम हो रही है, जिससे समस्त कृषि–पारिस्थिकी पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है।

औद्योगीकरण, शहरीकरण एवं बढ़ती जनसंख्या के दबाव के कारण प्रति व्यक्ति भूमि जोत की उपलब्धता निरंतर घटती जा रही है। वर्तमान में भारत के 90 प्रतिशत से अधिक किसान छोटे एवं सीमांत वर्ग में आते हैं। भविष्य में इन किसानों की संख्या और अधिक बढ़ने के कारण कोई भी अकेला कृषि व्यवसाय इनकी खाद्य एवं अन्य आवश्यकताओं की पूर्त्ति नहीं कर पाएगा, क्योंकि इन किसानों की खेती अत्यन्त जटिल एवं जोखिम–भरी होती है। ऐसे में कृषि–आधारित विभिन्न व्यवसायों को समन्वित करने की रणनीति अपनानी पड़ेगी ताकि इन किसानों के सीमित संसाधनों का समुचित उपयोग कर इनके आय एवं आर्थिक विकास की निरंतरता को बनाए रखा जा सके। इस रणनीति में अलग–अलग व्यवसायों की बजाए किसानों को एकीकृत कृषि–प्रणाली आधारित व्यवसाय की तकनीक अथवा मॉडल अपनाना पड़ेगा ताकि उनके लिए अतिरिक्त रोजगार एवं आय के अवसर उपलब्ध हो सकें। यह रणनीति निश्चित तौर पर भारत के कृषि क्षेत्र में दूसरी हरित क्रांति लाने में सहायक सिद्ध होगी तथा पर्यावरण पर हो रहे खतरे को भी कम करने में सफल होगी।

वैश्विक तपन (ग्लोबल वार्मिंग) व कृषि

चन्द्रभानु[1], वीना यादव[2] एवं जे. पी. सिंह[3]

[1] और [3]: कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ–250 110

[2]:कृषि विज्ञान केन्द्र, नगीना, बिजनौर, (उ.प्र.)

तीव्र गति से बढ़ रही ग्लोबल वार्मिंग (वैश्विक तपन) की समस्या एवं इसके कारण दिन–प्रतिदिन गहराता जलवायु संकट आज सम्पूर्ण विश्व एवं मानवता के समक्ष एक चुनौती बनकर खड़ा है जिसे न तो नकारा जा सकता है और न ही मूकदर्शक बनकर देखा जा सकता है। पिछले सौ वर्षों में पृथ्वी के निकट सतह का तापमान लगभग 1^0 सेन्ट्रीग्रेट बढ़ा है और 21वीं सदी के अंत तक विभिन्न अनुमानों के अनुसार, इसमें 1.1 से 6.4^0 सेन्ट्रीग्रेड तक वृद्धि की संभावना है। ग्लोबल वार्मिंग के कारण संभावित भयंकर त्रासदी का निर्णायक बिन्दु बहुत करीब आ चुका है और यदि इससे निजात पाये जाने वाले उपायों को तुरंत प्रभाव से कार्यान्वित नहीं किया गया तो हम विनाश के ऐसे समुद्र में पहुँच जायेगें जिसका कोई किनारा नहीं होगा। ग्लोबल वार्मिंग का मुख्य कारण मनुष्य की विस्फोटक जनसंख्या और उसके अनियंत्रित, तथाकथित विकास की बढ़ती ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने हेतु, जलाये जाने वाले जीवाष्म ईंधन (पेट्रोलियम, कोयला इत्यादि) से निकलने वाली कार्बन–डाई–आक्साइड व अन्य ग्रीन हाऊस गैसें (मीथेन, नाइट्रस आक्साइड एवं क्लोरो–फ्लोरो–कार्बन इत्यादि) हैं। समय रहते यदि इन ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन कम नहीं किया गया तो निकट भविष्य में हमें निम्नलिखित गम्भीर समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है:

1. अंटार्कटिक एवं पर्वतीय हिमखण्डों के पिघलने से समुद्र के जलस्तर में वृद्धि होगी जिसके कारण विश्व के कई द्वीप तथा समुद्र तटीय भूभाग जलमग्न हो जायेगें
2. पर्वतीय हिमखण्डों के अतिशीघ्र पिघलने से कई महत्तवपूर्ण नदियों के सूखने का खतरा
3. मौसम में अचानक बदलाव, असमय सूखा एवं अतिवृष्टि से विश्व के कई भूभागों को भारी तबाही झेलनी पड़ सकती है
4. कई परिस्थितिकीय तंत्रों में भारी उलटफेर
5. उपोष्ड़ कटिबंधीय मरूस्थल के क्षेत्र में और संभावित विस्तार
6. वर्षा की मात्रा और वितरण में बदलाव
7. जैव–विविधता को भारी नुकसान व कई प्रजातियों के विनाश का खतरा (लगभग 20–30 प्रतिशत जन्तुवों और वनस्पतियों की प्रजातियों के विनाश का खतरा)

8. कृषि उत्पादन पर दूरगामी प्रभाव

9. व्यापारित मार्गो में परिवर्तन

10. समुद्र जल की अम्लीयता बढ़ने से कई प्रजातियों के अस्तित्व पर संकट आ सकता है

11. रोगवाहक कीटों (मच्छरों इत्यादि) की संख्या में भारी वृद्धि के कारण मनुश्य और पशुओं की बीमारियों में संभावित वृद्धि

वैि□वक तपन का कारण

पृथ्वी के निचले वातावरण (ट्रोपोस्फियर) में ग्रीन हाऊस गैसों, जैसे कार्बन–डाई–आक्साइड, क्लोरो–फ्लोरो कार्बन, मीथेन एवं नाइट्रस आक्साइड की सांद्रता आज बहुत उच्च स्तर पर पहुँच चुकी है जिससे धरातल से परावर्तित होने वाली ऊष्मा (इन्फ्रा रेड किरणें) इन गैंसों के कारण वातावरण में ही फँस जाती हैं और ट्रोपोस्फियर का तापमान बढ़ा देती है। उपरोक्त ग्रीन हाऊस गैंसों में कार्बन–डाई–आक्साइड एवं क्लोरो–फ्लोरा–कार्बन, गलोबल वार्मिंग के लिये सबसे अधिक जिम्मेदार हैं तथा इनके अत्यधिक उत्सर्जन के लिए हमारा मानव समाज ही उत्तरदायी हैं। क्लोरो–फ्लोरो–कार्बन का उत्सर्जन मुख्य रूप से प्रशीतन उद्योगों (रेफ्रीजरेटर इत्यादि) के माध्यम से होता है। कार्बन–डाई–आक्साइड के अत्यधिक उत्सर्जन के लिए जीवाष्म ईंधन (पेट्रोलियम, कोयला इत्यादि) से चलने वाले हमारे ऊर्जा सैयन्त्रों और विशाल अटोमोबाइल क्षेत्र अधिक जिम्मेदार हैं।

अनियंत्रित विकास और पर्यावरण

मनुश्य की विस्फोटक जनसंख्या एवं उपभोक्तावादियों द्वारा प्रायोजित आधुनिक, असंयमित, अल्पपरिभाषित व तथाकथित विकास के लिये प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध व अन्यायपूर्ण दोहन ही पर्यावरण के विनाश के मुख्य कारण हैं। इस असंतुलित विकास के आधार पर्यावरण के संरक्षण को ही कोई प्राथमिकता नहीं दी गई है, जिसके कारण आज हमारी मृदा की उत्पादकता स्थिर हो गई है, जैव–विविधता, खाद्य एवं स्वास्थ्य सुरक्षा संकट में हैं और ग्लोबल वार्मिंग जैसी विभीषिका संपूर्ण मानवता के अस्तित्व को ही चुनौती दे रही है। ग्लोबल वार्मिंग जैसी भीषण समस्यावों से बचने हेतु सुझाये गये उपाय आज भी सिर्फ चर्चा का विषय अधिक हैं और उन्हें लागू करने में हमारा तथाकथित विकास ही प्रमुख रूप से आड़े आ रहा है। यही कारण है कि विश्व के अधिकतर देश इन सुझावों के प्रति ज्यादा गंभीर नहीं दिख रहे हैं।

ग्लोबल वार्मिंग और भारतीय कृशि

ग्लोबल वार्मिंग के कारण भारत जैसे अत्यधिक जनसंख्या वाले देशों पर बहुत दूरगामी प्रभाव पड़ने की संभावना है। हिमालय के हिमखंडो के पिघलने और उपलब्ध जल के ज्यादा वाष्पोत्सर्जन के कारण उत्तर भारत मे पानी की भारी कमी हो सकती है। दक्षिणी प्रान्तों के अधिकतर क्षेत्रों में तो पहले से ही सिंचाई जल की उपलब्धता कम है और ग्लोबल वार्मिंग के कारण इसके और कम होने की संभावना है। इस प्रकार भारत के कृषि उत्पादन में भारी कमी आने से हमारी खाद्य सुरक्षा पर संकट आ सकता है। तापमान बढ़ने और ठंड के महीनों की कमी होने से

गेंहूँ (जो कि भारत की दूसरी सबसे ज्यादा उगाई जाने वाली फसल है) के उत्पादन में भारी गिरावट होने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है। दूसरी तरफ अचानक बाढ़, सूखा, व सिंचाई जल की कमी से धान के उत्पादन पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

कार्बन–डाई–आक्साइड उत्सर्जन एवं कृशि

मनुश्य की प्रथम आवश्यकता भोजन है तथा इसके उत्पादन में प्रयुक्त विभिन्न कृषि क्रियाओं में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अत्यधिक ऊर्जा का उपयोग होता है। फलस्वरूप कार्बन–डाई–आक्साइड का उत्सर्जन भी अधिक होता है। विलियम रूडिमैन के अनुसार ग्लोबल वार्मिंग की समस्या के बीज तो 8000 वर्ष पहले ही बोये

सारणी 1 : विभिन्न कृशि क्रियाओं में उत्सर्जित होने वाली कार्बन–डाई–आक्साइड की अनुमानित मात्रा

क्रम सं.	कृशि क्रियायें / लागत	कार्बन–डाई–आक्साइड उत्सर्जन (किग्रा. कार्बन तुल्य / हे.)
1.	सामान्य भूपरिष्करण	2–20
2.	मशीन या सीडड्रिल से बुवाई	2–4
3.	जैवनाशी दवाओं का छिड़काव	1–1.4
4.	सिंचाई जल निष्कासन व फुहारा सिंचाई	
	(25 से. मी. पानी)	129̊ 98
	(50 से. मी. पानी)	258̊195
5.	परमपरागत टिलेज	35.3
6.	चीजल (chiesel) टिल (न्यूनतम भूपरिष्करण)	7.9
7.	शून्य कर्षण (जीरो टिलेज)	5.8
8.	कम्बाइन मशीन से कटाई	6–12
9.	उर्वरक उत्पादन	
	(क) नत्रजन	0.9–1.8 कार्बन तुल्य / कि.ग्रा.
	(ख) फास्फोरस	0.1–0.3 कार्बन तुल्य / कि.ग्रा.
	(ग) पोटाश	0.1–0.2 कार्बन तुल्य / कि.ग्रा.
10.	जैवनाशी उत्पादन	
	(क) शाकनाशी	6.3 कार्बन तुल्य / कि.ग्रा.
	(ख) कीटनाशी	5.1 कार्बन तुल्य / कि.ग्रा.
	(ग) फफूँदनाशी	3.9 कार्बन तुल्य / कि.ग्रा.
11.	गेहूँ व धान के भूसा / पुवाल जलाने के उपरान्त उत्सर्जित होने वाली कार्बन–डाई–आक्साइड की अनुमानित मात्रा / हे. (3 टन भूसा या पुवाल प्रति / हे. की उपज के आधार पर)	4380 किग्रा.

श्रोत : आर लाल (2004), आर. पी. सिंह और सहयोगी जन (2008)

जा चुके थे जब कृषि भूमि के लिए जंगलों की अंधाधुंध कटाई व्यापक स्तर पर आरम्भ की गयी थी। मौसम परिवर्तन पर शोध कर रही अंतर्राष्ट्रीय संस्था आई. पी. सी. सी. (2007) के अनुसार सन् 2004 में कुल ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन में कृषि का अनुमानित योगदान 13.5 प्रतिशत रहा है। कुछ अन्य अनुमानों के अनुसार यह मात्रा लगभग 20 प्रतिशत तक हो सकती है। बढ़ती हुई जनसंख्या की भोजन एवं उस पर खर्च हाने वाली ऊर्जा की बढ़ती माँग के कारण भविष्य में इसे और बढ़ने की संभावना है। खेत की तैयारी से लेकर बुवाई, खरपतवार नियंत्रण, दवाओं के छिड़काव, सिंचाई, कटाई एवं मंड़ाई आदि सभी क्रियाओं के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है और कार्बन–डाई–आक्साइड का उत्सर्जन भी खूब होता है (सारणी 1)। इसके अलावा कृषि यंत्रों के निर्माण एवं रख–रखाव, रासायनिक खादों एवं जैव–नाशियों के उत्पादन में भी बहुत सारी ऊर्जा का उपयोग होता है। परंतु यदि उत्पादित भूसे, पुआल आदि को जला दिया जाय (जो कि कम्बाइन द्वारा कटे हुये गेहूं या धान के खेतों में आजकल एक सामान्य प्रक्रिया हो गई है) तो कार्बन–डाई–आक्साइड का उत्सर्जन सम्पूर्ण कृषि क्रियाओं द्वारा उत्सर्जित कार्बन–डाई–आक्साइड का कई गुना हो जाती है। फलस्वरूप पर्यावरण को भी भारी नुकसान होता है।

मीथेन, नाइट्रस आक्साइड उत्सर्जन एवं कृशि

कार्बन डाइआक्साइड की तुलना में मिथेन, नाइट्रस आक्साइड और क्लोरो–फ्लोरों कार्बन की ग्लोबल वार्मिंग क्षमता क्रमशः 25 गुना, 300 गुना और 10,000 गुना अधिक होती है। अतः कार्बन डाइआक्साइड के साथ–साथ आज हमें मिथेन, नाइट्रस आक्साइड और क्लोरों–फ्लोरों कार्बन के उत्सर्जन को कम करने पर भी विशेष ध्यान देना होगा। मिथेन उत्सर्जन प्रमुख रूप से जुगाली करने वाले पशुओं के पेट से, 'रोपण पद्धति' से उगाये जाने वाले धान के खेतों व दलदली क्षेत्रों से होता है। नाइट्रस आक्साइड का उत्सर्जन मुख्य रूप से फसलों में प्रयोग किये गये कृत्रिम नत्रजन उर्वरकों के कारण होता है। इस प्रकार हमारे देश में कुल ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कृषि, पशुपालन वह अन्य संबंधित क्रियाओं का योगदान लगभग 29 प्रतिशत है। इसके अलावा कुल मिथेन व कुल नाइट्रस आक्साइड के उत्सर्जन का क्रमशः 65 प्रतिशत और 90 प्रतिशत भाग भी इन्हीं क्षेत्रों से होता है। कृषि, वानिकी व पशुपालन के क्षेत्रों में उचित प्रबंधन के द्वारा हम इन ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को काफी हद तक कम करके ग्लोबल वार्मिंग की गति को धीमा कर सकते हैं।

उत्पादन की दृष्टि से धान विश्व का दूसरा प्रमुख खाद्यान्न है। परन्तु विश्व की सबसे ज्यादा जनसंख्या चावल पर ही निर्भर रहती है। चावल एक अत्यधिक पानी चाहने वाली फसल है और अभी तक इसके उत्पादन का ज्यादा भाग 'रोपण पद्धति' से ही पैदा होता है। इस पद्धति में धान के खेत में अधिक समय तक पानी भरा रहता है और ऐसे में जलमग्न मिट्टी के अंदर कार्बनिक यौगिकों के विघटन से बनने वाली मीथेन गैस की भारी मात्रा धान के पौधों के माध्यम से वातावरण में उत्सर्जित होती रहती है। वातावरण में उत्सर्जित होने वाली कुल मीथेन का ज्यादातर भाग 'रोपण पद्धति' वाले धान के खेतों व दलदली क्षेत्रों से ही निकलती है।

वै□वक तपन रोकने हेतु कृशि क्रियाओं में सुधार

ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याओं से बचने का मुख्य उपाय तो हमारी जनसंख्या वृद्धि में कमी, उसके द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के संयमित उपयोग व पर्यावरण के प्रति मित्रवत् विकास में ही निहित है। वैश्विक तपन को

रोकने हेतु कृषि, वानिकी एवं उद्यानिकी पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि अभी तक सिर्फ यही क्षेत्र ऐसे हैं जिनके द्वारा हम वातावरण में उपस्थित कार्बन–डाई–आक्साइड की बड़ी मात्रा को सीधे–सीधे अवशोषित करके, वहां पर इसकी सांद्रता काफी हद तक कम कर सकते हैं और कुल ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन में भी कमी कर सकते हैं। कृषि की विभिन्न तकनीको, उर्जा उपयोग संबंधी उनके सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलुओं एवं न्यूनतम ऊर्जा उपयोग एवं कुल ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन को कम करने हेतु उनके उचित समायोजन का वर्णन नीचे दिया जा रहा है:

संरक्षण कृशि (कंजरवेसन एग्रीकल्चर) व मृदा कार्बन स्तर में वृद्धि

पर्यावरण की कार्बन–डाई–आक्साइड कम करने हेतु आज इसकी अधिकाधिक मात्रा को मृदा कार्बन के रूप में संचित करने की आवश्यकता है। मृदा कार्बन का फसलोत्पादन में तो महत्व है ही, साथ साथ पर्यावरण की दृष्टि से इसका महत्व 40 से 70 गुना अधिक होता है। परंपरागत तरीकों से होने वाली भू–परिष्करण में नियमित रूप से अधिकाधिक मशीनों और ऊर्जा का उपयोग होता है और यह माना जाता है कि, मृदा की तैयारी जितनी ज्यादा होगी, उत्पादन उतना ही अधिक होगा। परन्तु अधिक कर्षण क्रियाओं के प्रयोग से मृदा में उपस्थित कार्बन की अधिकाधिक मात्रा कार्बन–डाई–आक्साइड (CO_2) के रूप में मुक्त होकर वातावरण में इसकी मात्रा बढ़ा देती है। भू–परिष्करण क्रियाओं में अप्रत्यक्ष रूप से खर्च होने वाली ऊर्जा में कृषि यंत्रों के निर्माण एवं रखरखाव आदि शामिल हैं। एक अध्ययन के अनुसार, कृषि यंत्रों के निर्माण एवं रखरखाव पर खर्च होने वाली ऊर्जा, एक औसत यंत्रीकृत फार्म पर खर्च होने वाली कुल ऊर्जा की आधी होती है। इसके अलावा अत्यधिक भू–परिष्करण मृदा कटाव को भी बढ़ावा देता है, जिसके प्रबंधन हेतु अतिरिक्त ऊर्जा खर्च होती है। संरक्षण कृषि के अंतर्गत हम कृषि में उपयोग किये जाने वाले संसाधनों (फसल उत्पादन व सुरक्षा हेतु) के न्यूनतम उपयोग के द्वारा ही अधिकतम उत्पादकता प्राप्त करते हैं। इस प्रकार कृषि क्रियाओं पर कम संसाधन खर्च व उर्जा प्रयोग होने से पर्यावरण को होने वाले नुकसान में काफी कमी आती है।

कंजरवेसन टिलेज जैसे मिनिमम् टिलेज (न्यूनतम् भू–परिष्करण) और जीरो टिलेज (शून्य कर्षण) के द्वारा हम फसलोत्पादन पर होने वाले खर्च को कम कर सकते हैं। साथ ही साथ कम पेट्रोल जलने से कार्बन डाईआक्साइड का उत्सर्जन भी कम होता है। शून्य कर्षण के उपरांत बोयी गई फसलों में मृदा नमी का संरक्षण अधिक होता है। सिंचाई के लिये पानी की मात्रा अपेक्षाकृत कम लगती है और मृदा क्षरण भी कम होता है। इसके अलावा कई तरह के खरपतवारों जैसे गेहूं का मामा (फेलेरिस माइनर) के प्रकोप में कमी आती है। शून्य कर्षण के अपनाने से मृदा कार्बन की मात्रा में भी वृद्धि होती है। इस प्रकार कंजरवेसन कर्षण क्रियायें सही मायने में ग्रीन हाउस प्रभाव कम करने में उपयोगी सिद्ध होंगी। आज गेंहूं व धान के अलावा चना, मटर, मसूर, सरसो व अलसी जैसी फसलों का उचित उत्पादन हम शून्य कर्षण के माध्यम से सफलतापूर्वक ले सकते हैं। शाकनाशी रसायनों द्वारा खरपतवार नियंत्रण की उन्नत तकनीकों ने मिनिमम टिलेज के प्रयोग को और आसान बना दिया है। धान व गेहूं की कटाई के उपरांत खेत में पड़े हुए जैव ढ़ेर पर भी आज उन्नत तरीके वाली जीरो–टिल सीड ड्रिल मशीनें अच्छी तरह चल सकती हैं और बुआई का कार्य बिना किसी बाधा के संपन्न कर सकती हैं। इस प्रकार हम इन जैव ढेरों को

जलाये बिना ही अगली फसल ले सकते हैं और मृदा कार्बन की मात्रा में वृद्धि करके वातावरण में उत्सर्जित होने वाली ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा को कम कर सकते हैं।

परन्तु लम्बे समय तक न्यूनतम टिलेज अपनाने के कारण फसलों के कीड़े एवं बीमारियों में वृद्धि, कम मृदा तापमान, सघन फसल प्रबंधन एवं खरपतवार नियंत्रण में बढ़ती कठिनाईयाँ आदि समस्याएं उत्पन्न होती हैं और इनके समाधान हेतु कालान्तर में हमें अधिकाधिक उर्जा का उपयोग करना पड़ सकता है। न्यूनतम टिलेज के कारण ज्यादा परेशानी पैदा करने वाले वार्षिक खरपतवारों के साथ–साथ बहु–वार्षिक खरपतवारों जैसेः दूब घास, काँस आदि की समस्याएँ प्रबल होने लगती हैं और इनके नियंत्रण हेतु हमें अतिरिक्त उर्जा खर्च करनी पड़ती है। अतः न्यूनतम टिलेज का कई वर्षों तक लगातार उपयोग करना उचित नहीं है। न्यूनतम टिलेज एवं परंपरागत टिलेज का चक्रीय (एक के बाद एक) उपयोग करके हम कुल खर्च होने वाली उर्जा में बचत करके वातावरण को होने वाले नुकसान से बचा सकते हैं। इनके अलावा हमें फसल कीटों, रोगकारकों व खरपतवारों के प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण के तरीकों को भी अपनाना होगा जिससे हमें रसायनों का प्रयोग कम से कम करना पड़े और कृषि जैव–विविधता भी उचित स्तर तक बनी रहे।

बहु–सूक्ष्मजीवी कल्चर (पालीमाइक्रोबियल–कल्चर) के उपयोग (जिसमें मृदा उत्पादकता व पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने वाले जैसे राइजोबियम, माइकोराइजा, पादप वृद्धि प्रवर्तक सूक्ष्म जीवों इत्यादि और फसल शत्रु नियंत्रक जैसे कीटनाशी, कवकनाशी, खरपतवारनाशी, सूत्रकृमनाशी सूक्ष्मजीवों) को बढ़ावा देकर संरक्षण कृषि को और अधिक उत्पादक व टिकाऊ बनाया जा सकता है।

सिंचाई जल का समुचित उपयोग एवं संरक्षण

सिंचाई जल के उचित समय पर व उचित विधियों द्वारा उपयोग करके हम इस पर खर्च होने वाली अनावश्यक ऊर्जा को कम कर सकते हैं। बागानों व चौड़ी लाइनों में बोई गयी फसलों में ड्रिप सिंचाई पद्वति को अपनाकर उपलब्ध सिंचाई जल का समुचित उपयोग किया जा सकता है। लेजर लेवलर के प्रयोग से मृदा–ढ़ाल को सुव्यवस्थित करके सिंचाई जल का समुचित उपयोग व संरक्षण किया जा सकता है।

रासायनिक कृशि पर नियंत्रण व उचित तकनीकों का उपयोग

हरित क्रांति के पश्चात लगभग पूरे विश्व में कृषि का रासायनीकरण हो गया है, जिससे आज मृदा उत्पादकता में कमी व स्थिरता के साथ साथ जैवनाशी प्रतिरोधी कीटों, रोग कारकों व खरपतवारों की संख्या में लगातार वृद्धि होती जा रही है। इनका मुख्य कारण मृदा उत्पादकता व फसल शत्रुओं को नियंत्रित करने वाली परिस्थितिकीय व्यवस्था का नष्ट होना है। अतः आज पूरे विश्व स्तर पर कृषि में रसायनों के न्यायोचित उपयोग के लिये व्यापक जन जागरुकता लाने की नितांत आवश्यकता है। आज हमें जैविक उर्वरकों व मृदा उत्पादकता को बढ़ाने वाले प्राकृतिक संसाधनों का व्यापक स्तर पर उपयोग करना होगा। फसलों की कीट व रोग रोधी किस्मों व खरपतवारों को दबाने वाली प्रजातियों के विकास व उपयोग पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके अलावा फसल कीटों, रोगकारकों व खरपतवारों के जैविक नियंत्रण को ब्यापक रूप दिया जाना चाहिए। पूर्व में शाकनाशियों का

प्रयोग ज्यादा मात्रा में तथा फसलों की बुवाई के समय या फिर उगने से पूर्व किया जाता था। इनसे आवश्यक नियंत्रण न मिलने के साथ–साथ पर्यावरण प्रदूषण भी ज्यादा होता था। परन्तु वर्तमान समय में विकसित 'स्मार्ट शाकनाशी' जिनका बहुत ही कम मात्रा में (4–100 ग्राम प्रति हे.) उपयोग होता है, इन समस्याओं को कम करने में प्रभावी पाये गये हैं। इनके अकेले या मिश्रित प्रयोग से कई तरह के खरपतवारों का नियंत्रण होता है तथा पर्यावरण प्रदूषण भी कम होता है। क्लोडिनाफाप, फेनाग्जाप्राप, क्लोरीम्यूरॉन, कारफेन्ट्राजोन, मेटसल्फ्यूरान, आलमिक्स आदि इन्हीं शाकनाशियों के प्रकार हैं। आजकल 'नैनो हरबीसाइड्स' (अतिसूक्ष्म शाकनाशी) के विकास पर भी काम चल रहा है। आशा है कि भविष्य में ये 'नैनो हरबीसाइड्स' अति सूक्ष्म मात्रा में खरपतवारों के सटीक नियंत्रण हेतु प्रयोग में आने लगेंगे। उचित बीज शोधन को अपनाकर हम कई फसल ब्याधियों व कीड़ों का नियंत्रण कम रसायनों के उपयोग से ही कर सकते हैं और वातावरण और फसलोत्पादन को होने वाले नुकसान को कम कर सकते हैं।

कृशि वानिकी व उद्यानिकी को बढ़ावा

उचित कृषि वानिकी व उद्यानिकी पद्धतियों से खेती करके हम वांछित फसलोत्पादन के अतिरिक्त वातावरण की कार्बन–डाई–आक्साइड की भारी मात्रा को वन व फल वृक्षों के माध्यम से संचित कर सकते है। इसके अतरिक्त उपयोगी फर्नीचर व निर्माण कार्य हेतु लकड़ी की उपलब्धता होने से जंगलों के ऊपर उपयोगी लकड़ियों के लिये दबाव कम पड़ेगा। फल वृक्षों के अधिकाधिक रोपण से हमें खाद्य फलों के अलावा ग्रीन हाउस प्रभाव को कम करने में भी मदद मिलेगी। इसके अलावा क्षेत्रीय मौसम को ठण्डा रखने, मृदा क्षरण रोकने व प्रदूषण कम करने में भी मदद मिलेगी। लवणीय व उसर भूमि पर उसर–सहनशील फल व वन वृक्षों के रोपड़ द्वारा इन समस्याग्रस्त क्षेत्रों की कृषि उत्पादकता को उच्च स्तर तक बढ़ाया जा सकता है।

फसल सुरक्षा व खरपतवारों के प्रबंधन पर वि□ीश ध्यान

फसलोत्पादन में खरपतवार ऐसे लुटेरों की तरह हैं, जो फसलों के लिए प्रयोग किये गये पोषक तत्वों व पानी आदि चुरा लेते हैं और सौर प्रकाश व स्थान के लिए भी प्रतिस्पर्धा करते हैं। इसके अलावा खरपतवार फसलों की कई बीमारियों और कीड़ों को फैलाने के लिए भी जिम्मेंदार होते हैं। फलस्वरूप हमारी फसलें कमजोर हो जाती हैं और हमारे द्वारा प्रयोग किये गये संसाधनों (पोषक तत्व, दवाओं, पानी इत्यादि) व उन पर खर्च होने वाली उर्जा का भारी नुकसान होता है। खरपतवार नियंत्रण कृषि की बहुत महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं में से है और इसके फलस्वरूप भी अत्यधिक कार्बन–डाई–आक्साइड प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से वातावरण में उत्सर्जित होती रहती है। खरपतवार नियंत्रण की विभिन्न विधियों के उचित समायोजन तथा आवश्यकतानुरूप प्रभावी प्रयोग करके हम बहुत सारी ऊर्जा की बचत करके वातावरण में उत्सर्जित होने वाली कार्बन–डाई–आक्साइड की मात्रा को कम कर सकते हैं।

मृदा सौरीकरण

मूल्यवान फसलों एवं फसल नर्सरी में खरपतवार व मृदा जनित फसल रोगों के नियंत्रण के लिये यह एक प्रभावी एवं पर्यावरण के लिये मित्रवत विधि है। इस विधि में गर्मियों के दिनों (अप्रैल, मई, जून) में उचित मृदा नमी

युक्त तैयार खेत को पारदर्शी पालीइथाइलीन सीट से ढककर चारों तरफ से सील कर देते हैं। फलस्वरूप अधिकाधिक सौर उर्जा (उष्मा) मिट्टी के अंदर प्रवेश करके उसका तापमान बढ़ा देती है। जबकि रात के समय यही पालीइथाइलीन सीट मिट्टी की उष्मा को बाहर निकलने से रोकती भी है। इस प्रकार मृदा का तापमान 50 ^{o}सेन्ट्रीग्रेड या इससे भी अधिक पहुँच जाता है। लम्बे समय तक उच्च तापमान बने रहने से मृदा में पाये जाने वाले कई प्रजातियों के खरपतवारों के बीज मर जाते हैं। इसके अलावा मृदा जनित रोग फैलाने वाले कई तरह के कवक, निमेटोड तथा जीवाणु भी नष्ट हो जाते हैं। इससे फसलों की वृद्धि और विकास पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है। मृदा सौरीकरण से कार्बन–डाई–आक्साइड का उत्सर्जन नगण्य होता है और पर्यावरण को कोई विशेष नुकसान नहीं पहुंचता है। अतः एकीकृत खरपतवार, बीमारी व कीडों के प्रबन्धन में इस विधि को विशेष स्थान दिया जाना चाहिए।

सस्य क्रियात्मक विधियों द्वारा फसलोत्पादन में वृद्वि तथा खरपतवार, रोग व कीट नियंत्रण

कृषि में शामिल बहुत सी सस्य क्रियायें फासलोत्पादन में वृद्वि के साथ–साथ खरपतवारों, फसल रोग व कीटों के नियंत्रण में भी काफी सहयोग करती हैं, भले ही वह प्रत्यक्ष रूप से हमें दिखाई नहीं पड़ता है। कुछ प्रमुख सस्य क्रियायें निम्न हैं:

फसल चक्र

किसी एक खेत में अलग–अलग वर्षों में अलग–अलग फसलों को हेर फेर करके इस प्रकार उगाना जिससे मृदा की उर्वरता बनी रहे तथा किसी एक तरह के खरपतवारों, बीमारी व कीड़े का निरंतर बढ़ोत्तरी न हो पाये। इसके अलावा मृदा कार्बन की मात्रा बढ़ाने में भी फसल चक्र सहयोगी होता है। मृदा कार्बन की मात्रा बढ़ाने में अरहर, कपास, गन्ना जैसी गहरी जड़ वाली फसलों के साथ फसल चक्र अधिक प्रभावी होगा। फसल चक्र में जैविक–नत्रजन–स्थिरीकरण करने वाली दलहनी फसलों के समावेश से रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग कम करना पड़ेगा और मृदा कार्बन स्तर में भी वृद्धि होगी ।

अंतर्वर्ती फसलें

ऐसी फसलें जो कि पंक्तियों में बोई जाती हैं तथा उनकी पंक्ति से पंक्ति की अधिक दूरी में अंतर्वर्ती फसलों को उगाकर रिक्त पड़े स्थान पर खरपवारों की वृद्धि को रोका जा सकता है। उदाहरण स्वरूप मक्के की फसल के साथ लोबिया लगाने से मक्के में खरपतवारों की वृद्धि को रोकने के साथ–साथ कुल उत्पाकता में भी वृद्धि होती है। अरहर की पक्तियों में ज्वार उगाने से अरहर में उकठा रोग कम लगता है। इसके अलावा कुल उत्पादकता में वृद्धि होने से खाद्यान्न उत्पादन हेतु अतिरिक्त भूमि की आवश्यकता भी कम होती है।

बुवाई तिथि में फेरबदल व पौध सघनता

कुछ फसलों में शीघ्र बुवाई करने और कुछ में देर से करने पर भी खरपतवारों, फसल रोगों व कीटों के नियंत्रण में भी काफी सहयोग मिलता है। कुछ फसलों जैसे गेहूं की फसल को एक सीमा के अंदर घना बोने से खरपवारों

की वृद्धि के लिये कम स्थान मिलता है। एक अध्ययन के अनुसार कतार से कतार की दूरी कम करके, फसल की सघनता बढ़ाकर बुवाई करने से खरपतवारों के प्रभावी नियंत्रण के साथ–साथ उपज में 15 प्रतिशत तक की वृद्धि पाई गई है और यहाँ पर शाकनाशियों का उपयोग भी न्यूनतम मात्रा में करना पड़ता है।

मृदा बिछावन (मल्चिंग) व बिछावन फसलों का प्रयोग

वर्तमान में वातावरण की कार्बन–डाई–आक्साइड को कम करने हेतु मृदा में कार्बन की अधिक से अधिक मात्रा को संरक्षित करने पर ज्यादा जोर दिया जा रहा है। कतार में बोई गयी फसलों में मृदा बिछावन (जीवित फसलें या मृत जैव ढ़ेर) के समुचित प्रयोग से खरपतवार नियंत्रण के साथ–साथ फसलों की मृदा जनित बीमारियों में कमी, मृदा उत्पादकता में वृद्धि तथा वातावरण में कार्बन–डाई–आक्साइड की मात्रा को कम करने में काफी सहयोग मिलता है। मृदा बिछावन के लिए हरी खाद, रूँधने वाली या स्मूदर फसलें, जीवित बिछावन (कुछ अंर्तवर्ती फसलें जैसे लोविया, मूँग इत्यादि), विभिन्न फसलों के अवशिष्ट जैव ढ़ेर (भूसा, पुवाल इत्यादि) व पेपर आदि का प्रयोग किया जाता है।

उपरोक्त सस्य क्रियाओं में हमें अधिक अतिरिक्त ऊर्जा खर्च किये बिना ही अधिक फासलोत्पादन व कई तरह के खरपतवारों, फसल रोग व कीटों का नियंत्रण प्राप्त होता है तथा कार्बन की अधिक से अधिक मात्रा मृदा में संरक्षित करने में मदद मिलती है।

उचित पोशक तत्व प्रबंधन व जल निकास

फसलों में पोषक तत्वों का उचित प्रबंधन करना होगा जिससे उपयोग किये गये नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश आदि पौधों को अधिकाधिक मात्रा में उपलब्ध हो सकें और नाइट्रस आक्साइड के रूप में उत्सर्जन कम से कम हो सके। उचित जल निकास प्रबंधन की व्यवस्था करके मृदा से मिथेन और नाइट्रस आक्साइड का उत्सर्जन कम किया जा सकता है।

खरपतवारों का जैविक नियंत्रण

जैविक नियंत्रण, खरपतवार नियंत्रण का एक प्रकृति प्रदत्त तरीका है जिससे पर्यावरण प्रदूषण के साथ–साथ ग्लोबल वार्मिंग को रोकने में भी मदद मिलेगी। इस विधि में किसी खरपतवार के कुछ विशिष्ट प्राकृतिक शत्रुओं (जैसे परजीवी कीड़े, रोगकारक कवक, जीवाणु आदि) के उपयोग द्वारा इसे नष्ट किया जाता है। विश्व स्तर पर आक्रामक विदेशी खरपतवारों के नियंत्रण हेतु इस विधि का सफलता पूर्वक उपयोग किया जा रहा है। भारत में भी गाजर घास (पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस) के नियंत्रण हेतु, मेक्सिको से आयातित जाइगोग्रामा बाईकोलोराटा नामक भृंग कीट का वृहद् स्तर पर उपयोग हो रहा है। इसके अलावा मिकानिया माइक्रेन्था नामक खरपतवार, जो कि भारत के दक्षिण–पश्चिम घाट एवं असम के जंगलों में काफी आक्रामक हो चुका है, के नियंत्रण हेतु पक्सीनिया स्पेगैजिनी नामक गेरूवा रोग फैलाने वाले कवक को हाल के वर्षों में छोड़ा गया है। अन्य विदेशी आक्रामक खरपतवारों जैसे कि लैण्टाना कैमरा, क्रोमोलिना ओडोरेटा आदि के जैविक नियंत्रण हेतु प्रयास जारी हैं। कुछ प्रमुख विदेशी खरपतवारों जैसे कि गाजर घास, लैन्टाना कैमरा एवं जलकुम्भी (आईकार्निया क्रेसिप्स) आज भारत के

अधिकांश भू–भागों पर खतरनाक स्तर तक फैलकर यहां की उत्पादकता को कम कर रहे हैं और परिस्थितिकीय तंत्र के लिए भी खतरा बन गये हैं। यदि इन खरपतवारों के नियंत्रण हेतु हम यांत्रिक व रासायनिक विधियों का प्रयोग करते हैं तो करोड़ो रूपये खर्च के साथ–साथ कार्बन–डाई–आक्साइड के उर्त्सजन में भारी वृद्धि होगी। अतः इन आक्रमक जैव–आतंकियों के नियंत्रण हेतु अधिकाधिक मात्रा में उनके परजीवी कीड़ों व रोगकारकों को आयात करने की तत्काल आवश्यकता है।

फसल भात्रुवों के वैधानिक नियंत्रण पर वि□ीश ध्यान

आज द्रुत गति से बढ़ रहे अंतर्राष्ट्रीय व्यापारिक आवागमन के कारण सारा संसार एक वैश्विक गांव के रूप में सिमट गया है। इन बढ़ी हुई आवागमन गतिविधियों के कारण बहुत सारे जीवों का उनके उत्पत्ति स्थान से निकलकर नये देशों या क्षेत्रों में पहुंचने की संभावना भी बढ़ गई है। खरपतवार, फसल रोगकारक व कीट इन्हीं जीवों में से कुछ प्रमुख हैं। कालान्तर में इन्हीं फसल शत्रुवों में से कुछ अपने नये निवास स्थान या देश में कब्जा जमाकर एक जैविक आतंकी का रूप ले सकते हैं। उदाहरण स्वरूप गेहूं का मामा (फैलेरिस माइनर), लैण्टाना कैमरा, जलकुम्भी (आईकार्निया क्रेसिप्स) आदि विदेशी उत्पत्ति वाले खरपतवारों ने आज हमारे देश में भारी आतंक मचा रखा है और इनका सम्पूर्ण नियंत्रण असंभव सा हो गया है। गेहूं के लिये 'यू.जी. 99' नामक नये काला गेरूआ (किट्ट) कवक विभेद को हमारे देश में आने का खतरा बना हुआ है। अतः आज हमें अपने प्रमुख व्यापारिक केन्द्रों पर अपनी वैधानिक नियंत्रण व्यवस्था को और चुस्त–दुरूस्त करने की जरूरत है, जिससे कि इस तरह के अवांछित जैविक फैलाव को रोका जा सके। इसके अलावा नये संभावित रोग कारकों व फसल कीड़ों के विभेदों के प्रबंधन हेतु हमें पहले से ही रणनीति बनानी होगी। इस प्रकार भविष्य में इन संभावित विदेशी आक्रामक जीवों के नियंत्रण हेतु हमें अतिरिक्त उर्जा खर्च नहीं करनी पड़ेगी और हमारा पर्यावरण भी सुरक्षित रहेगा।

जैव ईंधन फसलों की खेती को बढ़ावा

ग्रीन हाउस प्रभाव को रोकने के लिये जैव ईंधन (बायो फ्यूल) फसलें जैसे जट्रोपा, मीठा ज्वार व मक्का इत्यादि के उपयोग की काफी संभावनायें हैं। ये फसलें पहले तो वातावरण की कार्बन–डाई–आक्साइड को संचित करके जैव ईंधन बनाने में उपयोग की जायेंगी, तत्पश्चात् इन्हें अकेले या पेट्रोलियम के साथ मिश्रित रूप से जलाया जायेगा और विभिन्न उर्जा कार्यो के लिये उपयोग किया जायेगा। इस प्रकार वातावरण में अतिरिक्त कार्बन–डाई–आक्साइड का उत्सर्जन नहीं होगा। जबकि जीवाष्म ईंधन (पेट्रोल, कोयला इत्यादि) के जलाने से मृदा के गर्भ में संचित कार्बन वातावरण में कार्बन–डाई–आक्साइड की मात्रा को केवल बढ़ाता ही है। जैव ईंधन के लिये कुछ ऐसी फसलों या खरपतवारों का उपयोग ज्यादा लाभकारी होगा जो कि खाद, पानी व दवाओं के प्रयोग के बिना ही अनुपयोगी भूमि (बंजर भूमि, ऊसर भूमि, नदियों का कछार इत्यादि) पर आसानी से उगाये जा सकें व बार–बार उत्पादन देते रहें। इस विषय पर नये सिरे से योजना बनाने की आवश्यकता है।

धान की कृशि पद्धति में सुधार द्वारा मीथेन उत्सर्जन में कमी

वातावरण में उत्सर्जित होने वाली कुल मीथेन का ज्यादातर भाग 'जलभराव रोपण पद्धति' वाले धान के खेतों से ही निकलती है। धान का उत्पादन यदि 'सीधी बुवाई वाली एयरोबिक पद्धति' से करें तो मीथेन का उत्सर्जन

काफी कम हो जाता है। इस विधि में तैयार खेत में धान की सीधी बुवाई करते हैं तथा खेत में उचित हवा व नमी बनाये रखने के लिए इतनी सिंचाई करते हैं कि मिट्टी केवल गीली बनी रहे और पानी का ठहराव न हो। परन्तु इस पद्धति की एक मुख्य समस्या खरपतवारों की है जिनसे धान की फसल को काफी नुकसान होता है। कम मात्रा में प्रयोग होने वाले नए जमाने के स्मार्ट शाकनाशियों पर आधारित 'एकीकृत खरपतवार नियंत्रण' प्रणाली को अपनाकर इस समस्या से निजात पाया जा सकता है तथा एयरोबिक पद्धति से धान उत्पादन को प्रोत्साहित करके, मीथेन उत्सर्जन को काफी कम किया जा सकता है। इसके अलावा कम मीथेन उत्सर्जन करने वाली धान की प्रजातियों के विकाश की संभावनायें भी तलासनी होंगी।

भूसा–पुवाल प्रबंधन द्वारा कार्बन–डाई–आक्साइड उत्सर्जन में कमी

धान तथा गेहूँ के खेतों से विशाल मात्रा में पुवाल तथा भूसा पैदा होता है और इसका प्रबंधन यदि उचित तरीके से न किया जाए तो पर्यावरण को भारी नुकसान होता है। आजकल कम्बाइन द्वारा कटाई के पश्चात् खेत में बचे हुए जैव ढेर को जलाने की परमपरा बढ़ती जा रही है जिसके परिणामस्वरूप भारी मात्रा में ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन होता है। एक अध्ययन के अनुसार पंजाब प्रांत में भारी मात्रा में जैव ढेर (भूसा या पुवाल) जलाने से उत्तर भारत के विशाल वातावरणीय भाग पर धुँध सा बन जाता है और वातावरण की गर्मी में और वृद्धि करता है। जैव ढेर को जलाने से भारी मात्रा में निकला हुआ धुवॉ मनुष्यों तथा पशुओं के स्वास्थ्य के लिये भी घातक होता है। इसके अलावा भारी मात्रा में उपलब्ध संभावित पोषक तत्वों (नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश आदिं) का नुकसान भी होता है। यह प्रचलन पर्यावरण की दृष्टि से बहुत ही घातक है और इस पर पूर्ण प्रतिबंध के साथ–साथ व्यापक जन जागरूकता लाने की भी आवश्यकता है। यदि भूसा तथा पुवाल को एकत्र करके इसका उपयोग जैव खाद बनाने, मशरूम उत्पादन, बगानों व खेतों में बिछावन (मल्च आदि) में प्रयोग करें तो कुल उत्पादकता में वृद्धि होगी और पर्यावरण भी सुरक्षित रहेगा। उचित बिछावन (मल्चिंग) के तरीकों को अपनाकर खेतों तथा बगानों में खरपतवारों के प्रकोप को भी कम किया जा सकता है। जहाँ तक संभव हो सके, रोपण पद्धति से उगाये जाने वाले धान के खेत में उचित तरीके से सड़ी हुई खाद ही मिलायें तथा बिना सड़ा हुआ जैव ढेर (भूसा, पुवाल आदि) बिल्कुल न छोड़ें। इससे ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में काफी कमी आती है।

आज मनुष्य की विस्फोटक जनसंख्या और उपभोक्ता वादियों द्वारा प्रायोजित अनियंत्रित विकास के कारण हमारा पर्यावरण एक ऐसे खतरनाक मोड़ पर पहुंच गया है, जिसका दुष्परिणाम या तो कई रूपों में हमें भोगना पड़ रहा है या भविष्य में संपूर्ण विश्व पर कहर बनकर टूटने वाला है। अतः आज जीवन के हर क्षेत्र में हमें अनावश्यक ऊर्जा खर्च को रोककर एक नियंत्रित, टिकाऊ, व सदाबहार विकास को आगे ले जाना है जिससे हमारे पर्यावरण के साथ–साथ हमारा भी भविष्य सुरक्षित रहे। ग्लोबल वार्मिंग (वैश्विक तपन) व कृषि विषय पर की गयी प्रस्तुत विवेचना इसी दिशा में एक सूक्ष्म प्रयत्न है। आगे हमें जीवन के सभी क्षेत्रों में, संपूर्ण विश्व के लोगों को एक साथ लेकर, ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को न्यूनतम स्तर पर लाने व अपने पर्यावरण को बचाने हेतु भागीरथ प्रयास करना होगा।

❀ ❀ ❀

लघु भूमि धारकों की आजीविका में डेरी पशुओं की भूमिका एवं समन्वयन

आर्जव भार्मा, दिलीप कुमार मण्डल एवं महेश कुमार

गोपशु परियोजना निदेशालय (भा.कृ.अ.प.) ग्रास फार्म रोड, पो. बॉ. सं.–17 मेरठ छावनी – 250001

पशुपालन व डेरी व्यवसाय का भारत के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में एक महत्वपूर्ण योगदान है। आज हम विश्व में सबसे अधिक दुग्ध उत्पादन करते हैं, जो वर्ष 1950–51 में महज 170 लाख टन प्रति वर्ष से 6 गुणा बढ़कर वर्ष 2009–10 में 1125 लाख टन हो गया है। कृषि क्षेत्र का देश के सकल घरेलू उत्पादन में योगदान का लगभग एक चौथाई हिस्सा पशुधन से आता है और इसमें दुग्ध उत्पादन का आर्थिक योगदान रूपये 2,28,809/– करोड़ है जो कि सभी कृषि जिन्सों में सर्वोपरि है (पशुपालन विभाग, भारत सरकार का वार्षिक प्रतिवेदन 2009–10)। पशुपालन बृहत स्तर पर स्वरोजगार उपलब्ध करवाता है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण की ताजा पंचवार्षिक (जुलाई 2004 से जून 2005) रिपोर्ट के अनुसार 6.7 प्रतिशत श्रमिक पशुपालन क्षेत्र में कार्यरत हैं। इतनी महत्व की जिन्स होने के बावजूद भी दुग्ध उत्पादन अभी भी पूर्णतः व्यवस्थित उद्यम नहीं है तथा अधिकतर दुग्ध उत्पादन लघु व सीमांत किसानों या भूमिहीन श्रमिकों द्वारा ही किया जाता है। अधिकतर (80 प्रतिशत) दुग्ध उत्पादकों के पास 2–3 पशु ही होते हैं जिनको वे केवल उपलब्ध संसाधनों से, बिना किसी वैज्ञानिक ज्ञान के पालते हैं। कुल दुग्ध उत्पादन के 65–70 प्रतिशत भाग का विपणन अव्यवस्थित ढंग से दूधियों द्वारा गावों से इकट्ठा कर शहरों में बेचने से होता है।

लगातार बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण मूल्य वर्धित एवं मूल खाद्य पदार्थों की मांग में भी निरन्तर वृद्धि हो रही है। संसाधनों के सीमित होने के कारण खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग की पूर्ति समन्वित खेती प्रणाली द्वारा ही सम्भव हो सकती है। समन्वित खेती प्रणाली अपनाने से किसान उपलब्ध संसाधनों का कुशल प्रबंधन करके अपनी उत्पादकता को अधिक लाभदायक बना सकते हैं।

प्रचलित खेती प्रणाली का डेरी/प□ुपालन से समन्वयन

विभिन्न कृषि उद्यमों को आपस में जोड़ने से एक फसल से प्राप्त मुख्य एवं उपोत्पादों के दूसरे उद्यम में इस्तेमाल हो जाने से उत्पादन खर्च कम हो जाता है जिससे लाभ में वृद्धि होती है। अतः फसल तथा पशुपालन का समाकलन करने से भूमि का बहुविधि उपयोग हो जाने से प्रति इकाई भूमि आय सर्वोत्कृष्ट हो सकती है। फसल–पशु समाकलित प्रणाली हमें खाद्य, रेशे, खाल, खाद, कर्षण, ईंधन आदि तो मिलते ही हैं, इसके अतिरिक्त आपातकाल में एक तरह का आरक्षित धन हैं जो कि आसानी से नकदी के रूप में भी उपलब्ध है। यह प्रणाली किसी भी कारण वश फसल के असफल होने की स्थिति में भी जीविका उपलब्ध करवाकर आर्थिक सुरक्षा प्रदान

करती है। समाकलित खेती प्रणाली में किसान जलवायु, संसाधन, अभिरूचि एवं उत्पाद की मॉग के अनुसार गाय, भैंस, भेड़, बकरी आदि के पालन को कृषि की अन्य विधाओं जैसे बागवानी, रेशम कीट पालन, मत्स्य पालन, कृषि वानिकी आदि से एक या अनेक संयोगों से जोड़ सकते हैं।

समाकलित कृशि प्रणाली का औचित्य

भारत जैसे विकासशील देश में इस तरह की कृषि प्रणाली अपनाना विभिन्न कारणों से उचित है:–

- बढ़ती जनसंख्या व सिमटती भूमि
- शहरीकरण व लोगों की बढ़ती आमदनी
- बदलते आहार स्वरूप के कारण खाद्य पदार्थों की बढ़ती हुई मॉग
- फैलते फसल क्षेत्र व घटते चारागाह के कारण फसल उत्पादन व पशुपालन में बढ़ती प्रतिस्पर्धा
- पर्यावरण पर बढ़ते बोझ को कम करने के लिए
- प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण

समाकलित फसल व प□ुपालन प्रणाली के लाभ

डेरी पशुपालन का फसल खेती प्रणाली से समाकलन करने से अनेक निम्नलिखित फायदे होते हैं:–

कूड़े का उचित प्रबंधन

इस कृषि प्रणाली में एक घटक से उत्पन्न कूढ़ा दूसरे घटक के लिए कच्चे माल का स्रोत बन जाता है, जैसे फसलों के उपोत्पाद या अवशेष पशुओं के चारे में तथा पशुओं का मल–मूत्र फसलों के लिए खाद में प्रयुक्त हो जाता है।

पर्यावरण अनुकूल एवं सस्ती ऊर्जा की उपलब्धता

पशुओं का विभिन्न कृषि क्रियाओं यथा जुताई, पिसाई, भार–वहन आदि के निष्पादन में भी उपयोग किया जा सकता है, इससे भारत जैसा देश विदेशी मुद्रा भी बचा सकेगा।

अतिरिक्त आमदनी

दुग्ध एवं दुग्ध उत्पाद (दही, घी आदि) के अलावा गायों से प्राप्त मूत्र व गोबर का आयुर्वैदिक औषधियों व कीटनाशक के रूप में भी उपयोग कर किसान अपनी आय बढ़ा सकते हैं।

प्राकृतिक संसाधनों का प्रभाव□ाली उपयोग

खेती में समाकलित विधियों का प्रयोग करके हम अपने प्राकृतिक संसाधनों को अति दोहन से बचाकर भावी पीढ़ी के लिए संरक्षित कर सकते हैं।

फसल–प□ु खेती प्रणाली में पोशक तत्वों का चक्र

फसलों और पशुओं के बीच परस्पर निर्भरता स्थापित होने से एक से उत्पन्न व्यर्थ पदार्थ दूसरे के लिए उपयोगी हो जाते हैं। परन्तु यह चक्र विभिन्न घटकों की आवश्यकताओं की आंशिक पूर्ति ही कर सकता है जिस कारण अन्य बाह्य साधनों की, जैसे फसलों के लिए रासायनिक खाद व पशुओं के लिए अतिरिक्त दाना आदि की आवश्यकता हमेशा बनी रहती है। अतः समाकलित फसल–पशु प्रणाली में पोषक तत्व का चक्र एक मुक्त केंद्रीय उपागम है और समाकलित फसल–पशु प्रणाली ऑशिक रूप से परस्पर निर्भर रहते हुए एक दूसरे के पूरक हैं।

गाय एवं अन्य पशुओं से प्राप्त खाद में नाईट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटैशियम प्रचुर मात्रा में होते हैं। ताालिका–1 में विभिन्न पशुओं से प्राप्त होने वाली खादों का विवरण दिया गया है।

तालिका–1 : विभिन्न प्राणियों के मल–मूत्र से प्राप्त खाद का विवरण

प□ु	मल–मूत्र का दैनिक उत्पादन (□ारीर भार का प्रति□ात)	वार्शिक आद्र खाद उत्पादन (कि.ग्रा. प्रति प□ु)	वार्शिक भुश्क खाद उत्पादन (कि.ग्रा. प्रति प□ु)	जल की मात्रा (प्रति□ात)	जैविक पदार्थ की मात्रा (प्रति□ात)	नाईट्रोजन (प्रति□ात)	फास्फोरस (प्रति□ात)
गाय	9.4	6000	1260	79	17	0.5	0.1
भेड़ / बकरी	3.6	800	290	64	–	1.1	0.3
सुअर	5.1	3000	–	–	–	–	–
मुर्गी	6.6	25	6–11	56	26	1.6	1.5
बत्तख	3.88	55–75	24–32	57	26	1	1.4

खाद के पोशक गुणों का परिरक्षण एवं मूल्यवर्धन

कृषि उत्पादन प्रणाली से प्राप्त विभिन्न उत्पादों में विभिन्न घटनाओं–जैसे वाष्पीकरण, दहन, किण्वन आदि के कारण पोषक तत्वों का ह्रास होता रहता है। पोषक तत्वों के ह्रास को प्राप्त उत्पाद एवं अवशेषों के समन्वित प्रबंधन, उचित बायो. डाइजेस्टर के प्रयोग, खाद भण्डारण के तरीकों में बदलाव तथा खादों का उपयुक्त समय व विधि से प्रयोग कर कम किया जा सकता है।

निम्न चित्र में आसान कम्पोस्टिंग विधि द्वारा खाद की गुणवत्ता संवर्धन एवं न्यूनतम पोषक तत्व ह्रास को दर्शाया गया है:–

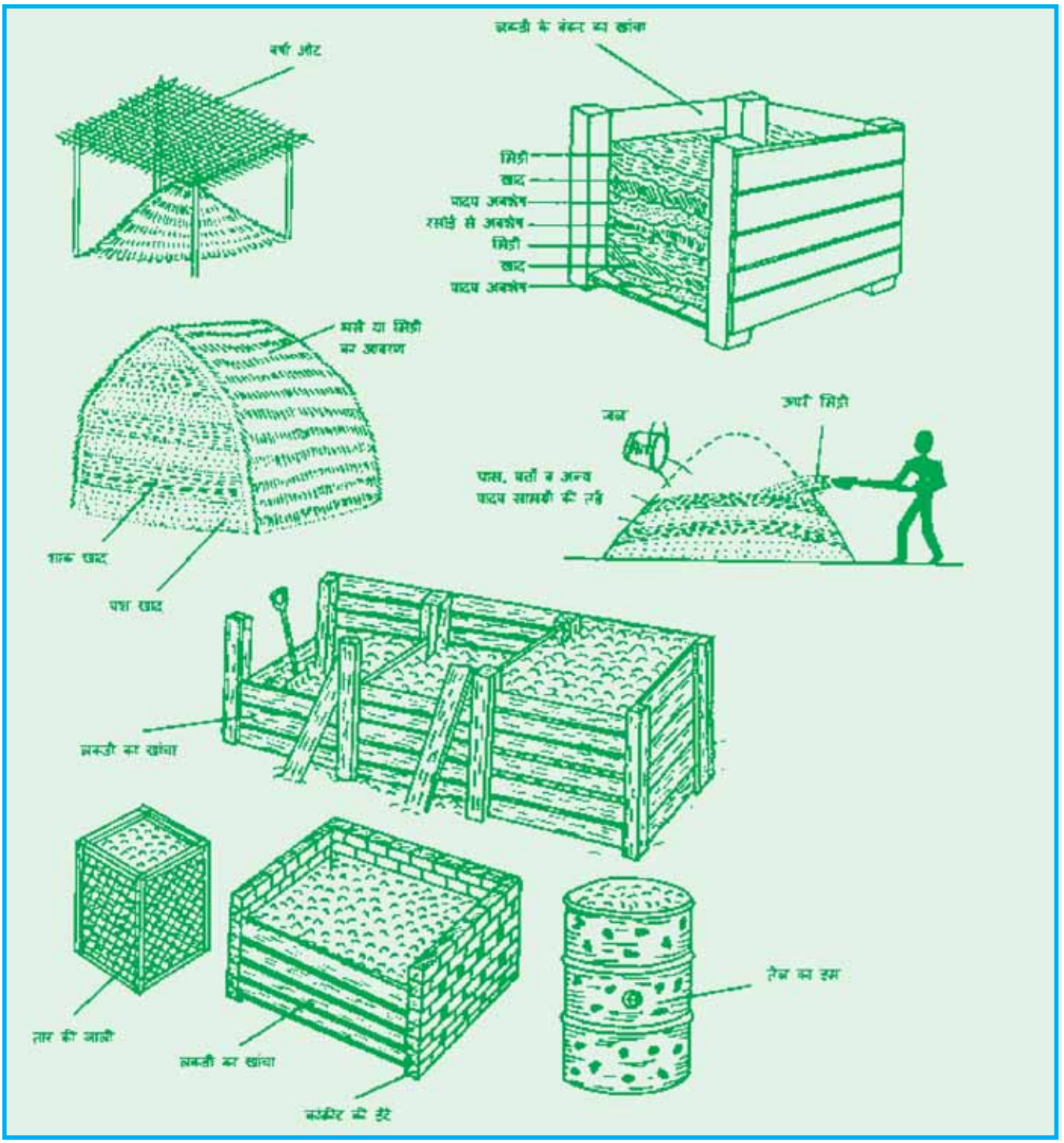

(स्रोत : http://www.fao.org/docrep/field/003/ab467e)

ऊर्जा उत्पादन के लिए पशु गोबर का प्रभावी उपयोग

गाय/भैंस के गोबर को उपले बनाकर केवल ईंधन की तरह प्रयोग करने के बजाय उसका बायो गैस उत्पादन में उपयोग किया जाना चाहिए जिससे कि गॉवों में घरेलू (खाना पकाना, रोशनी करना) एवं विभिन्न उद्यमों (चक्की व पम्प चलाना) के कार्यों के लिए आवश्यक ऊर्जा आसानी से उपलब्ध होने के साथ उत्तम खाद भी मिल जाती

है। गोबर गैस में 55–60 प्रतिशत मिथेन, 30–35 प्रतिशत कार्बन डाईआक्साइड व शेष हाईड्रोजन, नाईट्रोजन आदि अन्य गैसें होती हैं। इसमें से मिथेन को अलग कर संपीडित करके परिवहन जैसे कार्यों में प्रयोग किया जा सकता है। पशुओं के मल–मूत्र को खुला सड़ने देने की बजाय उचित ढंग से गोबर गैस बनाकर प्रयोग करने से ग्रीन हाउस प्रभाव को भी कम किया जा सकता है।

समाकलित फसल–पशु खेती प्रणाली के अनुपालन में बाधाएं

1. फसल अवशेषों की पाचकता और प्रोटीन की मात्रा कम होने के कारण उनका पोषकता मान बहुत कम होता है। विभिन्न भौतिक, रासायनिक एवं जैविक तरीकों से फसल अवशेषों की पाचकता बढ़ायी तो जा सकती है परन्तु ये तरीके महंगे होने के साथ आसानी से उपलब्ध नहीं है जिसके कारण निर्धन, लघु एवं सीमांत किसानों के लिए यह व्यवहारिक नहीं रह जाता है।

2. फसल अवशेष मिटट्री की उर्वरकता को पुनर्जीवित भी करते हैं, अतः पशु खाद्य के रूप में उनका प्रयोग भूमि की उर्वरकता को प्रभावित करता है।

3. पशु की उत्पादकता बनाए रखने के लिए उन्हें दलहनी चारा व दाने से परिपूर्ण आहार भी देना पड़ता है।

4. कृत्रिम गर्भाधान व रोगों से बचाव के लिए टीकाकरण जैसी स्वास्थ्य सुविधाएं हर पशुपालक, विशेषकर दूरदराज के इलाकों में आसानी से उपलब्ध नहीं हैं।

5. पोषक तत्वों के सघन पुर्नचक्रण से उनकी क्षति ज्यादा होती है। खाद एवं उर्वरकों का असंतुलित प्रयोग चारे में उपलब्ध पोषण को भी असंतुलित कर देता है। इसी तरह पशुओं के मल–मूत्र का प्रयोग करते समय सावधानी बरतें कि जल प्रदूषित न हो पाए।

6. किसानों को जैविक खाद की तुलना में रासायनिक खादों का प्रयोग सरल लगता है।

कृषि प्रणाली में फसलों और पशुओं के परस्पर सौहार्दपूर्ण संबंध का मुख्य ध्येय भूमि का जिम्मेवार उपयोग करते हुये इसकी उत्पादन क्षमता को बढ़ाना है ताकि खाद्य सुरक्षा के साथ–साथ पर्यावरण की सुरक्षा भी निश्चित हो सके। अपितु पशुपालन एवं डेरी विभाग द्वारा चलाई जा रही विभिन्न परियोजनाओं, जैसे कि राष्ट्रीय गाय एवं भैंस प्रजनन परियोजना (एन.पी.सी.बी.बी.), किसान आत्महत्या घटना प्रवण जिलों के लिए विशेष पशुधन एवं मत्स्य पैकेज, सघन डेरी विकास कार्यक्रम (आई.डी.डी.पी.), राष्ट्रीय डेरी योजना (एन.डी.पी.), विभिन्न रोग उन्मूलन कार्यक्रम आदि को और सशक्त तरीके से लागू किए जाने की आवश्यकता है ताकि लघु एवं सीमांत किसानों की नस्ल, चारा, प्रजनन, स्वास्थ्य की देखभाल एवं उत्पाद विपणन संबंधी मॉगों को पूरा किया जा सके।

समन्वित कृषि प्रणाली के अतंर्गत पशुधन प्रबंधन

संजीव कुमार कोचेवाड, जगपाल सिंह एवं दिनेश कुमार पाण्डेय

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय मोदीपुरम मेरठ

पशुपालन के बिना टिकाऊ खेती संभव नहीं। प्राचीन काल से हमारे किसान कृषि के साथ–साथ पशुपालन करते आ रहे है। सामन्यत कृषि के साथ किसान एक जोडी बैल कृषि कार्य के लिए और एक से दो पशु अपने परिवार की दूध की पूर्ति के लिए रखा करते थे। पशुपालन से किसानों को कई फायदा थे एक तो वह कृषि के उप–उपज का इस्तेमाल दूध उत्पादन के लिए करता है। दूसरा उसे कृषि के कार्य के लिए बैल मिलते थे और खेती के लिए उपजाऊ खाद प्राप्त होता था। किसान ज्यादातर कृषि उपज खुद ही इस्तेमाल करते थे और घर में ही कृषि उपज व उत्पाद पशु खाद्य में इस्तेमाल होते थे। किसान अपने घर पर ही दलहन फसलों से दाल बनाते थे तिलहन फसलों से तेल निकालते थे और आटा भी घर में ही पीसा जाता था जिसके कारण उसे पशु खाद्य में उपयोग आने वाले दलहन चूरी, विभिन्न खल, और गेहूँ का चोकर आदि प्राप्त होता था। इस प्रकार कृषि का कोई भी उत्पाद एंव उपोत्पाद बेकार नही होता था। अभी परिस्थिति बदल चुकी है। कृषि के कार्य मशीनो द्वारा किये जा रेह है और पशुपालन अब व्यवसाय का रूप ले चुका है। इस बदलते परिस्थिति और स्पर्धा के युग में पशुपालन व्यवसाय का समुचित विकास उन्नतशील पशु जातियों का चयन, उचित देखभाल एवं प्रबन्ध, संतुलित आहार व पर्याप्त चिकित्सा द्वारा किया जा सकता है। पशु पालन में आये खर्च की कुल लागत का लगभग 60–70 प्रतिशत खर्च उनके आहार पर होता है। इसलिए डेयरी व्यवसाय की सफलता दुधारू पशुओं की उत्पादन क्षमता तथा उनके आहार पर आये खर्च पर निर्भर करता है।

संतुलित पशु आहार

संतुलित आहार पशुओं को प्रदान करना पशु उत्पादन का महत्वपूर्ण पहलू है। पशुओं को उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए 24 घण्टों में जो चारा व दाना एक बार या कई बार में खिलाया जाता है उसको आहार कहते है। संतुलित आहार से पशुओं के शरीर को अच्छी तरह से बनाये रखने, शारीरिक विकास, प्रजनन तथा दुग्ध उत्पादन के लिए विभिन्न खाद्य पदार्थो द्वारा सभी आवश्यक पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, ऊर्जा, खनिज एवं विटामिन उचित मात्रा वा सही अनुपात में मिलते है। संतुलित आहार में विभिन्न प्रकार का हरा चारा, अनाज, खल, अनाज के बिमिन्न उत्पाद जैसे चोकर, चावल की पालिश आदि को मिलाकर बनाया हुआ दाना तथा सूखे चारे प्रयोग किये जाते है। अच्छा पशु आहार वह माना जाता है जो सस्ता, पाचक, रूचिकर पेट भरने वाला आसानी से पचाने वाला बदबू तथा फफूंद रहित व अफारा न करने वाला हो। खुराक ऐसी होनी चाहिए जिससे पशु की सारी आवश्यकतायें पूरी हो जाये और इसे वह असानी से दूध व मांस आदि में बदल सके।

सारणी–1. प□ु आहार खाद्य पदार्थो के पोशकता मानक

प□ु आहार	जल (%) (अधिकतम)	कच्ची प्रोटीन (न्यूनतम)	कच्ची वसा (न्यूनतम)	कच्ची रेसा (अधिकतम)	अम्ल अधुलन□ील राख (%)
मूंगफली खली	8.0	40	7.0	8.0	2.0
सोयाबीन खली	8.0	40	7.0	8.0	2.5
कपास खली	8.0	30	6.0	1.50	2.5
रामतिल खली	8.0	35	6.0	1.50	2.5
तिल खली	8.0	40	6.0	10.0	1.5
सरसों खली	8.0	30	5.0	8.0	1.5
गेहूँ का चोकर	12.0	12.13	8.0	12.0	2.5
चावल का कोड़ा	10.0	11.12	15.0	4.0	1.5
नवजात बछड़ों का दाना	10.0	23.26	4.0	7.0	2.5
बढ़ते बछड़ों का दाना	10.0	22.25	4.0	10.0	3.5
दुधारू गायों का दाना	10.0	20.22	2.5	12.0	4.0

सारणी–2. गो प□ुओं का आहार की दैनिक आव□यकता

प□ु	सूखा चारा कि.ग्रा	अदलहनी चारा कि.ग्रा	खाद्य आहार
बछडें एवं ओसर बछडी	2–3	5–20	0.25–0.5
ग्याबिन बछडी			
गर्भावस्था के प्रथम 3 महीने	4–6	20–25	0.5–0.5
गर्भावस्था के द्वितीय 3 महीने	4–6	20–25	1.0–1.5
गर्भावस्था के अंतिम 3 महीने	5–6	20–25	1.5–2.0
ग्याभिन दूध न देने वाली गॉय	6–8	20–25	1.5–2.0
प्रजनन हेतु सांड	6–9	20–25	2.0–2.5
5 लीटर दूध देने वाली गॉय	5–6	20–25	1.5–2.0
10 लीटर दूध देने वाली गॉय	6–8	20–25	3.0–3.5
15 लीटर दूध देने वाली गॉय	6–8	35–40	5.0–6.0

संतुलित पशु आहार बनाने में उपयोग होने वाले अवयवो में मुख्य रूप में मक्का, ज्वार, बाजरा, कोदो, कुटकी रागी एवं गेहूँ की चोकर, धान का कोडा, खली के रूप में मूंगफली, सोयाबीन, सरसों, कपास, रामतिल, अलसी की खली एवं खनिज मिश्रण का उपयोग होता है जो कि सारणी–1 में दर्शाया गया है।

दाना मिश्रण तैयार कराना

किसान भाई सारणी–3 में दिये गये अनुपात में घर पर निम्न प्रकार से दाना मिश्रण तैयार कर सकते हैं तथा पशुओं को खिलाने हेतु प्रयोग में ला सकते हैं।

सारणी–3. आहार अवयव एवं अनुपातिक विवरण

दाना मिश्रण	प्रति□ात
मक्का/जौं/जई/गेहूँ	30 प्रतिशत
मूंगफली की खली/सरसों की खली/गवॉर	30 प्रतिशत
गेहूँ का चोकर/चावल का भूसा	27 प्रतिशत
शीरा/चावल का भूसा तेल निकाला हुआ	10 प्रतिशत
सादा नमक	1 प्रतिशत
खनिज लवण मिश्रण	2 प्रतिशत

घर की खाद्य पूर्ति और साल भर हरा चारा पाने के लिए प्रमुख फसल चक्र

आज के युग में बढते जनसंख्या के कारण जोत कम हो गई है। किसान के पास जो जोत बची है उसी में से उसे उसकी परिवार के खाद्य की पूर्ति करना है। साथ ही साथ इसके दुधारू पशुओं के चारे का भी उत्पादन करना है। इस लिए साल भर अनाज वाली फसलों के साथ चारा वाली फसल लेना बहुत जरूरी है। जमीन के निश्चित टुकडे पर विभिन्न फसलों को एक फसल के पश्चात दूसरी फसलों को इस प्रकार बोना चाहिए कि जमीन किसी भी समय खाली न रहे, उनकी उपजाऊ शक्ति बनी रहे तथा एक फसल की बिमारियॉ दूसरी को न लगे।

प्रमुख फसल चक्र

1. मक्का +अरहर –गेहूँ (मक्का कडवी व गेहूँ भूसा चारा के रूप में)
2. धान–बरसीम–मक्का+लोबिया (बरसीम व मक्का + लोबिया का हरा चारा)
3. धान–जई–ज्वार (धान की पुवाल, जई व ज्वार का हरा चारा व जई दाना)
4. ज्वार–सरसों–मक्का+लोबिया (ज्वार व मक्का+लोबिया, का हरा चारा तथा सरसो की खल)
5. ज्वार–उडद –गेहूँ (ज्वार हरा चारा व गेहूँ भूसा)

उपरोक्त पॉच प्रमुख फसल चक्र अपना कर किसान अपनी घर की अनाज की पूर्ति के साथ ही पशुओं के लिए साल भर चारा उत्पादन कर सकते हैं। सीमांत किसान जिसकी औसत जोत 0.4 हेक्टेयर है अपनी घरेलू खाद्यान्न एंव चारे की दैनिक/वार्षिक मांग के अनुसार उपयुक्त फसल चक्र अपना कर सात सदस्यों वाले परिवार की अनाज की पूर्ति कर सकते है और साथ ही दो भैंस व एक गाय की साल भर की चारा की पूर्ति कर सकता है। इन फसल चक्रों से उसे 112 कुन्तल हरा चारा, 36 कुन्तल सूखा चारा, अनाज 19.6 कुन्तल, दलहन 2.9 कुन्तल एवं तिलहन 1.4 कुन्तल प्राप्त कर सकते हैं। घर की खाद्य पूर्ति के बाद किसान बचा हुआ अनाज बाजार में बेच कर अपनी अन्य सामाजिक एंव पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी कर सकता है।

एकीकृत फसल प्रणाली में बागवानी का समन्वयन– एक लाभदायी विकल्प

पूनम कश्यप, आशीश कुमार प्रूश्टी एवं जे पी सिंह

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदिपुरम, मेरठ– 250 110 (उ. प्र.)

देश की बढ़ती जनसंख्या की फल आपूर्ति एवं पोषण सुरक्षा हेतु एकीकृत फसल प्रणाली में बागवानी का समन्वयन तथा उन्नतशील प्रजातियों का चयन व प्रयोग अति आवश्यक है। मुख्य फसल प्रणाली के साथ–साथ अन्य कृषि आधारित उद्योग अपनाने से भरपूर उपज के साथ अधिक लाभ प्राप्त होता है। बढ़ती आबादी से प्राप्त वर्ज्य पदार्थों, शहरी मलजल, औधोगिक बही स्रावों, सघनीकृत पशु पक्षियों से उत्सर्जित पदार्थों तथा कृषि उपफलों के लगातार बढ़ने से पर्यावरणीय संतुलन बिगड़ सकता है। अतः वैज्ञानिकों ने इन वर्ज्य पदार्थों का उपयोग, उत्पादकता बढ़ाने में उचित समझा है। इसके लिए एक ऐसे कृषि तंत्र का सृजन किया गया है जिसे समन्वित कृषि कहा जाता है। इस कृषि तंत्र में कई उपतंत्र एक साथ क्रियान्वित होते हैं और एक उपतंत्र का वर्ज्य पदार्थ दूसरे उपतंत्र के लिए ऊर्जा निवेश का काम करता है। इसमें सभी संसाधनों का न्यायसंगत उपयोग होता है तथा कम खर्च पर सौहार्द उत्पादन मिलता है। सभी उपतंत्रों का पर्यावरणीय संतुलन बना रहता है, एक ही स्थान पर कई चीजे पैदा की जा सकती है, साथ ही अतिरिक्त रोजगार का सृजन होता है। लंबे शोध कार्यों के आधार पर समन्वित कृषि के कई माडल सामने आए हैं।

देश के कई राज्यों में आर्थिक विकास हेतु बागवानी फल, गिरीदार फल, सब्जियां, मशरूम, सजावटी पौधे, कट फ्लावर, मसाले, रोपण फसलें आदि प्रमुख हैं और कृषि के सकल घरेलू उत्पादन में इसका योगदान 29.5 प्रतिशत है। देश में प्रौद्योगिकी आधारित विकास की आवश्यकता है और बागवानी संभाग की इस संबंध में महत्वपूर्ण भूमिका है। देश की बागवानी में कुपोषण, कम पोषण और भूख से संबंधित भारतीय समस्याओं को हल करने की पर्याप्त क्षमता है। किसानों के बीच बागवानी तकनीकों,फल, सब्जियों आदि की नई किस्मों के विषय में जागरूकता पैदा करने की जरूरत है। एकीकृत फसल प्रणाली में मुख्य फसल के साथ अन्य कृषि आधारित उद्योग जैसे की पशु पालन, बकरी पालन, मधु मक्खी पालन, रेशम कीट पालन, मछ्ली पालन, फल उत्पादन, आदि अपनाया जाता है। ऐसी पद्धति अपनाने से भरपूर उपज के साथ अधिक आय की प्राप्ति की जा सकती है।

एकीकृत फसल प्रणाली में बागवानी का समन्वयन के लाभ

1) भरपूर उत्पादन की प्राप्ति

2) अधिक लाभ की प्राप्ति

3) अधिक स्थिरता

4) संतुलित भोजन की प्राप्ति

5) स्वच्छ पर्यावरण

6) संसाधनों की रीसाइक्लिंग

7) वार्षिक आय की बढ़ोतरी

8) नयी प्रोद्योगिकी का अधिग्रहण

9) ईंधन तथा चारा प्राप्ति

10) जंगलों की कटाई से बचाव

11) रोजगार सृजन में वृद्धि

12) उत्पादन दक्षता

13) फसलोपरांत प्रौद्योगिकीकरण

बागवानी आधारित प्रणालियाँ

1) बागवानी + कृषि उत्पादन

2) बागवानी + मछली उत्पादन

3) बागवानी + रेशम कीट उत्पादन

4) बागवानी + मधुमक्खी उत्पादन

बागवानी तथा कृशि उत्पादन

यह कृषि प्रणाली का एक ऐसा रूप है जिसमे फलदायी वृक्ष मान्य घटक हैं। यह भोजन सह फल प्रणाली के रूप में भी जाना जाता है। इसमें कम अवधि वाली फसलों को फलदार वृक्षों के बीच की जगह में उगाया जाता है। इस तरह की कृषि प्रणाली में बागवानी फसलों और कृषि फसलों को साथ–साथ उगाया जाता है। एग्रो होर्टी सह फसली खेती में यह ध्यान रखा जाता हैं कि उगाई गई फसलों कि खाद, उर्बरक, सिचाई आदि मांग फल वृक्षों कि मांग के अनुरूप हो और उसका फल वृक्षों पर कोई विपरीत प्रभाव न पड़े। दलहन, सब्जियों व कंद फसलें एग्रो होर्टी प्रणाली के लिए सर्बोत्तम फसलें हैं।

चित्र 1 : बागवानी के साथ कृशि उत्पादन (एग्री–हार्टीप्रणाली)

बागवानी तथा मछली पालन

बागवानी और मछली की खेती प्रणाली में, फल, सब्जियां और तालाब के तटबंध पर फूलों की खेती शामिल है। बागवानी फसल उत्पादन के लिए तालाब और आसपास के क्षेत्रों के भीतर और बाहरी डाइक का उपयोग किया

चित्र 2 : बागवानी के साथ मछली पालन

जाता है। पौधों का चयन इस प्रणाली की सफलता के लिए मुख्य मापदंड है। पौधा बौना, मौसमी, सदाबहार, लाभकारी और कम छायादार वाला होना चाहिए। फल फसलों मे केला, पपीता, नींबू, स्ट्रॉबेरी और नारियल का चुनाव किया जा सकता है। सब्जियों में बैंगन, टमाटर, ककड़ी, मिर्च, गाजर, शलगम, पालक, मटर, गोभी, फूलगोभी व भिंडी की खेती कर सकते हैं। तटबंध पर फूल और वृक्षारोपण भी उपयोगी है। गुलाब, चमेली, ग्लाइडोलस, गेंदा और गुलदाउदी आदि लगाया जा सकता है जो खेत की सुंदरता के अतिरिक्त किसान को आय प्रदान करता है। इन सभी फसलों की लघु सिंचाई तालाब के पानी से की जाती है और तालाब के तले की मिट्टी, फसलों के लिए उर्वरक का काम करती है। फसलों से प्राप्त अनुपयोगी पदार्थों को तालाब में पुनःचक्रित किया जाता है। मखाना, कमल, लेम्ना, ओल्फिया, स्पाईरोडेला, एजोला,जलकुंभी और सिंघाडा भी इस प्रणाली में मछलियों के साथ इकठा लगाया जा सकता है। इस प्रणाली में कम से कम 20–25 प्रतिशत अधिक आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

बागवानी तथा रे□ाम कीट पालन

यह एक मेहनत वाला कार्य है जिसे वृद्ध लोग तथा औरते आसानी से कर सकती हैं। तालाबों के बंधों व बगीचे की जमीन पर शहतूत के पेडों की खेती की जाती है। फलदार वृक्ष जैसे मलबेरी (शहतूत) और बेर के वृक्षों को रेशम कीट पालन के लिए भी उपयोग किया जाता है। इन पेड़ों की पत्तियाँ रेशम के कीड़ो के लिए आहार का काम करती हैं। रेशम के कीड़ो के व्यर्थ पदार्थ तथा कुकून परिसंस्करण संयंत्र का व्यर्थ पानी मछ्ली पालन के लिए उर्वरक का काम करता है। रेशम के कीड़े के प्यूपे मछ्ली का आहार हैं। तालाब की गोद शहतूत के पौधों के लिए खाद का काम करती है।

चित्र 3 : रे□ाम कीट पालन

बागवानी तथा मधुमक्खी पालन

तालाबों के तटबन्धों (डाइक) पर फल–वृक्षारोपण कर तथा उनकी छाया में मधुमक्खी के डिबें रख कर मधु पालन की पानी की जरूरतों को मुफ्त में पूर्ति संभव होती हैं और अलग से स्थान की आवश्यकता नहीं पड़ती हैं। मधु (शहद) की प्राप्ति के लिये मधुमक्खियाँ पाली जातीं हैं। यह एक कृषि आधारित उद्योग है। मधुमक्खियां फूलों के रस को शहद में बदल देती हैं और उन्हें अपने छत्तों में जमा करती हैं। जंगलों से मधु एकत्र करने की परंपरा लंबे समय से लुप्त हो रही है। बाजार में शहद और इसके उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण मधुमक्खी पालन अब एक लाभदायक और आकर्षक उद्यम के रूप में स्थापित है। मधुमक्खी पालन के उत्पाद के रूप में शहद और मोम आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

चित्र 4 : मधुमक्खी पालन

मधुमक्खी पालन के लाभ

1) पुष्प रस व पराग का सदुपयोग, आय व स्वरोजगार का सृजन करता है।

2) शुद्ध मधु, रायल जेली, मोम, पराग, मौनी विष का उत्पादन होता है।

3) बगैर अतिरिक्त खाद, बीज, सिंचाई एवं शस्य प्रबन्ध के, मात्र मधुमक्खी के मौन वंश को फसलों के खेतों व मेड़ों पर रखने से फसल, सब्जी एवं फलोद्यान में सवा से डेढ़ गुना उपज में बढ़ोत्तरी होती है।

4) मधुमक्खी उत्पाद जैसे मधु, रायल जेली व पराग के सेवन से मानव स्वस्थ एवं निरोगित होता है। मधु का नियमित सेवन करने से तपेदिक, अस्थमा, कब्जियत, खून की कमी, और रक्तचाप की बीमारी नहीं होती है। रायल जेली का सेवन करने से ट्यूमर नहीं होता है और स्मरण शक्ति व आयु में वृद्धि होती है। मधु मिश्रित पराग का सेवन करने से प्रास्ट्रेटाइटिस की बीमारी नहीं होती है। मौनी विष से गाठिया, बताश व कैंसर की दवायें बनायी जाती हैं तथा बी – थिरैपी से असाध्य रोगों का निदान किया जाता है।

5) मधुमक्खी पालन में कम समय, कम लागत और कम पूंजी निवेश की जरूरत होती है।

6) कम उपज वाले खेत से भी शहद और मधुमक्खी के मोम का उत्पादन किया जा सकता है।

7) मधुमक्खी पालन का पर्यावरण पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मधुमक्खियां कई फूल वाले पौधों के परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इस तरह वे सूर्यमुखी और विभिन्न फलों की उत्पादन मात्रा बढ़ाने में सहायक होती हैं।

8) मधुमक्खी पालन किसी एक व्यक्ति या समूह द्वारा शुरू किया जा सकता है।

9) बाजार में शहद और मोम की भारी मांग है जिससे की अच्छी कमाई की जा सकती है।

फलों एवं सब्जियों का महत्व तथा उत्पाद

शकुन्तला गुप्ता एवं ओमवीर सिंह

कृषि विज्ञान केन्द्र, हस्तिनापुर (मेरठ)

हमारे भोजन को पौष्ट्रिक एवं सन्तुलित बनाने में फल एवं सब्जियों का प्रमुख स्थान है। इनके बिना संतुलित आहार की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। वैज्ञानिकों के अनुसार हमें अपने भोजन को पौष्ट्रिक व संतुलित बनाने हेतु लगभग 285–300 ग्राम सब्जियों का प्रयोग प्रति व्यक्ति प्रति दिन करना चाहिए। फल सब्जियों से हमें ऊर्जा के तीन *स्रोत* शर्करा, प्रोटीन तथा वसा की प्राप्ति होती हैं। इसके अलावा विटामिन, खनिज तथा सूक्ष्म पोषक तत्व भी प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। आहार तीन तरीकों से शरीर को पोषित करता हैं और इन्ही कार्यों के आधार पर आहार तीन श्रेणियों में बाँटा गया है।

भाक्ति वर्धक आहार

जिनमें वसा यानि चिकनाई वाले तथा शर्करीय पदार्थों की अधिकता होती हैं, जो शरीर को उर्जा देने के काम आता हैं, शरीर में एक रस होकर विभिन्न कार्यों के लिए शक्ति प्रदान करता हैं। इसके अन्तर्गत अन्न, कन्द–मूल और सूखे फल आते हैं। अन्न में प्रोटीन, खनिज लवण और कुछ विटामिन भी पाये जाते हैं।

भारीर को बनाने वाले आहार

जिनमें प्रोटीन की अधिकता होती है, जैसे–दूध, मांस, मछली, अंडे, दालें, तिलहन और सूखे मेवे वाले पदार्थ। ये आहार शरीर की मांस पेशियों के बनाने और उनका रख–रखाव तथा मरम्मत करते हैं।

भारीर की रक्षा करने वाले आहार

जिनमें प्रोटीन, विटामिन और खनिज लवण की अधिकता होती हैं। ये दो प्रकार के होते हैं, पहला जिसमें विटामिन, खनिज लवण और उच्च जीवनीय मूल्य की प्रोटीन की अधिकता होती हैं। जैसे दूध, मांस, मछली आदि। दूसरा आहार जिसमें कुछ विटामिन और खनिज लवण की अधिकता होती हैं, जैसे हरी सब्जियाँ और फल।

कार्बोहाइड्रेट

कार्बोहाइड्रेट शरीर में उर्जा का प्रमुख स्रोत हैं। शरीर को प्रत्येक ग्राम शर्करा से 4 कैलोरी ऊर्जा की प्राप्ति होती है। शर्करा की प्राप्ति केला, काजू, आम, बेल, खजूर, आदि फलों से तथा आलू, शकरकंद, घुइयाँ, मटर आदि सब्जियों में स्टार्च के रूप में पायी जाती हैं। यह डेक्सट्रोज (ग्लूकोज) के रूप में पाया जाता है। यह पाचन से संस्थान द्वारा शीघ्र अवशोषित होकर शरीर को शक्ति देती है। शरीरिक परिश्रम करने वालों को इसकी दैनिक आवश्यकता अधिक होती है। शरीर में कार्बोहाइड्रेट की कमी से आन्तरिक अंगो का विकास रूक जाता हैं, तथा स्वास्थ्य गिरने लगता है।

वसा तथा लिपिड़

यहाँ शरीर में संचित आधारीय पदार्थ के रूप में मिलते हैं, जो कोमल अंगों की सुरक्षा करते हैं। वसा के प्रयोग से कार्बोहाइड्रेट शीघ्र पच जाता है। यह शरीर को प्रोटीन और शर्करा की तरह शक्ति देता है। वसा की प्राप्ति कद्दू, तोरई, खरबूजा, करेला आदि सब्जियों के बीज, काजू, बादाम, तथा सूखे मेवे में वसा की मात्रा पायी जाती हैं।

विटामिन

विटामिन शरीर में कुछ अत्यन्त आवश्यक क्रियाओं के लिए जरूरी है। विटामिन दो तरह के होते है। वसा में घुलनशील विटामिन, जैसे विटामिन 'ए', 'डी', 'ई', तथा 'के', एवं जल में घुलनशील विटामिन जैसे– विटामिन 'सी', (एस्कोर्बिक एसिड) थाइमीन, राइबोफ्लेबिन, नियासीन तथा 'बी', कॉम्प्लैक्स समूह के विटामिन फलों व सब्जियों में पाये जाने वाले विटामिन का विवरण इस प्रकार हैं–

विटामिन 'ए'

विटामिन 'ए' का प्रमुख कार्य रतौंधी तथा जिरोफ्थैलिमियाँ नामक रोगों की रोकथाम करता है। विटामिन 'ए' की कमी से आँखों की रोशनी कम होने लगती है। सब्जियों से इसकी पूर्ति कैरोटीन के रूप में होती है। विटामिन 'ए' की प्राप्ति गाजर, शलजम, टमाटर, सलाद, बंदगोभी, चुकन्दर, शकरकन्द, पालक, मेथी, हरी प्याज, चौलाई, सहजन तथा हरी मिर्च आदि में भरपूर होती है। एक स्वस्थ मनुष्य को प्रतिदिन लगभग 2400 से 2500 माइक्रोग्राम प्रतिदिन विटामिन 'ए' की आवश्यकता पड़ती है, जो सारणी संख्या 1 में दिये गये हैं।

विटामिन 'बी'

इसे राइबोफ्लेबिन (बी2), थायमिन (बी1), निकोटिनीक एसिड़ (बी5) तथा पाइरीड़ोक्सिन (बी6), में बांटा जा सकता हैं। विटामिन 'बी' के अभाव से बेरी–बेरी रोग, भूख की कमी, वजन में कमी तथा शारीरिक तापमान में कमी हो जाती है। इन कमियों को दूर करने के लिए अनार, बेल, कैथा, जामुन, अलूचा, सीताफल, केला, पपीता, अनन्नास, बेल, आड़ू, स्ट्राबेरी, चेरी, अंगूर, मटर, टमाटर, प्याज, बन्दगोभी, बैंगन, गाजर, शकरकन्द तथा सेम आदि।

सारणी–1. विभिन्न वर्ग के लिए अनुमोदित फल व सब्जी की मात्रा (ग्राम/दिन)

क्र.सं.	वर्ग	विवरण	फल	पत्ते वाली सब्जियाँ	कंद वाली सब्जियाँ	अन्य सब्जियाँ
1.	पुरूष	हल्का कार्य	30	100	75	75
		मध्यम कार्य	30	125	100	75
		भारी कार्य	30	125	100	100
2.	महिला	हल्का कार्य	30	125	75	75
		मध्यम कार्य	30	125	100	100
		भारी कार्य	30	125	100	75
3.	गर्भवती एवं दुग्ध पान कराने वाली महिला		30	150	–	100–125
4.	किशोर लड़के	13–18 वर्ष	30	100	100	75
	लड़कियाँ	13–18 वर्ष	30	150	75	75

***स्रोत**–भारतीय खाद्यान्नों के पौष्ट्रिक मान लेखक–सी गोपालन बी.वी. रामाशास्त्री, एम.सी. बाल सुब्रमण्यिन, अनुवाद स्नेह तिवारी, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, पेज नं. 40–43*

विटामिन 'सी'

इसे एस्कोर्बिक एसिड भी कहते हैं। यह विटामिन रक्त वर्धक, दातों तथा नरम हड्डियों की रक्षा करता हैं। इस विटामिन की कमी से स्कर्वी रोग, गठिया रोग, मसूड़ों का कमजोर होना, शक्ति का ह्रास, घावों के ठीक होने में विलम्ब, तथा हृदय का बढ़ना, आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। विटामिन 'सी' की प्राप्ति आंवला, अमरूद, पपीता, स्ट्राबेरी, नींबू, संतरा, अनन्नास, आदि फलों में तथा, पत्तागोभी टमाटर, गाजर, हरी मिर्च, करेला, तथा पत्तेदार सब्जियों में अधिक पाया जाता है इसलिए दैनिक आधार में इसका प्रयोग करते रहना आवश्यक हैं। एक सामान्य व्यक्ति को प्रतिदिन लगभग 50 से 60 मिली ग्राम विटामिन 'सी' की आवश्यकता पड़ती हैं।

विटामिन 'डी'

यह शरीर में कैल्शियम तथा फास्फोरस का शोषण करने में सहायक होता हैं। यदि बच्चों को यह विटामिन पर्याप्त रूप में न मिल पाए तो बच्चे रिकेट्स रोग के शिकार बन जाते हैं। इसके अतिरिक्त सर्दी, खाँसी, जुकाम, दमा, निमोनिया, आदि रोग, होने की संभावना रहती है स्त्रियों में इसकी कमी से मृदुलास्थि रोग हो जाता है। इस रोग में रीढ़ की हड्डी झुक जाती हैं। कमर तथा जांघों में दर्द होता हैं। इन रोगों से बचने के लिए बच्चों तथा स्त्रियों को पर्याप्त मात्रा में विटामिन 'डी' लेना चाहिए। धूप में विटामिन 'डी' पाया जाता हैं। इसके अतिरिक्त यह पत्ता गोभी, गाजर तथा हरी सब्जियों में पाया जाता है। शरीर को प्रतिदिन लगभग 400 अन्तर्राष्ट्रीय इकाई विटामिन 'डी' की आवश्यकता पड़ती है।

सारणी–2. फल–सब्जियों में पोशक तत्वों की मात्रा प्रति 100 ग्राम में

क्र0. सं0	फलों / सब्जियों का नाम	प्रोटीन (ग्राम)	खनिज लवण (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	उर्जा (कि0कै0)	कैलि□ायम (मि0ग्राम)	कैरोटीन (माइक्रोग्राम)	विटामिन'सी' (मि0ग्रा0)
1.	आमड़ा	0.7	0.5	4.5	78	36	270	21
2.	आँवला	0.5	0.5	13.7	58	50	9	600
3.	सेव	0.2	0.3	13.4	59	10	–	1
4.	नाशपाती	1.7	1.1	0.8	215	10	–	–
5.	केला पका हुआ	1.2	0.8	27.2	116	17	78	7
6.	रसभरी	1.8	0.8	11.1	53	10	1428	49
7.	कमरख	0.7	0.4	6.1	28	4	–	–
8.	अंगूर (नीली)	0.6	0.9	13.1	58	20	3	1
9.	अंगूर(हरी–पीली)	0.5	0.6	16.5	71	20	–	1
10.	चकोतरा	1.0	0.4	140	45	30	–	–
11.	अमरूद देशी	0.9	0.7	11.2	51	10	–	212
12.	अमरूद पहाड़ी	0.1	0.6	9.0	38	50	–	15
13.	कटहल	1.9	0.9	19.8	88	20	175	7
14.	जामुन	0.7	0.4	14.0	62	15	–	18
15.	करौंदा	0.8	0.3	11.5	55	20	48	–
16.	नीबूं	1.0	0.7	10.9	59	90	15	63
17.	लोकाट	0.6	0.5	9.6	43	30	559	–
18.	आम (पका हुआ)	0.6	0.4	16.9	74	14	2743	16
19.	खरबूजा	0.3	0.4	3.5	47	32	169	26
20.	तरबूजा	0.2	0.3	3.3	16	11	–	1
21.	शहतूत	1.1	0.6	10.3	49	70	57	12
22.	सन्तरा	0.2	0.3	10.9	48	26	1140	30
23.	पपीता (पका)	0.6	0.5	7.2	32	17	666	57
24.	आड़ू	1.2	0.8	10.5	50	15	–	6
25.	फालसा	1.3	1.1	14.7	72	129	419	22
26.	अनान्नास	0.4	0.4	10.8	46	20	0.20	39

क्र0. सं0	फलों / सब्जियों का नाम	प्रोटीन (ग्राम)	खनिज लवण (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	उर्जा (कि0कै0)	कैलि□ायम (मि0ग्राम)	कैरोटीन (माइक्रोग्राम)	विटामिन'सी' (मि0ग्रा0)
27.	आलू बुखारा	0.7	0.4	11.1	52	10	166	5
28.	खिरनी	0.5	0.8	27.7	134	83	495	16
29.	शरीफा	1.6	0.9	23.5	104	17	—	37
30.	टमाटर (पका)	0.9	0.5	3.6	20	48	351	27
31.	बेर	0.8	0.3	17.0	74	4	21	76
पत्तेदार सब्जियाँ								
1.	चौलाई साग	4.0	2.7	6.1	45	397	5.520	99
2.	बथुआ पत्तियाँ	3.7	2.6	2.9	30	150	1740	35
3.	चने की पत्तियाँ	7.0	2.1	14.1	97	340	978	61
4.	गॉठ गोभी	4.7	1.0	7.1	52	43	126	72
5.	बंद गोभी	1.8	0.6	4.6	27	39	1200	124
6.	अरबी (पत्ती)	1.5	2.2	6.8	56	277	10278	12
7.	धनिया का साग	3.3	2.3	.3	44	184	6918	135
8.	सैजन पत्ती साग	6.7	2.3	12.5	92	440	6780	220
9.	मेथी साग	4.4	1.5	6.0	49	395	2340	52
10.	सलाद	2.1	1.2	2.5	21	50	990	10
11.	लाल चौलाई	3.0	3.3	2.0	26	200	—	—
12.	लालपोई	2.8	1.8	4.2	32	200	7440	87
13.	पोदीना	4.8	8.9	5.8	48	200	1620	27
14.	सरसों का साग	4.0	1.6	3.2	34	155	2622	33
15.	मूली की पत्तियाँ	3.8	1.6	2.4	28	265	5295	81
16.	राई की पत्तियाँ	5.1	2.5	5.9	48	370	1380	65
17.	पालक	2.0	1.7	2.9	26	76	5580	28
18.	सोया	6.0	3.2	10.8	72	180	—	—
मूल तथा कन्द वाली सब्जियाँ								
19.	चुकन्दर	1.7	0.8	8.8	43	18	—	10
20.	गाजर	0.9	1.1	10.6	48	80	1890	3

क्र0. सं0	फलों / सब्जियों का नाम	प्रोटीन (ग्राम)	खनिज लवण (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	उर्जा (कि0कै0)	कैलि□ायम (मि0ग्राम)	कैरोटीन (माइक्रोग्राम)	विटामिन'सी' (मि0ग्रा0)
21.	अरबी	3.0	1.7	21.1	97	40	24	–
22.	कमल की जड़	1.7	0.2	11.3	53	21	–	22
23.	करेला	1.5	1.1	7.6	37	64	–	–
24.	प्याज बड़ा	1.2	0.4	11.1	50	47	–	11
25.	प्याज छोटा	1.8	0.6	12.6	59	40	15	2
26.	आलू	1.6	0.6	22.6	97	10	24	17
27.	मूली, गुलाबी	0.6	0.9	6.8	32	50	3	17
28.	मूली सफेद	0.7	0.6	3.4	17	35	3	15
29.	शकरकंदी	1.2	1.0	28.2	120	46	6	24
30.	शलजम	0.5	0.6	6.2	29	30	–	43
अन्य तरकारियाँ								
31.	पेठा	0.4	0.3	1.9	10	30	–	1
32.	घीया, लौकी	0.2	0.5	2.5	12	20	–	–
33.	बैंगन	1.4	0.3	4.0	24	18	74	12
34.	चौड़ी सेम फलियां	4.5	0.8	7.2	48	50	9	12
35.	फूलगोभी	2.6	1.0	4.0	30	33	1.0	56
36.	ग्वार फलियां	3.2	1.4	10.8	60	130	198	49
37.	लोबिया की फलियां	3.5	0.9	8.1	48	72	564	14
38.	ककड़ी	0.4	0.3	2.5	13	10	0	7
39.	सैंजन फली	2.5	2.0	3.7	26	30	110	120
40.	सैंजन फूल	3.6	1.3	7.1	50	51	–	–
41.	फरासबीन	1.7	0.5	4.5	26	50	132	24
42.	घीया तोरई	1.2	0.5	2.9	18	36	120	–
43.	बड़ी लाल मिर्च	1.3	0.7	4.3	24	10	427	137
44.	करौंदा हरा	1.1	0.6	2.9	42	21	–	–
45.	खेकसा	0.6	0.9	6.4	29	27	–	–
46.	भिण्ड़ी	1.9	0.7	6.4	35	66	52	13

क्र0. सं0	फलों / सब्जियों का नाम	प्रोटीन (ग्राम)	खनिज लवण (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	उर्जा (कि0कै0)	कैलि□ायम (मि0ग्राम)	कैरोटीन (माइक्रोग्राम)	विटामिन'सी' (मि0ग्रा0)
47.	बड़हल	1.6	11	13.9	73	67	—	—
48.	हरा आम	0.7	0.4	10.1	44	10	90	3
49.	पपीता हरा	0.7	0.5	5.7	27	28	—	12
50.	परवल	2.0	0.5	2.2	20	30	153	29
51.	मटर हरा	7.2	0.8	15.9	93	20	83	9
52.	कदली फल	1.4	0.5	14.0	64	10	30	24
53.	सीताफल	1.4	0.6	4.6	25	10	906	2
54.	कद्दू के फूल	2.2	1.4	5.8	39	120	—	—
55.	चिचिंड़ा	0.5	0.5	3.3	18	26	96	0
56.	टमाटर	1.9	0.6	3.6	23	20	192	31
57.	विलायती कद्दू	0.5	0.3	3.5	17	10	—	18

स्रोत–भारतीय खाद्यान्नों के पौष्टिक मान (1994) सम्पादक–सी गोपालन बी.वी. रामाशास्त्री, एम.सी.बाल सुब्रमण्यिन, राष्ट्रीय पोषक संस्थान, हैदराबाद।

सारणी–3. वर्श भर मिलने वाले फल तथा सब्जियों की उपलब्धता

क्र.सं.	माह	फल	सब्जियाँ
1.	जनवरी	नींबू, सन्तरा, अमरूद, अनार, आंवला, पपीता, केला, सेब, अंगूर, सीताफल, चीकू, कमरख	टमाटर, मिर्च, फूलगोभी, मटर, गाजर, अदरक, मूली, मेथी
2.	फरवरी	नींबू, सन्तरा, अमरूद, केला, पपीता, सेब, अनार, चीकू, आंवला, अंगूर	टमाटर, मिर्च, फूलगोभी, गाजर,
3.	मार्च	सन्तरा, अंगूर, आंवला, केला, सेब, पपीता, अनार	आलू, मिर्च, प्याज
4.	अप्रैल	बेल, खिरनी, कटहल	आलू, प्याज, लौकी
5.	मई	बेल, खिरनी, चीकू, लीची, अनन्नास, शहतूत, बेर, कटहल, खरबूज, तरबूज, कच्चा आम	भिण्डी, लौकी, सेम, चिचिंडा, करेला, आलू
6.	जून	आम, अनन्नास, खिरनी, कटहल, लीची, चीकू, फलसा, शहतूत, रसभरी, बेर	भिण्डी लौकी, खीरा, तोरी, टिण्डा, पेठा
7.	जुलाई	आम, अनन्नास, फालसा, करौंदा, नींबू, अनार, जामुन	खीरा, छप्पन कद्दू, बैंगन
8.	अगस्त	आम, नींबू, जामुन, करौंदा, अनार	अदरक, सहजन
9.	सितम्बर	सेब	—
10.	अक्टूबर	सेब	फूल गोभी
11.	नवम्बर	केला, सेब, अमरूद, सीताफल	गाजर, मिर्च, टमाटर, मेथी
12.	दिसम्बर	नींबू, सन्तरा, अमरूद, अनार, पपीता, केला, सेब	अदरक, गाजर, मटर, टमाटर, गांठ गोभी, शहतूत, मेथी

सारणी–4. फल तथा सब्जियों से तैयार होने वाले विभिन्न उत्पाद

क्र.सं.	फल / सब्जियाँ	उत्पाद
फल		
1.	आम	जूस, नेक्टर, स्क्वैश, जेम, टॉफी, चटनी, डिब्बा बंद आम, अमचूर, अचार
2.	अमरूद	जैली, चीज़, टॉफी, नेक्टर, डिब्बाबंद अमरूद, स्क्वैश
3.	आंवला	मुरब्बा, कैण्डी, जैम, सिरप, अचार, चटनी, त्रिफला, च्यवनप्राश
4.	पपीता	जैम, केण्डी, नेक्टर, अचार, सॉस, डिब्बाबंद पपीता, पैपिन
5.	करौंदा	अचार जैली, कैण्डी, मुरब्बा
6.	बेर	डिब्बाबंद, मुरब्बा
7.	बेल	मुरब्बा, नेक्टर, स्क्वैश, डिब्बाबंद बेल,
8.	साइट्रस फ्रूटस	जूस, अचार, मार्मेलाट, स्क्वैश, कैण्डी, शर्बत
9.	जामुन	सिरका, शर्बत, स्क्वैश
10.	स्ट्राबेरी	जैम जूस, स्क्वैश, डिब्बाबंद स्ट्राबेरी
सब्जियाँ		
1.	टमाटर	सॉस, कैचप, अचार, प्यूरी, पेस्ट, सूप, काकटेल
2.	फूल गोभी	अचार, डिब्बाबद फूलगोभी
3.	गाजर	मुरब्बा, जैम, कैण्डी, शर्बत, अचार, डिब्बाबंद गाजर
4.	बैंगन	टचार
5.	मटर	डिब्बाबंद मटर, अचार, सूखे अचार
6.	मशरूम	अचार, सॉस, डिब्बाबंद मशरूम
7.	आलू	चिप्स, पापड़, स्टार्च
8.	खरबूज	जूस, स्क्वैश
9.	तरबूज	जूस, स्क्वैश, मुरब्बा
10.	अदरक	अचार, चिली सॉस
11.	हरी मिर्च	अचार, चिली सॉस
12.	मूली	अचार
13.	करेला	अचार, सूखा करेला
14.	प्याज	अचार, सूखा प्याज, प्याज पाउडर
15.	लहसुन	अचार, लहसुन पाउडर
16.	मेथी	सूखा मेथी

विटामिन 'ई'

इसकी कमी से नपुंसकता आ जाती है। विटामिन ई की प्राप्ति फूल–गोभी, गाजर तथा पत्ते वाली सब्जियों से होती है। शरीर को इसकी प्रतिदिन 30 अर्न्तराष्ट्रीय इकाई की आवश्यकता पड़ती हैं।

विटामिन 'के'

यह विशेषकर आलू, टमाटर, पालक, फूल गोभी, आदि में पाया जाता है। इसकी कमी से रक्त स्त्राव तेजी से होने लगता है।

फोलिक अम्ल

यह पाचन क्रिया को सुचारू रूप से कार्य करने में सहायक होता हैं, तथा शरीर में रक्त की कमी दूर करता हैं। इसकी प्राप्ति छुआरे तथा काली बेरी में पाया जाता है। शरीर को इसकी प्रतिदिन 0.4 ग्राम मिली–ग्राम की आवश्यकता पड़ती है।

पैन्टोथैनिक अम्ल

यह शरीर में कार्बोहाइड्रेट, वसा तथा प्रोटीन के उपयोग के लिए आवश्यक है। इसकी प्राप्ति संतरे से होती हैं। शरीर को इसकी प्रतिदिन 10 मिलीग्राम आवश्यकता पड़ती है।

बायोटीन

भोजन को शक्ति के रूप में बदलने तथा शरीर की रचना सम्बन्धी कार्यो के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसकी प्राप्ति केला तथा स्ट्राबेरी में अधिक पायी जाती हैं। शरीर को प्रतिदिन 0.3 मिलीग्राम बायोटीन की आवश्यकता पड़ती है।

सब्जियाँ तथा फल हमारे पौष्टिक भोजन का एक अभिन्न अंग है और इनके नियमित सेवन से शरीर सुचारू रूप से कार्य करता है। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद की एक रिपोर्ट के अनुसार एक संतुलित आहार में अन्य खाद्य पदार्थों के अतिरिक्त 75 से 125 ग्राम पत्तेदार हरी सब्जियाँ, 85 ग्राम अन्य सब्जियाँ व 85 ग्राम कन्द मूल वाली सब्जियाँ तथा 85 ग्राम फल शामिल होने चाहिए। प्रकृति ने हमारे जीवन के लिए बहुमूल्य फल और सब्जियाँ दिये हैं जिसका परिरक्षण करके तथा सही प्रकार से प्रयोग कर हम निरोगी जीवन जी सकते हैं।

मीठे पानी में मछली पालन

आ□ीश कुमार प्रूश्टि, जगपाल सिंह, पूनम कश्यप, दिनेश कुमार पाण्डेय, संजीव कुमार कोचेवाड़

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ –250 110

देश की कुल जनसंख्या का 64 प्रतिशत भाग आंशिक या पूर्ण रूपेण मांसाहारी हैं। मांस उत्पादन का मुख्य स्रोत पशुधन हैं जिसकी संख्या लगातार घट रही हैं और मांस की मांग बढ़ने से मांस के बाजार भाव भी आसमान छूं रहे हैं। भविष्य की मांग को ध्यान में रखते हुये हमें मांस के अतिरिक्त स्रोत की संभाबना तलासनी होगी। मुर्गी एवं सूअर पालन के बाद मांस की उत्तम क्वालिटी व मात्रा की पूर्ति की अपार संभावनायें मीठा जल मछली पालन क्षेत्र में हैं, जिसका दोहन करके न केवल उत्तम गुणवत्ता का मांस उपलब्ध कराया जा सकता हैं बल्कि निचले जल भराव वाले व नहरी क्षेत्रों से मछली पालन कर छोटे व लघु कृषकों के लिए आय के नये साधन जुटाने में मदद मिलेगी। विश्व के मत्स्योत्पादक देशों में भारत का छठा स्थान है। मधुर जल मछली मत्स्योत्पादक देशों में चीन के बाद भारत दूसरे स्थान पर है। हमारे देश में अथाह जल संसाधन हैं। देश में पोखर एवं तालाब 23 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में है। देश में अंतःस्थलीय मत्स्य उत्पादन का लगभग 70 प्रतिशत भाग कार्प मछलियों से आता है। लोगों की पसंद, क्षेत्रीय बाजार की मांग, आर्थिक महत्व, स्वाद, बृद्धि दर, रोगरोधिता, उत्पादन क्षमता इत्यादि के आधार पर कार्प मछलियों की अनेक प्रजातियों का पालन किया जाता है। भारतीय कार्प मछली पालन के अंतर्गत मुख्य रूप से तीन बड़ी कार्प मछलियों–भाकुर, रोहू तथा नैन को चुना जाता है। इन तीन भारतीय मूल की कार्प मछलियों के साथ तीन विदेशी मूल की मछलियों ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प एवं कामन कार्प भी पाली जाती है। वर्तमान में मत्स्य उत्पादन प्रति हेक्टर लगभग 1–2 टन/वर्ष उत्पादन मिल रहा है। भारत के अथाह जल संसाधनों को देखते हुए नवीन वैज्ञानिक पद्धतियों द्वारा देश में मधुर जल मछली पालन में आशातीत वृद्धि होने की संभावनाये है। अगर वैज्ञानिक पद्धती से ध्यान दिया जाये एवं मछली पालन ठीक ढंग से किया जाए तो इससे मछली उत्पादन में वृद्धि होगी। परिणाम स्वरूप मछली पालन से जुड़े हुये लोगों के रोजगार के अवसर बढ़ेंगे तथा पोषणयुक्त आहार के रूप में देश की खाद्य सुरक्षा भी बढ़ेगी एवं उनकी जीवन शैली तथा जीवन यापन स्तर में वृद्धि होगी।

उन्नत मछ्ली पालन के तकनीकी पहलू

मछली पालन के उपयोगी पहलू इस प्रकार हैं :–

1. मत्स्य पालन के लिए स्थल चयन एवं तालाब का निर्माण
2. मछली पालन में मिट्टी व पानी का गुणबता का महत्व तथा उपाय
3. तालाब से जलीय पौधों तथा परभक्षी व अनचाही मछलियों उन्मूलन एवं जलीय कीटों का नियंत्रण

4. तालाबों की उत्पादकता बढाने के लिये कार्बनिक एवं अकार्बनिक उर्वरकों तथा चूने का प्रयोग

5. मत्स्य बीज संचयन

6. पूरक आहार की व्यवस्था

7. समन्वित मछली पालन

मछली पालन के लिए तालाब निर्माण हेतू स्थान का चयन करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आव□यक है

- स्थान प्राकृतिक रूप से गहरा हो।
- जिसकी जल धारण क्षमता अधिक हो।
- जिसमें दी जाने वाली खाद व उर्वरकों का रिसाव ना हो।
- मिट्टी न तो अधिक अम्लीय हो और न क्षारीय (पी० एच० 6 से 8 के बीच हों)।
- जहां हर मौसम में पहुँचने का मार्ग उपलब्ध हो।
- जिसके पास कोई सदाबहार जलस्त्रोत हो।
- जिसकी मिट्टी बाँध बनाने में उपयुक्त हो।

चित्र 1. मछली पालन हेतु उपयोगी तालाब

तालाब निर्माण

- आयताकार तालाब निर्माण का सुझाव तालाब में जाल चला कर मछली पकड़ने की सुविधाजनक स्थिति के लिए है अन्यथा भौगोलिक स्थिति के अनुसार उपलब्ध स्थान पर तालाब आयताकार, वर्गाकार वृत्ताकार अथवा त्रिकोणीय, जिस किसी स्वरूप में निमिर्त किया जा सकता है।
- बाँध इतना मजबूत होना चाहिए कि वह तालाब के पानी का दबाब सहन कर सके और जिसमें पानी का रिसाव कम से कम हो।

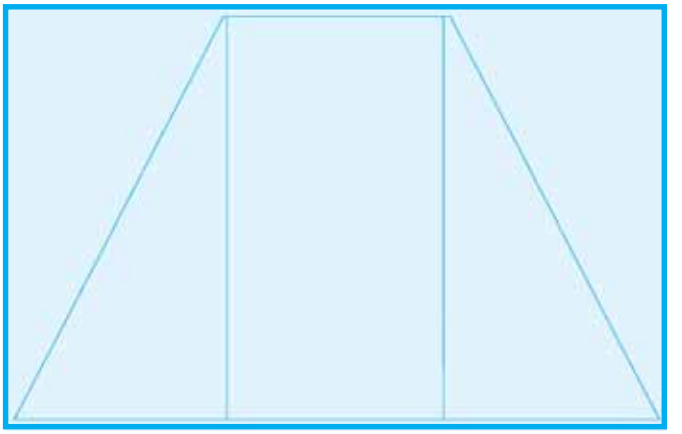

चित्र 2. तालाब के बांध की उचित ढलान

- तालाब के बंधे में दोनों ओर के ढलानों में आधार व ऊंचाई का अनुपात साधारणतया 2:1 या 1.5:1 होना उपयुक्त है।
- तालाब निर्माण में मत्स्य तालाब की गहराई एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण पहलू है। स्पॉन से फ्राई संवर्धन हेतु नर्सरी तालाब (0.02–0.05 हेक्टेयर), फ्राई से अंगुलिका संबर्धन हेतु अंगुलिका संबर्धन तालाब (0.05–0.1 हेक्टेयर) एवं बड़ी मछलियों का पालने के लिए संचयन तालाब (1.0–2.5 हेक्टेयर) निर्मित किए जाते है।
- नर्सरी तालाबों में पानी की गहराई 0.5–1.0 मी., अंगुलिका संबर्धन तालाब में 1.0–1.5 मी. और बड़ी मछली पालन तालाब में 2–3 मीटर होना आवश्यक होता है।

मछली पालन में मिट्टी व पानी की गुणबता का महत्व तथा उपाय

मछली की अधिक पैदावार के लिए तालाब की मिट्टी व पानी का उपयुक्त होना परम आवश्यक है। तालाब तली की मिट्टी में उचित गुणवत्ता (सारणी–1) होना जरूरी है। ऐसी मिट्टी जिसमें रेत 40 प्रतिशत तक, सिल्ट 30 प्रतिशत

सारणी–1. मछली की अधिक पैदावार के लिए तालाब की मिट्टी के उपयुक्त मानक

मिट्टी के मानक	निर्धारित सीमा
श्रंग	भूरा अथवा काला
जल धारण क्षमता	> 4.0 %
रेत की मात्रा	> 40.0
सिल्ट की मात्रा	30.0 %
क्ले की मात्रा	30.0 %
पी. एच.	6–8
जैविक कार्बन	> 0.5 %
नाइट्रोजन	30–50 मि.ग्रा. / 100 ग्रा.
फास्फोरस	6–16 मि.ग्रा. /100 ग्रा.
पोटेशियम	30–50 मि.ग्रा. /100 ग्रा.

तथा क्ले 30 प्रतिशत हो एवं पी–एच 6.5 से 8.5 हो, मत्स्य पालन हेतु तालाब निर्माण के लिए उपयुक्त होती है। पानी की गुणबता ऐसा होना चाइये जो की मछलियों की वृद्धि, तंदुरुस्ती एवं जिवितता हेतु सौहार्दपूर्ण हो (सारणी–2)।

सारणी–2. मछली की अधिक पैदावार के लिए तालाब के पानी हेतु उपयुक्त मानक

पानी के मानक	निर्धारित सीमा
श्रंग	हल्का भूरा
जलीय तापमान	28–32^0 सेल्सियस
पारदर्शिता	30–40 से.मी.
टर्बिडिटी	< 30 पी.पी.एम.
घुलित आक्सीजन	5–10 पी.पी.एम.
पी–एच (अम्लीयता ब क्षारीयता)	7–9
घुलित मुक्त कार्बन डाइआक्साइड	< 3 पी.पी.एम.
कठोरता	30–180 पी.पी.एम.
कुल क्षारीयता	50–300 पी.पी.एम.
नाईट्राइट नाइट्रोजन	0–0.5 पी.पी.एम.
नाइट्रेट नाइट्रोजन	0.1 –2.0 पी.पी.एम.
बी.ओ.डी.	< 10 पी.पी.एम.
सी.ओ.डी.	< 50 पी.पी.एम.

जलीय पौधों तथा परभक्षी व अनचाही मछलियों एवं कीटों का उन्मूलन

जलीय पौधों का उन्मूलन

- हाथ से सफाई
- यांत्रिक विधि द्वारा पौधों का उन्मूलन
- रसायनिक विधि – बाजार में बहुत से रसायन वनस्पतियों के नियंत्रण के लिए उपलब्ध हैं, जिनका प्रयोग निम्न तालिका अनुसार किया जा सकता है

सारणी–3. वनस्पतियों के उन्मूलन के लिए रसायनों के प्रयोग दर

रसायन	प्रयोग दर
सोडियम आरसेनाईट	5–6 पी.पी.एम (50 –60 कि०ग्रा० प्रति हेक्टेयर)
अमोनिया	225 कि०ग्रा० प्रति हेक्टेयर
डायक्लोवेनील	15 कि०ग्रा० प्रति हेक्टेयर
सिमाजीन	5 पी.पी.एम (50 कि०ग्रा० प्रति हेक्टेयर)
पैराक्आट	2 पी.पी.एम (20 कि०ग्रा० प्रति हेक्टेयर)

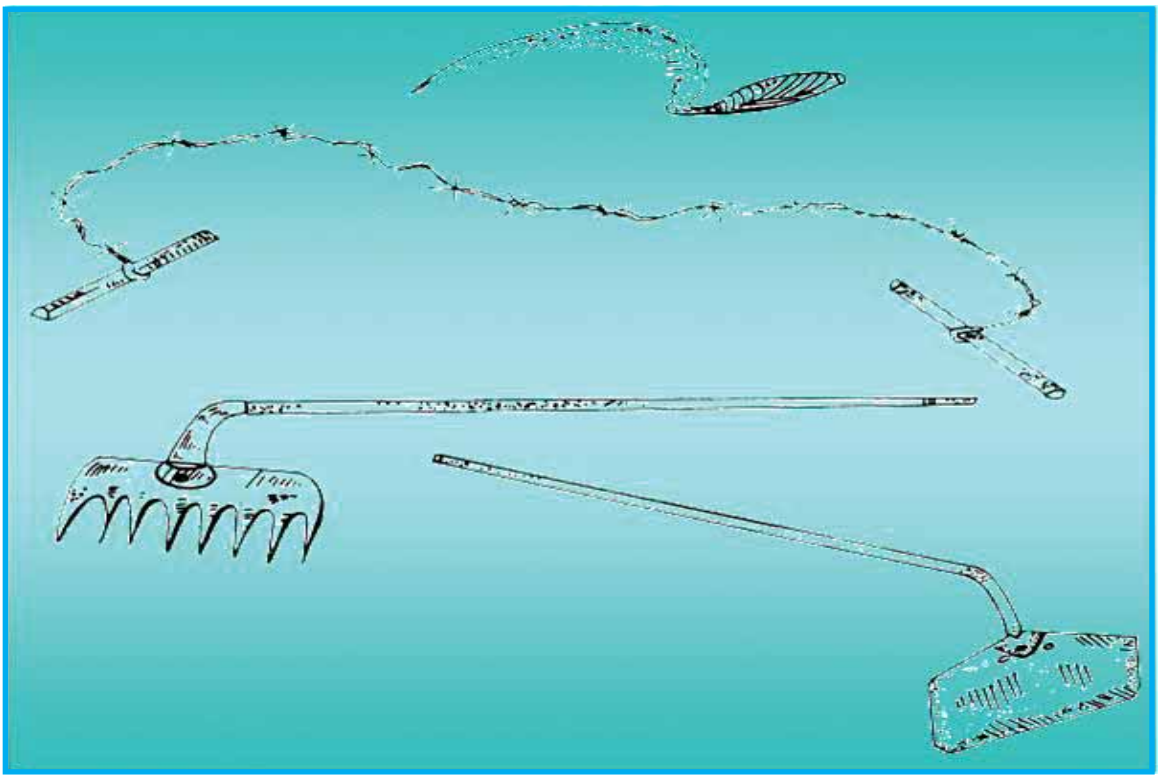

चित्र 3. यांत्रिक विधि से पौधों की सफाई

जीवों द्वारा वनस्पति उन्मूलन

ग्रासकार्प मछली जलीय वनस्पति को खाती है व इसके उन्मूलन में सहायता देते है।

बेकार मछलियों का उन्मूलन

वैज्ञानिक तरीके से मछ्ली पालन प्रारम्भ करने से पूर्व जलक्षेत्र से बेकार मछलियों का उन्मूलन अत्यावश्यक है जो कि निम्न विधियों को अपनाकर किया जा सकता है :

चित्र 4. तालाब सूखा कर पौधों की सफाई

चित्र 5. जाल चला कर पौधों की सफाई

- तालाब सूखाकर
- जाल द्वारा सफाई

विश के प्रयोग दर

1– वनस्पति मूल के विष – महुआ की खली (4–5 % सपोनिन), 250–300 पी.पी.एम. डेरीस रूट पाउडर (5% रोटेनोन), 15 –20 पी.पी.एम.

2– रसायनिक विष (ब्लीचिंग पाउडर– 30% क्लोरीन युक्त, 300–500 कि०ग्रा० प्रति हेक्टेयर–मी)

जलीय कीटों का नियंत्रण

जलीय कीटों के नियंत्रण हेतु अनेकों विधियाँ प्रचलित है जिनमें से कुछ प्रमुख निम्नवत है–

1) जाल प्रयोग

2) 56 कि०ग्रा० कोई भी सस्ता तेल एवं 18 कि०ग्रा० कपड़े धोने के साबुन अथवा 560 मी.ली. टीपोल–300 का घोल प्रति हेक्टेयर (मत्स्य बीज संचय से पहले)

3) 56 ली. डीजल एवं 18 कि०ग्रा० कपड़े धोने के साबुन का घोल प्रति हेक्टेयर

4) तारपीन का तेल 75 लीटर प्रति हेक्टेयर

5) मिट्टी का तेल 100 लीटर प्रति हेक्टेयर

6) जैविक नियंत्रणः कुछ देशी मछलियाँ जैसे एपलोचेइलस पंचाक्स, एपलोचेइलस लिनिएटस एवं विदेशी प्रजातियाँ जैसे गेम्बुसिया एफीनिस, कारसियस अराटस आदि के द्वारा नियंत्रण।

तालाबों की उत्पादकता बढ़ाने के लिये कार्बनिक एवं अकार्बनिक उर्वरकों तथा चूने का प्रयोग

तालाबों की उत्पादकता बढाने के लिये कार्बनिक खाद एवं रासायनिक खाद का प्रयोग किया जाता हैं। नियमित देखभाल के लिए एवं जलीय उत्पादकता हेतु 150–200 कि०ग्रा०/हेक्टेयर चूने का प्रयोग किया जाना चाहिये।

सारणी–4. कार्बनिक व रासायनिक खादों का प्रयोग दर

कार्बनिक खाद एवं रासायनिक उर्वरक	मात्रा (कि०ग्रा०/हे०/वर्श)	किस्त
गोबर की खाद	10000–12000	20 % प्राथमिक बाकी समान मासिक किस्तों में
यूरिया	200	समान मासिक किस्तों में
सिंगिल सुपर फास्फेट	250	समान मासिक किस्तों में
म्यूरेट ऑफ पोटाश	40	समान मासिक किस्तों में

मत्स्य बीज संचयन दर

नर्सरी तालाब– 25–35 लाख स्पोन प्रति हेक्टेयर

संवर्धन तालाब– 2–3 लाख फ्राई प्रति हेक्टेयर अथवा 5000–6000 अंगुलिका प्रति हेक्टेयर

सारणी–5. मिश्रित मछली पालन हेतु विभिन्न प्रजातियों के संचयन दर

मत्स्य प्रजातियाँ	6 प्रजातियों का पालन	4 प्रजातियों का पालन	3 प्रजातियों का पालन
कतला	10 %	30 %	40 %
रोहू	30 %	30 %	30 %
नैन	15 %	20 %	30 %
सिल्वर कार्प	20 %	–	–
ग्रास कार्प	10 %	–	–
कामन कार्प	15 %	20 %	–

पूरक आहार की व्यवस्था

मछली की अधिक पैदावार के लिए यह आवश्यक है कि पूरक आहार दिया जाय। आहार ऐसा होना चाहिए जो कि प्राकृतिक आहार की भांति पोषक तत्वों से परिपूर्ण हो। भारत में परंपरागत तरीके से चावल की भूसी एवं मूंगफली की खली का मिश्रण संचित मछलियों के कुल वजन की 2–5 प्रतिशत मात्र की दर से प्रत्येक दिन दिया जाता है।

सारणी–6. मछली की आहार में पोशक तत्व की आव□यक मात्रा व उनके स्रोत

पोशक तत्व	स्रोत	फ्राई एवं अंगुलिकाए	बढ़ती मछली	व्यस्क/ परिपक्व
प्रोटीन	मछली चूरा /सोयाबीन आटा/चावल/गेंहू का चोकर	40–50 %	35–40 %	30 %
कार्बोहाइड्रेट	चावल की पॉलिश/ आटा	22 –26 %	15 –20 %	10–15 %
वसा	सरसों/मूँगफली की खली	6–8 %	5 %	5 %
विटामिन	विटामिन पाउडर	1 %	1 %	1 %
खनिज लवण	मीनेराल पाउडर	1 %	1 %	1 %

समन्वित मछली पालन

संसाधनों का गुणोत्तर (मलटिपिलयूज) इस्तेमाल, संसाधन संरक्षण एवं अधिकतम लाभ की कुंजी है। मछली पालन के साथ अन्य कृषि आधारित उद्योग जैसे की पशु पालन, मुर्गी पालन, बत्तख पालन, फसल व फल उत्पादन आदि अपनाया जाता है जिसे समन्वित मछली पालन कहा जाता है। ऐसी पद्धति अपनाने से भरपूर उपज के साथ अधिक आय की प्राप्ति की जा सकती है।

कुछ समन्वित मछली पालन प्रणालियाँ इस प्रकार है।

– मत्स्य पालन के साथ मुर्गी पालन

– मत्स्य पालन के साथ सूअर पालन

– मत्स्य पालन के साथ बत्तख पालन

– मत्स्य पालन के साथ दुधारू पशु गाय व भैस पालन

– मत्स्य पालन के साथ धान की खेती

– मत्स्य पालन के साथ पेड़ पौधे समन्वयन

– मत्स्य पालन + मुर्गी /बत्तख पालन + दुधारू पशु पालन + सूअर पालन

मछली में पाये जाने वाले प्रमुख रोग, लक्षण एवं निदान

साधारण परिस्थितियों में अधिकतर रोगाणु या तो तालाब के जल में या अल्पसंख्य में मछलियों के शरीर के ऊपर रहता हैं। वातावरण से उत्पन्न तनाव के बढ़ते ही ये मछलियों को अपने चपेट में ले लेते हैं। संक्रामक रोग साधारणतः जीवाणु (ब्याकटेरिया), विषाणु (वाइरस), फफूंद (फंगस) एवं परजीवियों द्वारा पैदा होते हैं। पानी में रहने के कारण मछलियों को रोग निवारण की प्रक्रिया अपेक्षाकृत जटिल हो जाती हैं। अतः इसमें रोग लगने से पहले उनके रोकथाम के लिए हर संभव प्रयास जरूरी होता है। एक चीनी कहावत के अनुसार इलाज की अपेक्षा रोकथाम उत्तम है। मछलियों के स्वास्थ्य प्रबंध के लिए मुख्य रूप से तीन प्रकार के उपाय व्यवहार में लाये जाते हैं जो इस प्रकार है संवर्धन पर्यावरण की देख–रेख, रोगरोधक उपाय एवं चिकित्सीय उपाय।

वैसे तो कार्प मछलियों में अनेक प्रकार के छोटे–मोटे रोग लगते हैं, परंतु उनमे से कुछ प्रमुख रोगों का कारक, लक्षण एवं उनका निदान यहाँ वर्णन किया जा रहा है।

सारणी–7. मछली के प्रमुख रोग के लक्षण एवं उनका निदान

क्र.सं.	रोग	रोग के लक्षण	रोग के उपचार
1.	फिन तथा टेलरोग	आरम्भिक अवस्था में पंखों के किनारों पर सफेदी आना, बाद में पंखों तथा पूंछ का सड़ना।	पानी की स्वच्छता फोलिक एसिड को भोजन के साथ मिलाकर इमेक्विल दवा 10 मि०ली० प्रति 100 लीटर पानी में मिलाकर रोग ग्रस्त मछली को 24 घंटे के लिए घोल में (2–3 बार) एक्रिप्लेविन 1 प्रतिशत को एक हजार ली० पानी में 100 मि०ली० की दर से मिलाकर मछली को घोल में 30 मिनट तक रखना चाहिए।
2.	अल्सर (घाव)	सिर, शरीर तथा पूंछ पर घावों का पाया जाना।	5 मि०ग्रा०/ली० की दर से तालाब में पोटाश का प्रयोग, चूना 600 कि०ग्रा०/हे०मी० (3 बार सात–सात

क्र.सं.	रोग	रोग के लक्षण	रोग के उपचार
			दिनों के अन्तराल), सीफेक्स 1 ली. पानी में घोल बनाकर तालाब में डाले
3.	ड्राप्सी (जलोदर)	आन्तरिक अंगो तथा उदर में पानी का जमाव	मछलियों को स्वच्छ जल व भोजन की उचित व्यवस्था, चूना 100 कि०ग्रा०/हे० की दर से 15 दिन के उपरान्त (2–3 बार)
4.	प्रोटोजोआन रोग कोस्टिएसिस	शरीर एवं गलफड़ों पर छोटे–छोटे धब्बेदार विकार	50 पी०पी०एम० फोर्मोलिन के घोल में 10 मिनट या 1: 500 ग्लेशियल एसिटिक एसिड के घोल में 10 मिनट
5.	कतला का नेत्र रोग	नेत्रों में कॉरनिया का लाल होना प्रथम लक्षण, अन्त में आंखों का गिर जाना, गलफड़ों का फीका रंग इत्यादि	पोटाश 2–3 पी०पी०एम०, टेरामाइसिन को भोजन 70–80 मि०ग्रा० प्रतिकिलो मछली के भार के (10 दिनों तक), स्टेप्टोमाईसिन 25 मि०ग्रा० प्रति कि०ग्रा० वजन के अनुसार इन्जेक्शन का प्रयोग
6.	इकथियोपथिरिऑसिस (खुजली का सफेददाग)	अधिक श्लेष्मा का स्त्राव, शरीर पर छोटे–छोटे अनेक सफेद दाने दिखाई देना	7–10 दिनों तक हर दिन, 200 पी०पी०एम० फार–गीलन के घोल का प्रयोग स्नान घंटे, 7 दिनों से अधिक दिनों तक 2 प्रतिशत साधारण घोल का प्रयोग
7.	ट्राइकोडिनिओसिस तथा शाइफिडिऑसिस	श्वसन में कठिनाई, बेचौन होकर तालाब के किनारे शरीर को रगड़ना, त्वचा तथा गलफड़ों पर अत्याधिक श्लेष स्त्राव	2–3 प्रतिशत साधारण नमक के घोल में (5–10 मिनट तक), 10 पी०पी०एम० कापर सल्फेट घोल का प्रयोग, 20–25 पी०पी०एम० फार्मोलिन का प्रयोग
8.	मिक्सोस्पोरोडिऑसिस	त्वचा, मोनपक्ष, गलफड़ा और अपरकुलम पर सरसों के दाने	0.1 पी०पी०एम० फार्मोलिन में, 50 पी०पी०एम० फार्मोलिन में 1–2 बराबर सफेद कोष्ट मिनट डुबोए, तालाब में 15–25 पी०पी०एम० फार्मानिल हर दूसरे दिन, रोग समाप्त होने तक उपयोग करें, अधिक रोगी मछली को मार देना चाहिए तथा मछली को दूसरे तालाब में स्थानान्तरित कर देना चाहिए।
9.	कोसटिओसिस	अत्याधिक श्लेषा, स्त्राव, श्वसन में कठिनाई और उत्तेजना	2–3 प्रतिशत साधारण नमक 50 पी०पी०एम० फार्मोलिन के घोल में 5–10 मिनट तक या 1: 500 ग्लेशियस एसिटिक अम्ल के घोल में स्नान देना (10 मिनट तक)
10.	डेक्टायलोगारोलोसिस तथा गायरडैक्टाय–लोसिक (ट्रेमैटोड्स)	प्रकोप गलफड़ों तथा त्वचा पर होता है तथा शरीर में काले रंग के कोष्ट	500 पी०पी०एम० पोटाश ओ (KDnon) के घोल में 5 मिनट बारी–बारी से 1:2000, एसिटिक अम्ल तथा सोडियम क्लोराइड 2 प्रतिशत के घोल में स्नान देना।
11.	डिपलोस्टोमियेसिस या ब्लैक स्पाट रोग	शरीर पर काले धब्बे	परजीवी के जीवन चक्र को तोड़ना चाहिए। घोंघों या पक्षियों से रोक
12.	लिगुलेसिस (फीताकृमि)	कृमियों के जमाव के कारण उदर फूल जाता है।	परजीवी के जीवन चक्र को तोड़ना चाहिए इसके लिए जीवन चक्र से जुड़े जीवों घोंघे या पक्षियों का तालाब में प्रवेश वर्जित, 10 मिनट तक 1:500 फाइमलीन

क्र.सं.	रोग	रोग के लक्षण	रोग के उपचार
			घोल में डुबोना, 1–3 प्रतिशत नमक के घोल का प्रयोग।
13.	आरगुलेसिस	कमजोर विकृत रूप, शरीर पर लाल छोटे–छोटे ध्ब्बे इत्यादि	24 घण्टों तक तालाब का पानी निष्कासित करने के पश्चात 0.1–0.2 ग्रा०/लीटर की दर से चूने का छिड़काव गौमोक्सिन पखवाड़े में दो से तीन बार प्रयोग करना उत्तम है। 35 एम०एल० साइपरमेथिन दवा 100 लीटर पानी में घोलकर 1 हे० की दर से तालाब में 5–5 दिन के अन्तर में तीन बार प्रयोग करे
14.	लरनिएसिस (एंकर वर्म रोग)	मछलियों में रक्तवाहिनता, कमजोरी तथा शरीर पर धब्बे	हल्का रोग संक्रमण होने से 1 पी०पी०एम० गैमेक्सीन का प्रयोग या तालाब में ब्रोमोस 50 को 0.12 पी०पी०एम० की दर से उपयोग
15.	अन्य बीमारियां ई०यू०एस० (ऐपिजुऑटिव) अल्सरेटिव	प्रारम्भिक अवस्था में लाल दाग मछली के शरीर पर पाये जाते हैं जो धीरे–धीरे गहरे होकर सड़ने लगते हैं। मछलियों के पेट सिर तथा पूंछ पर भी अल्सर पाए जाते हैं। अन्त में मछली की मृत्यु हो जाती है।	600 कि०ग्रा० चूना प्रति हे० प्रभावकारी उपचार। सीफेक्स 1 लीटर प्रति हेक्टेयर भी प्रभावकारी है।

जैविक कृषि तंत्र एवं संसाधनों का टिकाऊपन

सुधांशु शेखर पाल एवं कुलदीप सिंह

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ (उ0प्र0)

सम्पूर्ण विश्व में बढती हुई जनसंख्या एक गंभीर समस्या है। बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ भोजन की आपूर्ति के लिए मानव द्वारा खाद्य उत्पादन की होड़ में अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए तरह–तरह की रासायनिक खादों, जहरीले कीटनाशकों का उपयोग, प्रकृति के जैविक और अजैविक पदार्थो के बीच आदान–प्रदान मृदा व वातावरण को प्रभावित करता है, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति खराब हो जाती है, साथ ही वातावरण प्रदूषित होता है तथा मनुष्य के स्वास्थ में गिरावट आती है। प्राचीन काल में मानव स्वास्थ के अनुकूल तथा प्राकृतिक वातावरण के अनुरूप खेती की जाती थी, जिससे जैविक और अजैविक पदार्थों के बीच आदान–प्रदान का चक्र निरन्तर चलता रहता था, जिसके फलस्वरूप जल, भूमि, वायु तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होता था। भारत वर्ष में प्राचीन काल से कृषि के साथ–साथ गौ पालन किया जाता था, जिसके प्रमाण हमारे ग्रंथो में प्रभु कृष्ण और बलराम है जिन्हें हम गोपाल एवं हलधर के नाम से संबोधित करते है अर्थात कृषि एवं गोपालन संयुक्त रूप से अत्यधिक लाभदायी था, जो कि प्राणी मात्र व वातावरण के लिए अत्यन्त उपयोगी था। परन्तु बदलते परिवेष में गोपालन धीरे धीरे कम हो गया तथा कृषि में तरह तरह की रासायनिक खादों व कीटनाशकों का प्रयोग हो रहा है जिसके फलस्वरूप जैविक और अजैविक पदार्थों के चक्र का संतुलन बिगडता जा रहा है, और वातावरण प्रदूषित होकर मानव जाति के स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। अब हम रासायनिक खादों, जहरीले कीटनाशकों के उपयोग के स्थान पर, जैविक खादों एवं दवाईयों का उपयोग कर, अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते है जिससे भूमि, जल एवं वातावरण शुद्व रहेगा और मनुष्य एवं प्रत्येक जीवधारी स्वस्थ रहेंगें। भारत वर्ष में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है और कृषकों की मुख्य आय का साधन खेती है। हरित क्रांति के समय से बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए व आय की दृष्टि से उत्पादन बढ़ाना आवश्यक है अधिक उत्पादन के लिये खेती में अधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशक का उपयोग करना पडता है जिससे सामान्य व छोटे कृषक के पास कम जोत में अत्यधिक लागत लग रही है। इसलिए इस प्रकार की उपरोक्त सभी समस्याओं से निपटने के लिये गत वर्षों से निरन्तर टिकाऊ खेती के सिद्वान्त पर खेती करने की सिफारिश की गई, जिसे प्रदेश के कृषि विभाग ने इस विशेष प्रकार की खेती को अपनाने के लिए बढावा दिया जिसे हम जैविक खेती के नाम से जानते है। भारत सरकार भी इस खेती को अपनाने के लिए प्रचार प्रसार कर रही है।

जैविक खेती

कृषि की वह विधि है जो संसलेषित कीटनाशकों के अनुप्रयोग या न्यूनतम प्रयोग पर आधारित है तथा जो भूमि की उर्वरा शक्ति को बचाये रखने के लिये फसल चक्र, हरी खाद एवं कम्पोस्ट आदि का प्रयोग करते है।

जैविक खेती से होने वाले लाभ

कृशकों की दृश्टि से

- भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्वि हो जाती है।
- सिंचाई अंतराल में वृद्वि होती है।
- रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होने से लागत मे कमी आती है।
- फसलों की उत्पादकता में वृद्वि।

मिट्टी की दृश्टि से

- जैविक खाद का उपयोग करने से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है।
- भूमि की जल धारण क्षमता बढती है।
- भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होगा।

पर्यावरण की दृश्टि से

- भूमि के जल स्तर में वृद्वि होती है।
- मिट्टी खाद पदार्थ और जमीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी आती है।
- कचरे का उपयोग, खाद बनाने में, एवं उससे होने वाली बीमारियों में कमी आती है।
- फसल उत्पादन की लागत में कमी एवं आय मे वृद्वि।
- अंतर्राष्ट्रीय बाजार की स्पर्धा में जैविक उत्पाद की गुणवत्ता का खरा उतरना।

जैविक खेती की विधि रासायनिक खेती की विधि की तुलना में बराबर या अधिक उत्पादन देती है अर्थात जैविक खेती मृदा की उर्वरता एवं कृषकों की उत्पादकता बढ़ाने में पूर्णतः सहायक है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में जैविक खेती की विधि और भी अधिक लाभदायक है। जैविक विधि द्वारा खेती करने से उत्पादन की लागत तो कम होती है इसके साथ ही कृषक भाइयों को आय अधिक प्राप्त होती है तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजार की स्पर्धा में जैविक उत्पाद अधिक खरे उतरते हैं। जिसके फलस्वरूप सामान्य उत्पादन की अपेक्षा में कृषक भाई अधिक लाभ प्राप्त कर सकते है। आधुनिक समय में निरन्तर बढती हुई जनसंख्या, पर्यावरण प्रदूषण, भूमि की उर्वराशक्ति का संरक्षण एवं मानव स्वास्थ्य के लिए जैविक खेती की राह अत्यन्त लाभदायक है। मानव जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए नितान्त आवश्यक है कि प्राकृतिक संसाधन प्रदूषित न हों, शुद्व वातावरण रहे एवं पौष्टिक आहार मिलता रहे। इसके लिए हमें जैविक खेती की कृषि पद्वतियों को अपनाना होगा जोकि हमारे नैसर्गिक संसाधनों एवं मानवीय पर्यावरण को प्रदूषित किये बगैर समस्त जनमानस को खाद्य सामग्री उपलब्ध करा सकेगी तथा हमें खुशहाल जीने की राह दिखा सकेगी।

प्रमुख जैविक खाद एवं दवाईयॉ

- जैविक खादें
- नाडेप
- बायोगैस स्लरी
- वर्मी कम्पोस्ट
- हरी खाद
- जैव उर्वरक (कल्चर)
- गोबर की खाद
- नाडेप फास्फो कम्पोस्ट
- पिट कम्पोस्ट
- मुर्गी का खाद
- भभूत अमृतपानी
- अमृत संजीवनी
- मटका खाद
- गौ–मूत्र
- नीम–पत्ती का घोल/निबोली/खली
- मट्ठा
- मिर्च/लहसुन
- लकडी की राख
- नीम व करंज खली

भूमि की उत्पादन क्षमता बढाने में जैव उर्वरकों का महत्व

रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से उपज में वृद्धि तो होती है परन्तु अधिक प्रयोग से मृदा की उर्वरकता तथा संरचना पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है इसलिए रासायनिक उर्वरकों के साथ जैव उर्वरकों के प्रयोग की सम्भावनाएं बढ़ रही है। जैव उर्वरकों के प्रयोग से फसल को पोषक तत्वों की आपूर्ति होने के साथ मृदा उर्वरकता भी स्थिर बनी रहती है। जैव उर्वरकों का प्रयोग रासायनिक उर्वरको के साथ करने से रासायनिक उर्वरकों की क्षमता बढती है जिससे उपज में वृद्धि होती है।

जैव उर्वरक क्या है

जैव उर्वरक जीवाणु खाद है। खाद में मौजूद लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु वायुमण्डल में पहले से विध्यमान नाईट्रोजन को पकड़कर फसल को उपलब्ध कराते हैं और मिट्टी में मौजूद अघुलनशील फास्फोरस को पानी में घुलनशील बनाकर पौधों को देते है। इस प्रकार रासायनिक खाद की आवश्यकता सीमित हो जाती है। वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि खाद के प्रयोग से 30 से 40 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर भूमि को प्राप्त हो जाती है तथा उपज 10 से 20 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। अतः रासायनिक उर्वरकों को थोडा कम प्रयोग कर के बदलें में जैविक खाद का प्रयोग करके फसलो की भरपूर उपज पाई जा सकती है। जैव उर्वरकता रासायनिक उर्वरकों के पूरक तो है ही साथ ही ये उनकी क्षमता भी बढ़ाते है। फास्फाबैक्टीरिया और माइकोराइजा नामक जैव उर्वरक के प्रयोग से खेत में फास्फोरस की उपलब्धता में 20 से 30 प्रतिशत की बढोत्तरी होती है। मुख्यतः जैविक उर्वरक दो प्रकार की होती है।

सारणी–1. जैव उर्वरक एवं उनका प्रयोग विधि

जैव उर्वरक	उपयुक्त फसलें	संस्तुत प्रयोग विधि	आव□यक मात्रा
राइजोबियम	सभी दलहनी फसलों के लिए	बीजोपचार	200 ग्राम प्रति 10–15 किलोग्राम बीज
एजोबैक्टर	दलहनी फसलों को छोडकर अन्य सभी फसलों के लिए	बीजोपचार, जड़ उपचार, मृदाउपचार	200 ग्राम प्रति 10–15 किलोग्राम बीज या 5 किलोग्राम पति हेक्टेयर
एजोस्पिरिलम	दलहनी फसलों को छोडकर अन्य सभी फसलों के लिए, गन्ने के लिए विशेष उपयोगी	बीजोपचार, जड़ उपचार, मृदाउपचार	200 ग्राम प्रति 10–15 किलोग्राम बीज या 5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर
फास्फोबैक्टीरिया (पी.एस.बी)	सभी फसलों के लिए	बीजापचार, जड़ उपचार, मृदाउपचार	200 ग्राम प्रति 10–15 किलोग्राम बीज या 5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर

जैव उर्वरकों से लाभ

1. ये अन्य रासायनिक उर्वरकों से सस्ते होते है जिससे फसल उत्पादन की लागत घटती है।
2. जैव उर्वरकों के प्रयोग से नाईट्रोजन व घुलनशील फास्फोरस की फसल के लिए उपलब्धता बढ़ती है।
3. इससे रासायनिक खाद का प्रयोग कम हो जाता है जिससे भूमि की मृदा संरचना ठीक हो जाती है।
4. जैविक खाद से पौधों में वृद्धि कारक हारमोन्स उत्पन्न होते है जिनसे उनकी पैदावार पर अच्छा प्रभाव पडता है।
5. जैविक खाद से खेत में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती है।
6. जैविक खाद से पर्यावरण सुरक्षित रहता है।

जैविक खाद का प्रयोग कैसे करें

जैव उर्वरकों का प्रयोग बीजोपचार या जड़ उपचार अथवा मृदा उपचार द्वारा किया जाता है।

बीजोपचार

- 200 ग्राम जैव उर्वरक का आधा लीटर पानी में घोल बनाएं।
- इस घोल को 10–15 किलो बीज के ढ़ेर पर धीरे–धीरे डालकर हाथों से मिलाएं जिससे कि जैव उर्वरक अच्छी तरह और समान रूप से बीजों पर चिपक जाते है।
- इस प्रकार तैयार उपचारित बीज को छाया में सुखाकर तुरन्त बुआई कर दें।

जड़ उपचार

- जैविक खाद का जड़ोपचार द्वारा प्रयोग रोपाई वाली फसल में करते है।
- 4 किलोग्राम जैव उर्वरक का 20–25 लीटर पानी में घोल बनाएँ।
- एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त पौधों की जड़ों को 25–30 मिनट तक उपरोक्त घोल में डुबोकर रखें।
- उपचारित पौधों को छाया में रखें तथा यथा शीघ्र रोपाई कर दें।

मृदा उपचार

- एक हेक्टेयर भूमि के लिए 200 ग्राम वाले 25 पैकेट जैविक खाद की आवश्यकता पड़ती है।
- 50 किलोग्राम मिट्टी 50 किलोग्राम कम्पोस्ट खाद में 5 किलोग्राम जैव उर्वरक को अच्छी तरह मिलाएँ।
- इस मिश्रण को एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में बुआई के समय या बुआई से 24 घण्टे पहले समान रूप से छिडकें, बुआई के समय कूडों या खूडों में भी डाल सकते है।

ध्यान रखें कि

नाईट्रोजनी जैव उर्वरकों के साथ फास्फोबैक्टीरिया का प्रयोग अत्यन्त लाभकारी है। प्रत्येक दलहनी फसल के लिए अलग राईजोबियम कल्चर आता है अतः दलहनी फसल के अनुरूप ही राइजोबियम कल्चर खरीदें और प्रयोग करें। जैव उर्वरकों को धूप में कभी न रखें। कुछ दिन के लिए रखना हो तो मिट्टी के घडे का प्रयोग बहुत अच्छा है। फसल विशेष के अनुसार ही जैविक खाद का चुनाव करें। रासायनिक खाद तथा कीटनाशक दवाईयों से जैविक खाद को दूर रखें तथा इनका एक साथ प्रयोग भी न करें।

कहॉ से लें

जैव उर्वरकों के तैयार पैकेट खाद विक्रेताओं, किसान सेवा केन्द्रों एवं सहकारी समितियों से प्राप्त किये जा सकते है। प्रकृति ने पौधों की सुरक्षा व वृद्धि के लिए जमीन में नाना प्रकार के सूक्ष्म जीवों को दिया है। ये सूक्ष्म

जीव जमीन की उर्वराशक्ति के द्योतक है। जमीन की ऊपरी सतह (लगभग 1.5 फुट तक की गहराई) में जडों के आस–पास के क्षेत्र में ये सक्रिय रहते हैं और पौधों की सुरक्षा व वृद्धि में सक्रिय भूमिका निभाते है। इन लाभकारी सूक्ष्म जीवों में राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजोस्पीरीयलम, एसीटोबैक्टर बायुमंडल से निष्क्रिय नाईट्रोजन को लेकर नाइट्रेट/नाइट्राइट में बदल कर पौधों को देते है तो पी0एस0बी0 (फास्फेट सोलबिलाइजींग बैक्टीरिया) अघुलनशील फास्फेट को घोल कर पौधों को प्रदान करता है। पी0जी0पी0बी0 (प्लांट ग्रोथ प्रोमोटिंग रिजोबैक्टीरिया) एक विशेष प्रकार की जाति का बैक्टीरिया है जो कि जड़ों के आस पास के क्षेत्र में क्रियाशील रहता है। यह पौधों की बढ़वार में सहायक होता है। प्रकृति के इन सूक्ष्म जीवों में आपस में कोई रस्सा कसी नहीं होती। सभी इकट्ठे रहते हुए इकट्ठे कार्य करते हैं और सभी पौधों के प्रति हितकारी कार्य करते हैं। इसी श्रंखला में माइकोराइजा नाम की फफूंदी भी होती है जो कि राइजोबियम की तरह जड़ के अंदर रहकर मुख्यतः जड़ों के आस–पास के क्षेत्र में अघुलनशील फास्फेट को घोल कर पौधों को देती है और अपने जीवन के निर्वाह के लिए पौधों से कार्बोहाइड्रेट प्राप्त करती है। लगभग 20 साल के निरंतर व गहन अनुंसधान करने के पश्चात पहले टाटा एनर्जी रिसर्च इंस्टीट्यूट नाम से जाने वाली अनुसंधान संस्थान द्वारा आज माइकोराइजा को बनाने की तकनीकि विकसित की गई। इसी संस्था के तीन निजी संस्थानों – कैडिला (गुजरात, 70 टन), के.सी.पी. शुगर इंडस्ट्रीज एंड कारपोरेशन, (वयूर, आन्ध्र प्रदेश, 250 टन) एवं मैजेस्टीक एग्रोनोमिक्स प्रा. लि. (ऊना, हिमाचल प्रदेश, 1400 टन) प्रतिवर्ष माइकोराईजा बना रहे हैं और किसानों को उपलब्ध कराये जा रहे है। इसी अनुसंधान की श्रंखला में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली जिसे पूसा संस्थान के नाम से जानते है, के वैज्ञानिकों ने भी काफी अच्छा अनुसंधान किया और पैथोलोजी विभाग की भूतपूर्व अध्यक्ष डा0 विनिता सेन ने अपने कार्यकाल में एक नई फफूंदी को प्राप्त किया जिसका नाम एसपरजीसल नाईजर है। इस पर गहन व सम्पूर्ण अध्ययन करके इसे व्यावसायिक स्तर पर तैयार करने की टेक्नोलोजी/प्रोद्योगिकी पहली बार छह साल पूर्व कैडिला को बेची। यमुना के किनारे सब्जियों के खेती करने वाले किसानों के खेतों से खीरा जाति के पौधों की जडों के आस पास के क्षेत्र से इस फफूंदी की खोज की गई। वैसे तो यह फफूंदी प्रायः वर्षा काल में घरों की दीवारों पर काले काले चकत्तों के रूप में देखने को मिल जाती है और यह फफूंदी टी.बी. जैसी बीमारी फेफडों में पैदा कर देती है परन्तु पौधों को लाभ पहुचाने वाली यह फफूंदी इसी परिवार की है जिसे प्रो. विनिता सैन ने काली सेना का नाम दिया क्योंकि जब यह फैलती है तो पूरी फौज की तरह फैलती है। इस फफूदी में न केवल जैविक खाद के गुण है, बल्कि इसमें विशेषतः जैविक फफूंदी विरोधक गुण भी मौजूद हैं और अनेक प्रकार का नुकसान पहुंचाने वाली जमीन की फफूंदियां जैसे फीथियम, फ्यूजैरियम, राइजोक्टीनिया, स्कैलीरोटीना, मैकरोफोमीना आदि को समाप्त करती है। यह बीजों के जल्दी अंकुरित होने में सहायक है। पौधों को अधिक मजबूत/सुदृढ़ बनाती है और अधिक उपज में सहायक है। बीज में गलन, जड़ गलन, बील्ट, चारकोल गलन और अन्य प्रकार के रोगो से सूरजमुखी के पौधों पर इसका प्रभाव नहीं पड़ता है। इन सभी अनुसंधानों में वैज्ञानिको को लगभग 15 वर्ष लगे और अब कैडिला नाम की कम्पनी इसका व्यावसायिक उत्पादन कर रही है। परन्तु उसके द्वारा तैयार माल तो गुजरात के कुछ क्षेत्र में ही खप जाता है। यह जैविक खाद भारत के हर प्रदेश में उपलब्ध हो और हर किसान इसका प्रयोग कर सके, इसके लिए कई उद्योगपतियों को यह प्रोद्योगिकी आई. ए. आर. आई. से खरीदनी होगी और अपने अपने क्षेत्रों में इसका अपनी क्षमता के अनुसार उत्पादन करके किसानों तक पहुंचाना होगा। इसकी प्राद्योगिकी लेने के लिए निदेशक, भारतीय कृषि अनुंसधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली–110012 से सम्पर्क स्थापित किया जा सकता है।

काली सेना से पौधों की उपचार विधि

काली सेना एस.डी.–

क) बीज उपचार के लिए

मात्राः बोने के तुरन्त पहले 8 ग्राम प्रति किलोग्राम बींज। बीज को प्लास्टिक अथवा कागज पर फैला लें। बीज को थोडा गीला करने के लिए पानी का छिडकाव करें। इन बीजों पर सही मात्रा में कालीसेना एस.डी. छिडकें और हाथ से अच्छी तरह मिला लें। मिलाने के तुरन्त बाद (दो घण्टे के अंदर ही) बीज बो दें।

ख) पौधे और कटिंग के जड़ों को डुबोने के लिए (मात्र 8 ग्राम/लीटर पानी) खेत में पौध रोपाई करने के तुरन्त पहले जड़ों को इस घोल में डुबों ले। घोल 2 घण्टे तक 2–3 गुच्छे पौधों के लिए दुबारा प्रयोग किया जा सकता है। घोल को काठी के बीच–बीच में हिला लें।

काली सेना एस.एल. खेतों के लिए–

- उपचार से पहले इसको 7 से 10 दिन तक गोबर की खाद में 20 ग्राम प्रति मिट्रिक टन की दर से मिलाकर रखना पड़ता है।
- गोबर की खाद का ढ़ेर (6 फुट, 3 फुट, 1 फुट ऊँचाई) बनाएं।
- ढ़ेरों पर थोड़ा सा पानी का छिड़काव करें जिससे नमी बनी रहे।
- ढ़ेरों को प्लास्टिक या तिरपाल से ढ़क कर रखें।
- ढ़ेर अगर छांव में न हो तो प्लास्टिक के ऊपर कागज ढ़क दें, जिसमें खाद का तापमान 40 डिग्री सेल्सियस से ऊपर न जाये।
- ढ़ेरों को हर तीसरे दिन फावडे से अच्छी तरह मिलायें जिससे काली सेना की बढत ठीक ढंग से हो तथा ढेर को हर बार ढक दें।
- यह स्पेशल काली सेना मिश्रित खाद 10 दिन बाद खेतों में डालने के लिए तैयार हो जायेगी।

पौध□ाला (नर्सरी) हेतु

1 किलोग्राम प्रति वर्ग मीटर मिट्टी की ऊपरी (6 सेंटीमीटर) सतह में बीज बोने के 7 से 10 दिन पहले मिलायें। खेतों (गेहूँ, चना, अरहर, सरसों, मक्का, मूंग, सब्जियां इत्यादि) के क्यारियों पर 500 ग्राम प्रति मीटर बीज बोने के 7 दिन पहले डालें। जो फसलें दूरी पर बोये जाते है जैसे खरबूज, तरबूज, खीरा, लौकी, भिंडी, बैगन इत्यादि, उनमें बुआई या रोपाई के हर जगह पर 200 ग्राम से 300 ग्राम डालें। बुआई से 7–10 दिन पहले डालना बेहतर होगा। फलों के बगीचों में रोपाई के 15 दिन पहले हर गढ्ढे पर 10 किलोग्राम ऊपरी 6 सेंटीमीटर में मिलाएं। वृक्षों के लिए तनों से एक फुट की दूरी में 6 सेंटीमीटर गहरी खाई बनाएं और उसमें चारो ओर से 10 किलोग्राम डालें।

फसल उत्पादन पर प्रभाव

मूंगफली एवं सूरजमुखी को छोडकर प्रायः सभी प्रकार की फसलों पर इस जैविक खाद व जैविक फफूंदीनाशक के बहुत ही अच्छे परिणाम आए है। इनमें 92 प्रतिशत तक रोग से मुक्ति दिलाने की क्षमता है (गोभी एवं डैम्पीग ऑफ), 95 प्रतिशत तक की कमी उन सभी सूक्ष्म जीवाणुओं की जो जमीन में रोग पैदा करते है (फ्यू. आक्सीसपोरम मैलोनिस) और इन सभी के कारण फसल उत्पादकता 37 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। इस तरह से यह न केवल रोगों को रोकने का एक जैविक योग है बल्कि फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए जैविक खाद भी है।

कालीसेना अन्य जैविक खादों से क्यों भिन्न है

- यह एक फफूंदी है और इसको 2.5 वर्ष तक सुरक्षित रखा जा सकता है।
- जैविक रूप से अनेक प्रकार के रोगाणुओं से लडने की क्षमता।
- वायुमंण्डल में पाए जाने वाले रोगाणुओं से मुक्ति।
- निमोटोड के प्रभाव को भी निष्क्रिय करता है।
- केवल किसी खास फसल के प्रति लागू नहीं, प्रायः सभी फसलों पर प्रभावशाली।
- 43 डिग्री सेल्सियस तक काम करता है।
- फास्फेट को घोल कर पौधों को प्रदान करता है।
- पौधों में रोग निरोधक क्षमता पैदा करता है।
- पौधों को अधिक शक्तिशाली बनाकर फसल की उत्पादकता बढाता है।
- यह एकमात्र सूक्ष्म जीव है जिसमें जैविक खाद एवं कीटनाशक दोनों के गुण है।

आज के बदलते परिवेश में जब जैविक खेती को प्रोत्साहन मिल रहा है, औषधीय पौधों की खेती का क्षेत्रफल प्रति वर्ष बढ़ रहा है। अन्य जैविक खादों के साथ–साथ भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा विकसित प्रोद्योगिकी को भारत के उद्योगपतियों द्वारा अपनाया जाना चाहिए। केवल एक कम्पनी पूरे भारतवर्ष की मांग को पूरा नहीं कर सकती है। कैडिला काली सेना का जितना उत्पादन कर रहा है उससे तो गुजरात की मांग भी पूरी नहीं हो पा रही। बेरोजगार कृषि स्नातकों, वैज्ञानिकों और किसानों के क्लबों को आगे आना चाहिए। सभी मिलजुल कर रासायनिक खादों की तरह जैविक खादों और जैविक कीट निरोधकों का उत्पादन शुरू करें। ये सभी करते समय गुणवत्ता नियंत्रण का ध्यान रखना आवश्यक है। इसके अच्छे परिणाम आएंगे, किसान को लाभ होगा, सभी को खाने के लिए अच्छे फल, सब्जियां, अनाज व औषधीय पौधे मिलेंगें।

प्रक्षेत्र विशेष पोषण तकनीकी द्वारा फसल पोषक तत्व प्रबंधन

विनोद कुमार सिंह एवं एम.पी शर्मा

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम मेरठ –250 110

हरित क्रान्ति की सफलता के साथ–साथ जहॉ एक तरफ हम खाद्य उत्पादन में आत्म निर्भर हुए वहीं दूसरी तरफ खेती में निरन्तर मृदा उत्पादकता का ह्रास देखा जा रहा है। कारणवश किसान जिस खेत में कम पोषक तत्वों के प्रयोग द्वारा जो उत्पादन प्राप्त कर रहा था वह उसी खेत में ज्यादा लागत लगाकर उतना या उससे कम उत्पादन प्राप्त कर पर रहा है। इस प्रकार के परिणामों के पीछे कारण को अगर ध्यान से देखें तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि हम खेती में असंतुलित व अपर्याप्त पोषक तत्व प्रवंधन कर रहे हैं। हाल ही में कृषि प्रणाली निदेशालय मोदीपुरम द्वारा गंगा–सिंन्धु के मैदानी भागों में कराये गये एक सर्वेक्षण में पाया गया है कि 97 प्रतिशत किसान धान–गेहूँ फसल चक्र में मात्र यूरिया व डी.ए.पी. का प्रयोग कर रहे हैं। पोटाश व सल्फर जैसे आवश्यक पोषक तत्वों का प्रयोग लगभग नगण्य है। जिंक जैसे पोषक तत्व का प्रयोग ज्यादातर 10–15 किग्रा प्रति हे0 जिंक सल्फेट के रूप में, वह भी अगर इसकी कमी के लक्षण आते हैं तो प्रयोग हो रहा है। इस प्रकार के असंतुलित व अपर्याप्त तत्व प्रबंधन के द्वारा आज निम्न प्रकार की समस्याएँ देखी जा रही हैं।

1. प्रति हेक्टेयर उत्पादन कम होना।
2. उत्पादन लागत में वृद्वि ।
3. फसलो में तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई पड़ना ।
4. कीट पतंगों व व्याधियों का प्रकोप बढ़ जाना ।
5. नंत्रजन के अधिक प्रयोग से भूगर्भ जल का प्रदूषित हो जाना ।
6. पोषक तत्व उपयोग क्षमता में कमी आना ।
7. मिट्टी में पोषक तत्वों का क्रान्तिक स्तर से नीचे चला जाना व भूमि का बंजर होना आदि ।

ऐसी परिस्थिति में फसलों को ऐसी पोषण तकनीकी द्वारा पोषक तत्व प्रबंधन करने की आवश्यकता है जो कि मिट्टी में पोषक तत्वो का संतुलन बनाए रखे तथा प्रति इकाई पोषक तत्व प्रयोग से अधिकाधिक उत्पादन लाभ मिल सके। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर प्रक्षेत्र विशेष पोषण प्रबंधन तकनीकी का इजात किया गया है ।

प्रक्षेत्र वि□ीश पोशण तकनीकी क्या है ?

आमतौर पर हम देखते हैं कि हर खेत की मिट्टी को अलग–अलग फसल व अलग–अलग मौसम के हिसाब से अलग–अलग पोषण की आवश्यकता होती है। इस प्रकार की विभिन्नता निम्न कारणों से होती है ।

– मिट्टी की संरचना व कार्बन स्तर

– मिट्टी की जल अवशोषण क्षमता

– मिट्टी में फसल अवशेषों का प्रयोग

– विभिन्न फसलों में प्रयुक्त सिचाई की मात्रा

– कार्बनिक व अकार्बनिक खाद का प्रयोग

– खेत में उगया जाने वाला फसल चक्र

उपरोक्त सभी कारकों द्वारा मिट्टी में उगाई जाने वाली फसल का पोषक आवश्यकता भी अलग–अलग हो जाती है। ऐसी दशा में सभी खेतों में एक प्रकार का पोषक तत्व प्रबंधन करना निश्चित रूप से यथोचित नहीं है। प्रक्षेत्र विशेष पोषण तकनीकी में इन्ही बातों को ध्यान में रखते हुए एक फसल विशेष के लिए निर्धारित उत्पादन लक्ष्य हेतू कुल आवश्यक पोषक तत्व की मात्रा तथा भूमि की उर्वरता से स्वतः प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की मात्रा के अन्तर को ज्ञात किया जाता है तथा प्रयुक्त पोषक तत्व उपभोग क्षमता का ध्यान रखते हुए पोषक तत्वों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार यह तकनीकी हमें निम्न बातों का जवाब देती है ।

– फसल व प्रक्षेत्र विशेष में किस पोषक तत्व की आवश्यकता है ।

– पोषक तत्व की कितनी मात्रा से वॉक्षित लाभ प्राप्त होगा तथा

– इन पोषक तत्वों का प्रयोग कब व कैसे करें ।

प्रक्षेत्र वि□ीश पोशण तकनीकी के प्रमुख पायदान

इस तकनीकी को अपनाने के समय निम्न बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाता है ।

उत्पादन स्तर का निर्धारण

स्थान व प्रक्षेत्र विशेष की जलवायु का अन्य भौतिक कारकों को ध्यान में रखकर एक निश्चित उत्पादन लक्ष्य निर्धारित करें ।

पोशक तत्व भून्य क्यारी विधि से नत्रजन फास्फोरस व पोटा□ा की मात्रा का निर्धारण

इसके लिए प्रयुक्त खेत में 5X6 वर्ग मी की चार क्यारियॉ जिसमें –एन, –पी.,– के व एन.पी.के तत्वों का प्रयोग अलग–अलग क्यारी में किया जाता है यहॉ पर ध्यान देने की बात है कि जिस क्यारी में एक पोषक तत्व का प्रयोग (जैसे एन0) नहीं किया जा रहा है वहॉ पर बाकी पोषक तत्व पी.के डाले जायेगें । इस तरह उस पोषक तत्व विहिन क्यारी के द्वारा प्राप्त उत्पादन को उस क्यारी जिसमें सभी तत्व डाले गयें हों से घटाकर उस तत्व की उत्पादन वृद्वि दर प्राप्त की जा सकती है। इसी प्रकार पर एन.पी.के प्रयुक्त क्यारी तथा एक पोषक तत्व विहिन क्यारी के द्वारा उस पोषक तत्व का उपभोग का अन्तर यह दर्शाता है कि अगर उत्पादन एन.पी.के वाली क्यारी के बराबर लाना है तो कितनी मात्रा में पोषक तत्वों की आवश्यकता होगी। इन पोषक तत्वों की मात्रा को उक्त फसल के द्वारा उस उर्वरक तत्व उपभोग क्षमता के आधार पर सकल पोषक तत्व प्रबंधन का आकलन किया जाता है।

प्रक्षेत्र वि□ोश पोशण तकनीकी द्वारा उत्पादन लाभ

देश के विभिन्न शोध केन्द्रों पर प्रक्षेत्र विशेष पोषण तकनीकी से विभिन्न फसलों में पायी गयी उत्पादन लाभ का विवरण सारणी–1 में दिया गया है ।

सारणी–1. प्रक्षेत्र वि□ोश पोशण तकनीकी से विभिन्न फसल चक्रों में उत्पादन लाभ

फसल चक्र	कृशक पद्वति के सापेक्ष वृद्वि	कृशक पद्वति के सापेक्ष अतिरिक्त लागत (रू./हे0)	कृशक पद्वति के सापेक्ष भुद आय (रू./हे0)
धान–गेहूँ	18–63%	1400–8800	9000–38000
धान–सरसों	40–44%	3000–3500	30000–33000
धान–चना	32–36%	2800–3300	31400–36000
धान–लहसुन	36–44%	4400–5000	71000–108000
धान–आलू	28–40%	1100–1500	46000–60000
मूँगफली–गेहूँ	22–26%	2400–3900	24000–30000
मक्का–गेहूँ	25–29%	1800–3500	16000–24000
ज्वार–गेहूँ	38–44%	1400–2600	13000–63000
गन्ना–गेहूँ	36–66%	7200–8400	49000–38000
तिल–गेहूँ	30–37%	2100–3400	19000–32000
अरहर–गेहूँ	28–35%	1400–2300	11000–22500

सारणी–1 में दिए गये परिणाम यह भली भॉती दर्शाते है कि प्रक्षेत्र विशेष पोषण तकनीकी से पोषक प्रबंधन न केवल उत्पादन वृद्वि करने में सहायक है बल्कि साथ के साथ थोड़ी सी अतिरिक्त लागत से अच्छी आमदनी भी दिला सकता है। इनके अलावा यह तकनीकी भूमि के स्वास्थ का पूरा ध्यान रखने में सहायक है।

फसलों में पोशक तत्वों की उपयोग क्षमता बढ़ाने के प्रमुख उपाय

आम तौर पर यह देखा गया है कि किसान सबसे ज्यादा रसायनिक खादों का फसल उत्पादन में प्रयोग करते है लेकिन उनकी उपयोग क्षमता अनुमानित क्षमता से बहुत कम है, जैसे कि नत्रजन की औसतन उपयोग क्षमता 40 प्रतिशत, फास्फोरस की 20 प्रतिशत एंव पोटेशियम की 40 से 50 प्रतिशत है लेकिन किसानो द्वारा रासयनिक खादों के प्रयोग की उपयोग क्षमता बहुत कम है। इसके परिणाम स्वरूप भारी मात्रा में उर्वरक बेकार हो जाते है तथा मृदा की संरचना एंव अन्य भौतिक, रसायनिक एंव जैविक गुणों पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है अतः उर्वरको की उपयोग क्षमता बढना अतयन्त आवश्यक है। उपयोग क्षमता बढ़ने के बहुत से तरीके निम्न तरह से है।

भूमि का समतल करके ही कृशि कियाएं करना

आम तौर पर यह देखा गया है असमतल भूमि में पानी का प्रभाव निचले स्थान पर अधिक व ऊचे स्थान पर कम होता है। जिसके परिणाम रूवरूप पौधों को नमी व पोषक तत्व कही कम कही ज्यादा होने के कारण उनकी उपयोग क्षमता कम हो जाती है एंव समतल जमीन पर इन दोनों का वितरण सही होता है एंव उनकी उपयोग क्षमता इस तरह बढ़ जाती है।

मिट्टी की जाचं के अनुसार ही उर्वरको का प्रयोग करना चाहिए

मिट्टी की जाचं के बाद ही हम किसी फसल के लिए उर्वरको की सही मात्रा निशिचित करते है। अतः मिट्टी की जाचं के स्तर को एंव फसल की आवश्यकता को ध्यान मे रखकर ही उर्वरको का प्रयोग करना चाहिए। ऐसा करने से इन तत्वों की उपयोगिता क्षमता बढने के साथ–साथ दूसरे तत्वों की उपयोगिता क्षमता भी अधिक हो जाती है। मृदा की जांच रिपोर्ट के आधार पर आवश्यक एवं संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग न केवल अधिक पैदावार देने में सक्षम होता हैं वल्कि साथ साथ ही उर्वरकों का दुरुपयोग रोक कर खेती को सस्ता व लाभकारी भी बनाता हैं।

मिट्टी की रसायनिक अभिक्रिया के अनुसार मृदा सुधारकों का चुनाव करना चाहिए

मिट्टी की जाचं से यह पता चल जाता है कि वह सामान्य, क्षारीय या अमलीय है। आम तौर पर 10 टन जिप्सम क्षारीय भूमि में एंव 10 टन चूना अमलीय भूमि में सुधार करने के लिऐ प्रयोग करे। वैसे सुधारको की मात्रा क्षारीए व अमलीयता के अनुसार घटाई व बढ़ाई जा सकती है। ऐसा करने से भूमि में तत्वो की उपलब्धता बढ़ जाती है परिणाम स्वरूप उपयोगिता क्षमता पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

उर्वरको का भूमि की अभिक्रिया के अनुसार प्रयोग करे

यदि भूमि क्षारीए है तो यूरिया, डाईअमोनियम फॉस्फेट एंव सिंगल सुपर फॉस्फेट यदि भूमि अमलीय है तो कैल्शियम युक्त उर्वरक जैसे कैल्शियम नाईट्रेट तथा रॉक फास्फेट जैसे उर्वरकों का प्रयाग करे। ऐसे करने से मृदा पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है तथा भूमि में तत्वो की उपलब्धता बढ़कर पौधों में उनकी उपयोग क्षमता बढ़ जाती है।

उर्वरको का सही समय पर प्रयोग करे

ऐसा देखा गया है कि पौधों में फॉस्फोरस की आवश्यकता शुरू में पौधों की जड़ो के विकास एंव वृद्वि के लिए पड़ती है। नत्रजन की आवश्यकता पौधों के विकास के लिए पूर्ण वानस्पति वृद्वि के लिए होती है, पोटाश की

आवश्यकता वृद्वि एंव बालियों में दाने भरते समय पडती है इनके साथ–साथ अन्य पोषक तत्वों जैसे सल्फर, जिंक बोरान की आवश्यकता भी रासायनिक प्रतिक्रियाए में फसल की वृद्वि के समय में पड़ती है। अतः इन सभी उर्वरको को सही समय पर फसल की अवस्था के अनुसार देना चाहिए, ऐसा करने से पोषक तत्वों की उर्वरक क्षमता बढ़ जाती है।

उर्वरको को सही तरीके से देना चाहिए

तरीके से हमारा अभिप्रायः उर्वरको को उस तरीके से देने से है जिससे कि उनकी उपयोग क्षमता में वृद्वि हो सके जैसे फास्फोरस धारी उर्वरको को पौधों की जड़ो के पास देना चाहिए। नत्रजन धारी उर्वरको को दो तीन बार में फसलो की उम्र के अनुसार एंव भूमि के गठन को घ्यान में रखकर छिटक कर देना चाहिए। इसके साथ–साथ नत्रजन, सल्फर, जिंक एंव बोरान को बागवानी की फसलों में ड्रिप विधि द्वारा देकर पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता बढाई जा सकती है।

उर्वरको को सही एंव संतुलित मात्रा में देना चाहिए

उर्वरको की उपयोग क्षमता बढ़ाने के लिए उर्वरको को सही एंव संतुलित मात्रा में देना चाहिए इस तरह से पौधों की वृद्वि अच्छी होती है। परिणाम स्वरूप पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता बढ़ जाती है क्योकि सही एंव संतुलित उर्वरक एक दूसरे पोषक तत्वों की उपयोगिता क्षमता को बढ़ाते है।

अधिक कार्वनिक एंव जैविक खादों का प्रयोग करना चाहिए

हमारे पास बहुत सी कार्बनिक खादें, जैसे फार्म यार्ड खाद, कम्पोस्ट खाद, वर्मी कम्पोस्ट, तथा अन्य शहरी लोगों की खराब खाद पदार्थ एंव सीवेज एंव सल्ज जिनमें कार्बनिक खादों की प्रचूर मात्रा मौजूद है इनको ज्यादा से ज्यादा मात्रा में देना चाहिए। इनके देने से भूमि की भौतिक, रासायनिक गुणों में सुधार होता है तथा उर्वरकता बढ़ जाती है। परिणाम स्वरूप भूमि में तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है ऐसा करने से पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता कई गुना बढ़ जाती है। इसके साथ–साथ अधिक से अधिक जैविक खाद जैसे राईजोबियम, फास्फोबैक्टिरम, माईकोराजा, अजोला आदि के देने से नत्रजन का स्थीरीकरण एंव फास्फोरस, एंव जिंक की धुलनशीलता में वृद्वि होकर पोषक तत्वो की उपयोग क्षमता में वृद्वि होती है।

उर्वरक एंव कार्बनिक तथा जैविक खादो का मिश्रित प्रयोग

उर्वरक एंव कार्बनिक तथा जैविक खादो को मिश्रित प्रयोग करने से भूमि में तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है एंव भूमि की दशा में सुधार होता है परिणाम स्वरूप पोषक तत्वों एंव पानी दोनों की उपयोगिता क्षमता बढ़ जाती है।

समय से फसलों की सिंचाई एंव जल प्रबंधन करे

ऐसा करने से फसल की वृद्वि में रूकावट नहीं होती है। तथा भूमि से तत्व फसलो को निरंतर आवश्यकता अनुसार मिलते रहते है। जिसके परिणाम स्वरूप पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता बढ़ जाती है। इसके साथ – साथ भूमि में जल भराव को नही ठहरने देना चाहिए ऐसा होने से भूमि तत्व निछालन द्वारा निचली सतह में चले जाते है, इससे उनकी उपयोग क्षमता धट जाती है।

सही फसल चक्र अपनायें

अपनाई जाने वाली फसल चक्र में गहरी एंव उथली दोनो तरह की जड़ो की फसलों को शामिल करना चाहिए। ऐसा करने से भूमि की उर्वरा शक्ति का प्रथम एंव द्वितीय सतह पर एक सा उपयोग होता है तथा भूमि की उर्वरा शक्ति भी अनुकूल रहती है। इसके साथ–साथ फसल चक्र में अधिक एंव कम तत्व चाहने वाली फसलों का समन्वयन करना चाहिये।

फसल अव□ाशों को भूमि में मिश्रत करें

ऐसा करने से तत्व भूमि के अन्दर वापिस पहुंचते है तथा भारी मात्रा में कार्बनिक पदार्थ भी भूमि को मिलता है। जिसके परिणाम स्वरूप भूमि की दशा में सुधार होता है एवं उसमें नमी एंव हवा धारण करने की क्षमता बढ़ जाती है। अतः ऐसी भूमि में प्रयोग किए गए उर्वरको की उपयोग क्षमता में सकारात्मक वृद्वि होती है।

फसलों के ऊपर पर्णीय छिड़काव करें

ऐसा करने से पानी में धुलीनशील उर्वरक जैसे यूरिया, सिंगल सुपर फास्फेट, जिंक सल्फेट एंव बोरक्स जैसे उर्वरको को बागवानी की फसलो में पर्णीय छिड़काव द्वारा देकर उनकी उपयोग क्षमता बढ़ाई जा सकती। क्योंकि पर्णीय छिड़काव करने से मिटृटी में पोषक तत्वों का नुकसान कम हो जाता है।

फसलों को खरपतवारों से बचाए रखें

प्रयोगों द्वारा ऐसा देखने को मिला है कि एक तिहाई पोषक तत्व खरपतवारों के उगने व पनपने से खत्म हो जाते है। जिनके परिणाम स्वरूप उर्वरकों की उपयोग क्षमता कम हो जाती है। अतः फसलों में खरपतवारों को नियत्रण करके 20 से 30 प्रतिशत उर्वरको से मिलने वाले पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता में वृद्वि की जा सकता है।

सिंचाई के आधूनिक साधनों का प्रयोग करें

सिचांई के आधुनिक साधन जैसे ड्रिप तथा स्प्रींकलर को हलके गठन वाली भूमि में अपनाना चाहिए। तथा यूरिया, सिंगल सुपर फास्फेट, जिंक सल्फेट एंव बोरक्स आदि को हल्की मिटृटी में उगाई जाने वाली बागवानी फसलों में ड्रिप द्वारा देकर 20 से 30 प्रतिशत तक इन पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता बढ़ाई जा सकती है।

भूमि को फसलों के अव□ाशों से ढ़क देना चाहिए

ऐसा करने से फसल में खरपतवार नित्रयण होते है, तथा भूमि की नमी को कायम रखा जा सकता है। परिणाम स्वरूप भूमि की दशा अच्छी रहती है तथा तत्वों का शीध्र खनीजकरण होकर पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता बढ़ जाती है। इसके साथ–साथ बिछावन अवशेष भूमि में सड़ कर कार्बनिक पदार्थ बढ़ाते है, एंव भूमि की दशा सुधारने में मदद करते है।

लघु जोत वाले कृषकों हेतु उपयोगी यन्त्र

वेदप्रकाश चौधरी एंव दिनेश कुमार पाण्ड़ेय

कृषि प्रणाली अनुसंधान निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ 250 110 (उ.प्र.)

भारत वर्ष में सभ्यता के विकास के साथ–साथ कृषि के यन्त्रों का भी विकास होता रहा है। आज के समय में किसानो के द्वारा फसल से अधिक उत्पादन लेने के लिये विभिन्न कृषि यन्त्रों का उपयोग आवश्यक है। कृषि कार्य हेतु मजदूर न उपलब्ध होना भी कृषि यन्त्रों की उपयोगिता को बढ़ाता है। ट्रैक्टर से खेती करने के लिए उपयुक्त मशीनरी एवं उचित तरीके तथा कम समय में कृषि कार्य हेतु विना यन्त्र सम्भव नहीं है। आज हमारे देश में ट्रैक्टरों की संख्या में अभूर्त पूर्व वृद्वि हुई है। बाजार विक्रय को देखने पर पता लगता है कि 2009–10 में करीब 3,00,000 ट्रैक्टरों का विक्रय हुआ है। अतः विभिन्न कृषि कार्यों हेतू मशीन का प्रयोग बढ़ा है।

जनसंख्या में बढ़ती हुई वृद्वि को देखते हुए सीमित मात्रा में उपलब्ध भूमि एवं प्राकृतिक संसाधनों से कृषि में आधुनिक कृषि यन्त्रों का प्रयोग कर उत्पादन बढ़ाना अति आवयक है। समयबद्ध एवं दक्षतापूर्वक कृषि प्रक्रियाएं संचालित करने के लिए आधुनिक कृषि मशीनरी के उपयोग अति आवश्यक है। फसल अवशेष को जलने से पर्यावरणीय या प्रदूर्षण को हानि पहुचाता है। अतः उचित मशीनरी का उपयोग करके फसल अवशेषों को भूमि पर मल्चिंग कर उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। जल एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्रोत है और फसलों की बढ़ती मांग के अनुरूप दिन प्रतिदिन कम होता जा रहा है। कृषि मशीनरी का उपयोग कर संरक्षण पूर्ण खेती अपना कर पानी की बचत कर अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

खेत तैयार करने और भूमि को समतल करने के लिए विभिन्न प्राथमिक तथा अन्य जुताई उपकरणों जैसे मोल्डबोर्ड हल, डिस्क हल/हैरों, स्प्रिंग टाइन हैरों, कल्टीवेटर, लकड़ी के पटेला एवं अन्य आधुनिक यन्त्रों के आविष्कार से खेती करना आसान हो गया है।

लेजर लैण्ड लेवलर

खेत का समतलीकरण अति आवश्यक है जिससे पानी दक्षता को बढ़ाकर कम पानी में अधिक उत्पादन प्राप्ति किया जा सकता है। सूक्ष्म रूप से खेत को समतल करने के लिए लेजर लैण्ड लेवलर का उपयोग किया जाना आज कल के खेती के लिए उपयोगी एंव उचित है। लेजर लैण्ड लेवलर का उपयोग पश्चिमी उत्तर प्रदेश एंव पंजाब तथा हरियाणा के किसानों द्वारा स्वयं या किराया के यंत्र द्वारा बड़े स्तर पर किया जा रहा है। इस मशीन के विभिन्न भाग सयुक्त रूप से मिलकर कार्य को सम्पन्न करते है। इसमें से मुख्य रूप से बकेट, कंट्रोल बाक्स (नियन्त्रण), हाइड्रोलिक सिस्टम (प्रणाली), लेजर ट्रांसमीटर एंव लेजर रिसीवर आदि है। खेत के समतल करने के लिए लेजर टांसमीटर को खेत के एक किनारे पर ट्रापाईड पर लगा दिया जाता है। इसके द्वारा लेजर किरण पुंज को समकोण पर गोल चक्कर में करीब 300–500 मीटर परिधि में छोड़ती है। जो कि ट्रैक्टर के साथ लगे बकेट

पर रिसीवर द्वारा प्राप्ति किया जाता है। इसके द्वारा प्राप्ति सेंकत को कंटोल बाक्स में इलेक्ट्रिकल सिंगनल के माध्यम से भेजी जाती है। तत्थ उपरान्त हाइड्रोलिक सिस्टम द्वारा बकेट की उचाई के ऊपर नीचे कर मिट्टी काट कर ऊँचे स्थान से नीचले स्थान पर किया जाता है। यह सारी प्रक्रिया एक बार मिट्टी कट की उचाई कंट्रोल बाक्स में सेट करने के बाद पूर्णतया स्वचालित है तथा ट्रैक्टर चालक के द्वारा की गई त्रुटियां इसमें प्रभावी नही होती। फलस्वरूप खेत एक समान रूप से समतल हो जाता है। सूक्ष्म रूप से समतल किये गये खेत में सिंचाई जल पोषक तत्वों तथा कृषि रसायनों की भी बचत होती है। इस मशीन के प्रयोग से 25–30 प्रतिशत पानी की बचत होती है एवं 15–20 प्रतिशत फसल की पैदावार में बढ़ोत्तरी होती है। इस मशीन के द्वारा औसतन 5 घण्टें में एक हेक्टेयर जमीन को समतल किया जा सकता है।

सारणी–1. विभिन्न प्रकार के समतलीकरण यन्त्रों का तुलनात्मक अध्ययन

क्रम संख्या	समतलीकरण विधि	कार्य दक्षता (हे./दिन)	भुद्वता (सेमी.)
1.	बैलो द्वारा	0.052 से 0.09	±4 से 6
2.	पावर ट्रिलर	0.10 से 0.13	±4 से 5
3.	ट्रैक्टर चालित लेबलिग ब्लेड	0.60 से 1.12	4 से 5
4.	ट्रैक्टर चालित स्क्रेपर/बकेट	0.60 से 1.12	4 से 5
5.	लेजर लेवलर	1.5 से 2.0	± 1

भूमि की तैयारी और मृदा संरक्षण के उपकरण

खेत तैयार करने और भूमि को समतल करने के लिए विभिन्न प्राथमिक, द्वितीयक एंव अन्य जुताई उपकरणों जैसे मोल्डबोर्ड व डिस्क हल/हैरों, स्प्रिंग टाइन हैरों, कल्टीवेटर, लकड़ी के पटेला आदि यन्त्रों का खेतों में अधिक प्रयोग किया जा रहा था लेकिन आधुनिक यन्त्रों के अविष्कार से खेती करना आसान हो गया है। इनमें से मुख्य इस प्रकार है।

रोटावेटर

खेत व भूमि की जुताई के लिए 2–3 बार मोल्डबोल्ड/तवेदार हल/डिस्क हैरों करने के बाद पटेला द्वारा समतल कर तैयार किया जाता है। आधुनिक यन्त्रों में रोटावेटर का उपयोग कर केवल एक या दो बार में अच्छी प्रकार से खेत को तैयार कर समतल कर देता है। रोटावेटर को ट्रैक्टर के पी.टी.ओ. शक्ति द्वारा रोटरी ब्लेड को 250 से 300 आर.पी.एम. चलाया जाता है जिससे खेत में खरपतवार व किसी प्रकार का फसल अवशेषों को काटकर मिट्टी मे मिला देता है तथा साथ–साथ खेत को समतल और भुरभुरी कर देता है। यह धान की खेत में पडलिंग के लिए सर्वोतम मशीन है।

इसकी कीमत लगभग 70,000 से 1,25,000 रूपये तक होती है। यह यन्त्र गीली एंव शुष्क भूमि दोनों के लिए उपयुक्त होता है। इस यन्त्र कार्य चौड़ाई 1.25 मी. से 2.5 मी होती तथा कार्य क्षमता 2 से 3 हेक्टयर/दिन होती है। इसका भार लगभग 300 से 500 किलोग्राम है। इस मशीन के उपयोग से 40–45 प्रतिशत समय तथा खर्चे में बचत होती है।

रोटावेटर की मुख्य विशेषताएं

- रोटावेटर प्राथमिक और द्वितीय जुताई दोनों एक ही बार में करता है।
- यह दो बार डिस्क–हैरों तथा दो बार कल्टीवेटर के बराबर की जुताई एक ही बार में करता है।
- इसके द्वारा धान की रोपाई हेतु पडलिंग भी की जा सकती है।
- इस मशीन से 50 से 60 प्रतिशत समय और 40 से 60 प्रतिशत ऊर्जा की बचत होती है।
- मिट्टी के बड़े–बड़े ढेलों को काटकर एक ही बार में भुरभुरा बना देता है।
- इस यन्त्र से खेत की तैयारी करने में लगभग 40–50 प्रतिशत सिंचाई जल की भी बचत होती है।
- खरपतवारों को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला देता है।

बुआई के आधुनिक यन्त्र

जीरो टिल ड्रिल

जीरो टिलेज तकनीक से खेती में लागत कम करने, फसलों की बुवाई समय पर करने तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान है। संरक्षित खेती में फसल अवशेषों का अधिंकाश भाग मृदा सतह पर छोड़ दिया जाता है, जिससे न केवल फसल उत्पादकता में वृद्वि होती है बल्कि पर्यावरण में सुधार एंव भूमि की उर्वरा शक्ति में सुधार होता है। शून्य कर्षण विधि से बुवाई करने से फसलों के अवशेष सतह पर रह जाते है जिससे अच्छी नमी में बुवाई की गयी फसलों का जमाव उचित होता है तथा साथ–साथ सिंचाई में कम पानी की आवश्यकता होती है।

जीरो ट्रिलेज मशीन से साधारणतया धान, मक्का व अरहर की पछेती किस्मों की कटाई के उपरान्त खेत में गेहूँ की फसल की बुवाई बिना जुताई के की जाती है। गेहूँ के अलावा मूँग, उरद, मक्का, मटर, चना आदि की बुवाई की जाती है।

जीरो टिल ड्रिल की प्रमुख विशेषताएं

- जीरो टिल ड्रिल के प्रयोग से 75 से 85 प्रतिशत ईंधन, ऊर्जा एवं समय की बचत होती है।
- फेलेरिस माइनर अर्थात गुल्ली डंडा खरपतवार का कम जमाव होता है।
- देरी की अवस्था में बुआई समय पर की जा सकती है।
- इस मशीन द्वारा 1.5 हेक्टेयर प्रति घंटा बुआई की जा सकती है।
- 2500 से 3000 रूप्ये प्रति हेक्टेयर के हिसाब से खेत तैयार करने की लागत में बचत होती है।

भौय्या (बेड प्लान्टर)

शैय्या विधि द्वारा धान की सीधी बुआई करने के लिये खेत को 3 से 4 हैरो करके पाटा लगा कर अच्छी तरह से खेत को तैयार कर लेते है उसके उपरान्त बैड प्लांटर मशीन द्वारा खेत में बैड बना ली जाती है इस मशीन द्वारा दो बैड जो 60 से.मी. की चौड़ाई की बनाती है और साथ–साथ बैड पर 3 लाईन धान की बुआई भी करती जाती है। इस मशीन को चलाने के लिये 35 हार्स पावर से अधिक हार्स पावर ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है। इसमे तेल की खपत करीब 4 से 5 लीटर/घंटा की आवश्यकता होती है। बैड शैया प्लाटिंग में धान की बुआई करने के बाद बैड पर नमी बनाये रखने के लिये सिंचाई दोनो बैडो के बीच में बनी नाली में ही करते है जिससे पानी की मात्रा में 20 प्रतिशत तक की कमी पायी जाती है।

बेड प्लान्टर की प्रमुख विशेषताएं

- यह मशीन दलहनी तथा तिलहनी फसलों की बुआई हेतु काफी उपयोगी है।
- इससे गेहूँ, मटर, चना, अरहर, मक्का, सोयाबीन, मूंग व उड़द आदि की बुआई कर सकते हैं।
- इससे बुआई करने पर खरपतवार कम पैदा होते हैं।
- इस विधि से बुआई करने पर परम्परागत विधि की तुलना में उर्वरक, बीज व पानी की बचत होती है।
- फेलेरिस माइनर (गुल्ली डंडा) खरपतवार का मेड़ के ऊपर कम जमाव होता है।
- इस मशीन द्वारा औसतन एक घंटे में 0.2 हेक्टेयर क्षेत्र की बुआई की जा सकती है।
- यह मशीन पानी की कमी वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है।

चित्र 1. भौया विधि द्वारा धान की सीधी बुआई

रोटो टिल ड्रिल

रोटा टिल ड्रिल एक बहुविकल्पीय मटर की बुवाई की मशीन है। जिसमें 9 नालियों में एक साथ बुवाई की जा सकती है। उर्वरक एवं बीज डालने के लिए अलग–अलग बाक्स बने होते है। इस मशीन के द्वारा जुताई भी साथ मे की जा सकती है।

हैप्पी सीडर/टर्वो सीडर

कम्बाईन द्वारा कटाई के उपरान्त धान के फसल के अवशेष में जीरों ट्रिल ड्रिल से बुआई करने से खाद एवं बीज उचित गहराई के डालने में कुछ कठिनाई का समाना करना पड़ता है। जिससे बीजों का जमाव कम हो पाता है। इस समस्या के समाधान के लिए हैप्पी एवं टर्वो सीडर का विकास किया गया है। इनमें दो इकाइयां होती है एक फसल अवशेष प्रबन्धन तथा दूसरी बुवाई के लिए। हैप्पी सीडर खड़े हुए धान के अवशेषों को काटकर एवं पड़े हुए अवशेषों को उठाकर बुआई की हुई खेत में पीछे फैला देती है। जबकि टर्वोसीडर द्वारा बोई फसल के लाइनों की बीच में अवशेष को फैला देता है जिससे भूमि की नमी संरक्षित रहती है तथा अवशेषों को न जलाने से वायु में प्रदूषण कम हो जाता है। यह अवशेष सड़कर खाद बनकर फसल की उत्पादकता में वृद्धि करते है। अवशेषों को मिट्टी की सतह पर फैलाने से मिट्टी की नमी संरक्षित तथा तापमान नियंत्रित रहती है। मशीन का मूल्य लगभग रूपये 1,00,000 से 1,25,000 रूपये तक।

चित्र 2. हैप्पी सीडर द्वारा बुआई एंव गेहूँ, की फसल

स्वचालित रोपाई म□ीन तकनीक से धान की खेती

मशीन तेल की खपत 0.5 लीटर प्रति घंटा होता है। यह दो भिन्न चाल पर क्रमशः 1.57 और 1.94 किलोमीटर प्रति घंटा की रफ्तार से हिल से हिल की दूरी क्रमशः 10 और 12 से.मी. पर धान के हिल की रोपाई करता है। इस मशीन द्वारा हिल की लाईन से लाईन की दूरी 23.8 सें.मी. निश्चित होती है जो एक बार में 8 लाइन की रोपाई करता है। इसका माडल न. : 2 जेड़ टी –238 – 8 तथा बाजार में उपलब्धता वी.एस.टी, एग्रो इनपुट, बंगलौर द्वारा किया जाता है।

चित्र 3. स्वचालित रोपाई म□ीन एंव मैट टाईप नर्सरी

किफायती फसल सुरक्षा के लिए विभिन्न आधुनिक यन्त्र

आज के समय में किसानो के द्वारा फसल से अधिक उत्पादन लेने के लिये तथा फसल को नुकसान से बचाने के लिये विभिन्न प्रकार के कीटनासकों, कवकनासकों एवं खरपतवार नासी दवाओ का छिड़काव करना पडता है ज्यादातर फसल पर कीट तथा बीमारियों का प्रकोप होता है। कभी–कभी तो इन बीमारियों तथा कीटों के प्रकोप से सारी फसल नष्ट हो जाती है। इसके अतिरिक्त पौधो की बढ़वार को खरपतवारों से भी नुकसान पहूँचता है। कीट बीमारियों एवं खरपतवार की रोकथाम के लिये विभिन्न प्रकार की दवाईयां प्रयोग की जाती है। ये दवाईयां पौध संरक्षण यंत्रों से जिन्हे स्प्रेयर तथा डस्टर के द्वारा प्रयोग किया जाता है। किसानों द्वारा सबसे अधिक स्प्रेयर का प्रयोग किया जाता है ।

फसलोत्पादन में उपयोगी स्प्रेयर

पीठ पर लटकाये जाने वाले स्प्रे यन्त्र

जिनमें जलीय घोल पर पंम्प की सीधी क्रिया द्वारा छिड़काव दाब बनता है इस तरह उत्पन्न हुआ दाब इस घोल को नोजल के सूक्ष्म छिद्रो से बाहर की ओर फेंकता है, जिससे यह उचित आकार की छोटी छोटी बूंदो में बट जाता है और उनकी एक समान रूप से फसल के उपर छिड़काव कर देता है। इस प्रकार के स्प्रेयर यन्त्रो के निम्न पार्ट इस प्रकार है नोजल, दाव नियंत्रक, पंम्प, छलनी, होज, टंकी आदि।

फुट/पैर चालित स्प्रेयर

उसकी सक्शन नली में राकिंग स्प्रेयर की तरह छलनी लगी होती है। जिससे घोल को टंकी में डाला जाता है इसका यन्त्र लोहे के बने स्टैण्ड में लगा होता है और पम्प सिलैंडर को पैडल से चलाकर दाब उत्पन्न किया जाता है। लगातार स्प्रे करने के लिये एक आदमी के द्वारा पैडल को चलाया जाता है तथा दूसरा आदमी स्पे लैस द्वारा छिड़काव करता जाता है। यह स्प्रेयर 17–21 किंग्रा./वर्ग से.मी. दाव उत्पन्न कर सकता है। इसके द्वारा

0.8 से 1 हेक्टेयर फसल पर प्रतिदिन छिड़काव किया जा सकता है। इसके निम्न पार्ट होते है नोजल, स्पे लैंस, निकास नली, कट आफ बाल्ब, सक्षन नली, छलनी, फेम, पैडल, पम्प सिलैंडर आदि।

पावर चालित स्प्रेयर

इस स्प्रेयर का प्रयोग अधिक क्षेत्र में स्प्रें करने के लिये किया जाता है इसके प्रयोग से समय की बचत होती है तथा छिड़काव में कम खर्च आता है। इसमें सबसे अधिक ट्रैक्टर चालित स्पेयर का ही उपयोग होता है। इसमें दाव उत्पन्न करने के लिये रोलर वेन पम्प या टुल्लु पम्प लगा होता है जिसे ट्रैक्टर के पी.टी.ओ. शाफ्ट द्वारा चलाया जाता है। इस प्रकार के स्प्रेयर के फ्रेम पर एक पम्प प्रेशर गेज, टंकी, प्रेशर रिलीफ बाल्व, सक्शन एवम निकास नली, बूम और एडजेस्टेबल नोजल एक साथ लगे होते है। इस फ्रेम को ट्रैक्टर के तीन पाइन्ट लिन्केज से जोड़ा जाता है। और इस स्प्रेयर के बूम को आवश्यकतानुसार उपर या नीचे किया जा सकता है। इस तरह के स्पेयर 200 से लेकर 500 लीटर तक की टंकी के साथ उपलब्ध है। इसका बूम 6.5 मीटर लम्बा होता है, जिसमें 12–14 एडजेस्टेबल नोजल लगे होते है। बूम तथा नोजल की दूरी आवश्यकतानुसार घटाया या बढ़ाया जा सकती है। इसके निम्न पार्ट होते है जैसे प्रेशर रेगुलेटर, प्रेशर गेज, बूम फ्रेम, टंकी, पम्प, बूम नोजल आदि।

विभिन्न प्रकार के नोज़ल की वि□ाशताएं एंव उपयोग

स्प्रे नोक (नोज़ल) कई प्रकार की होती हैं। इनका डिजाइन अलग–अलग तरह के स्प्रे के लिए किया जाता है। आमतौर पर इस्तेमाल होने वाली स्प्रे नोक इस प्रकार हैंः फ्लैट फैन, एक समान फैन, फ्लड कट, वैरियेबल कोन और हेलो कोन। स्प्रे नोकों की विशेषताओं के आधार पर ही नोजलों के अलग–अलग नाम होते हैं। इनके अलग–अलग फायदों और स्प्रे पद्धति के बारे में आगे बताया गया है। नोज़ल स्प्रे पम्प का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है नोजल के अन्य भाग इस प्रकार से हैं–स्प्रेनोक, छलनी, नोजल बॉडी, और उसकी टोपी आदि है।

फ्लैट फैन नोज़ल

इस नोज़ल से स्प्रे करने से किनारों पर कम छिड़काव होता है। अतः एकसार छिड़काव के लिए किनारों के साथ (30 % क्षेत्र तक) दुबारा छिड़काव करना आवश्यक है। एक से अधिक नोज़लों वाली बूम से शाकनाशियों की स्प्रे के लिए उपयुक्त है।

ईवन (एक समान) फैन नोज़ल

पट्टियों में स्प्रे के लिए इस नोज़ल का प्रयोग किया जाता है। लाइन (कतारों) वाली फसलों, सब्जियों व पौधों में एक बार में स्प्रे के लिए उपयुक्त। इस प्रकार नोज़ल को अनेक नोजलों वाली बूम में प्रयोग न करें। इस नोजल से स्प्रे एक से दूसरे किनारे तक बराबर होती है।

फ्लावित (फ्लडकट) नोज़ल

इसका प्रयोग असमान स्प्रे, कम दबाव पर स्प्रे का अधिक दायरा में किया है। फ्लैट फैन के अलावा केवल यह एक ऐसा नोज़ल है जिससे किनारों पर 50 % क्षेत्र में दोबारा स्प्रे सम्भव है। पत्तीनाशक व समस्त खरपतवारों को मारने वाली दवाओं के प्रयोग के लिए अति उपयुक्त है।

वैरियेबल (परिवर्तनीय) भांकुनुमा स्प्रे नोज़ल

धुंध जैसी बारीक स्प्रे को धारा जैसी स्प्रे में बदलना सम्भव है। कीटनाशक व फफूँदनाशक दवाओं के प्रयोग के लिए उपयुक्त है। सही स्प्रे नमूना निश्चित करने में आने वाली कठिनाइयों के कारण स्प्रे माप करना कठिन है।

सम्पूर्ण भांकुनुमा स्प्रे नोज़ल

बारीक बूंदों में स्प्रे करना सम्भव है, लेकिन रसायन के छिड़कने व दोबारा स्प्रे होने पर कुप्रभाव तथा अवांछित लक्ष्य पर स्प्रे गमन का खतरा रहता है। कीटनाशकों एवं फफूंदीनाशकों के उपयोग के लिए अति उपयुक्त है।

खोखला भांकुनुमा स्प्रे नोज़ल

स्प्रे किनारों पर ज्यादा होती है। कीटनाशक, व फफूँदनाशक दवाओं के प्रयोग हेतु उपयुक्त है। कीटनाशक व फफूँदनाशक दवाओं के प्रयोग हेतु विविध नोज़लों वाली बूम पर प्रयोग किया जाता है। स्प्रे लक्ष्य पर विभिन्न कोणों से पहुंचती है। स्प्रे छिटकने का खतरा होता है।

छिड़काव करते समय ध्यान रखने योग्य बातें

- फ्लैट फैन नोज़ल का विविध नोज़लों वाली बूम पर प्रयोग करने से खेत में स्प्रे की ऊंचाई को इस तरह निश्चित करें कि प्रत्येक नोज़ल द्वारा की गई स्प्रे किनारों पर 30 % क्षेत्र तक दोबारा स्प्रे से ढ़क जाए। ऐसा करना विभिन्न आकार व कोणों वाले सभी फ्लैट फैन नोजलों के लिए आवश्यक है। स्प्रे के प्रयोग करने का मुख्य उद्देश्य एक या ज्यादा नोज़लों को इस्तेमाल करके फसल–विनाशी–प्रतिघातकी रसायन को किसी विशेष लक्ष्य बिन्दु पर डालना होता है।

- प्रयोग में आने वाली दवाओं की मात्रा भूमि क्षेत्र के आधार पर मापी जाती है, चाहे स्प्रे पूरे क्षेत्र पर न किया जाए। निर्देशित स्प्रे हेतु खोखले शंकुनुमा नोज़ल उत्तम होते हैं। कीटनाशक व फफूंदनाशक दवाओं की स्प्रे के प्रयुक्त होती है। स्प्रे करते समय बूम को इधर–उधर न हिलाएं। अकेले नोज़ल वाली बूम को एक सिरे से दूसरे सिरे तक लहराकर किसी शाकनाशी का छिड़काव करने पर पूरे खेत में कई स्थानों पर कहीं ज्यादा और कहीं कम दवा का प्रयोग हो जाता है। कुल मिलाकर स्प्रे उचित प्रतीत होता है लेकिन पूरे खेत में स्प्रे एकसार न होकर कहीं ज्यादा तो कहीं कम हो जाता है।

- स्प्रे यंत्रों की कार्यक्षमता को प्रभावित करने वाले निम्नलिखित तीन कारक हैं : (क) गति, (ख) नोज़ल क्षमता एवं (ग) दबाव। शाकनाशी प्रयोग पर गति का प्रभाव, जब बूम से निकास एक जैसा रहे तो स्प्रे यन्त्र द्वारा डाला गया शाकनाशी चलने की गति के विपरीत अनुपात में होता है। जैसे–जैसे गति बढ़ती है शाकनाशी प्रयोग घटता जाता है।

- नोज़ल क्षमता का शाकनाशी निकास पर प्रभाव एक जैसे दबाव व गति पर, नोज़ल क्षमता का शाकनाशी निकास से सीधा अनुपात होता है। नोज़ल से निकास इसकी बढ़ती क्षमता के साथ–साथ बढ़ता है। एक निश्चित दबाव पर नोज़ल की विशेष निकास दर होती है। निकास दर दबाव के अनुसार बढ़ती और घटती है।

- जब हवा न चलती हो तभी स्प्रे करना उचित है। हवा से स्प्रे की बूंदें उड़ जाती हैं। ये बूंदें साथ के खेतों में लगी फसलों व सम्पर्क में आने वाले मनुष्य या पशुओं को नुकसान पंहुचा सकती हैं। स्प्रे की छोटी बूंदें विशेषतः ज्यादा छिटकती हैं। स्प्रे करते समय ज्यादा दबाव पर बहुसंख्य छोटी बूंदें बनती हैं।

- स्प्रे–धारा के छिटकाव के मुख्य कारण मे (क) बूंदों का आकार : छोटी बूंदें अक्सर ज्यादा उछलकर दूर तक चली जाती हैं। छोटे नोज़ल में ज्यादा दबाव रखने पर स्प्रे की बूंदें अधिक छोटी निकलती हैं। (ख) स्प्रे नोक की ऊंचाई : स्प्रे की ऊंचाई ज्यादा रखने से हवा द्वारा छोटी बूंदों को लक्ष्य से दूर करने की सम्भावना बढ़ जाती है। (ग) हवा की गति तेज होने से बूंदों का छिटकाव भी बढ़ जाता है अतः जब हवा की गति तेज हो तो बड़े नोज़ल से कम दबाव रखकर स्प्रे करना चाहिए। (घ) तापमान : ज्यादा तापमान (25^0 सेल्सियस) कम आर्द्रता पर छोटी बूंदें बनाने में सहायक होता है जो वाष्पीकरण के कारण ज्यादा दूर तक उड़ जाती है।

आधुनिक कटाई के यंत्र

फसल की कटाई समय पर करने के लिए अनेको यन्त्रों का भी विकास किया गया है। मजदूरो द्वारा कटाई करने के लिए विभिन्न प्रकार की उन्नतिशील दरांती का विकास किया गया है। मजदूर इन दरांतीयों से फसल की कटाई जल्दी एवं कम मेहनत से कर सकते है। बड़े किसानो के लिए शक्ति चालित कटाई यन्त्रो का विकास किया गया है। बड़े पैमाने पर कट़ाई करने के लिए सयुंकत कटाई एवं गहाई मशीने (कम्बाइन हार्वेस्टिर) का प्रयोग किया जाता है। कम्बाइन मशीन एक ही वार में फसल को काटकर, दाना निकाल कर एवं साफ करके इकटठा करती जाती है। पंजाब के किसानों में यह मशीन काफी लोकप्रिय है जो कि अब धीरे धीरे देश के अन्य हिस्सो में किराये के रूप में कम्बाईन का प्रयोग किया जा रहा है। खास कर पूर्वी एवं पश्चिमी उ.प्र. में पंजाब के कम्बाईन कटाई के सीजन में आने पर किसानो की धान एवं गेहूँ की कटाई एवं गड़ाई आसान हो गयी है।

रीपर

यह मशीन अनाज वाली फसलो को कट़ाने के लिए प्रयोग की जाती है मुख्यत रीपर दो प्रकार का होता है।

- पावर टिलर से चलने वाला रीपर

- ट्रैक्टर से चलने वाला रीपर

रीपर यन्त्र की एक नई डिजाइन (वर्टीकल कनवेयर रीपर) का आजकल ज्यादा प्रयोग हो रहा है। इस मशीन को ट्रैक्टर व पावर टिलर के आगे लगाया जाता है। इस मशीन द्वारा गेहू, धान आदि फसलो की कटाई करके एक लाइन में गिराती जाती है जिसको एक आदमी इक्टठा कर सकता है। अन्य प्रकार के रीपरो में एक लाइन में फसल को काटकर करने की सुविधा नहीं है।

रीपर की कार्यक्षमता

1. 35 अश्व शक्ति यच. पी. के ट्रैक्टर से चलने वाला रीपर 5 हेक्टयेर खेत की फसल एक दिन में काट सकता है। इसकी क्षमता फसल की किस्म, उसकी स्थिति तथा फसल की दशा पर निर्भर करता है ।

2. आमतौर पर रीपर की कार्य क्षमता 75 से 90 प्रतिशत तक होती है इस मशीन से 9 प्रतिशत से अधिक फसल का नुकसान नहीं होता है।

3. रीपर की फसल कटाने की क्षमता रीपर की आगे की चाल पर निर्भर करती है फसल काटते समय यह चाल 3–6 किलीमीटर/घण्टा होती है।

4. रीपर से फसल कटने के बाद या तो ऐसे ही छोड़ देता है या एक तरफ लाइन में लगाता जाता है बाद में बडंल मे बाध कर इक्टठा कर लिया जाता है। श्रमिकों से मजदूरी पर करबाने पर 100–200 मजदूर घण्टा प्रति हेक्टेयर फसल काटकर इकटठा करने में लगती है।

5. पानी देने के लिए जो नालियॉ बनाई जाती है उनके ऊपर से रीपर चलाना मुश्किल होता है और कभी कभी मशीनो की टूट फूट होती है। मशीन का प्रयोग करने से पहले इन्हे हटा देना चाहिए।

6. कम नमी वाली फसल को कटाने पर अनाज झड़ने से नुकसान होता है और अधिक नमी वाली फसल का कटर वार में अटकने की संभवाना होती है जिससे रीपर के टूटने का डर रहता है। इसलिए फसल में उचित नमी होनी चाहिए। नमी की मात्रा का अनुमान दाना मुह में डालकर लगाया जा सकता है। अगर दाना आसानी से अनाज के साथ टूट जाता है तो वह फसल कटाई योग्य मानी जाती है।

रीपर चलाने से पूर्व की जॉच

- रीपर और शक्ति स्रोत को भली भॉति जोड़े। जोड़ने के बाद इसकी पूर्ण रूप से तसल्ली कर ले कि यह जोड़ ढीला तो नहीं है।

- रीपर का समतलीकरण तथा आगे का झुकाव ठीक तरह से करें।

- रीपर के सारे नट बोल्ट देखकर ठीक से कस दें।

- रीपर का रजिस्ट्रेशन ठीक करे।
- कटर वार की कटिंग पत्तियॉ ठीक हो तथा पिटमैन का जोड़ ठीक से जुड़ा होना चाहिए।
- ठीक नमी पर फसल की कटाई करें।
- जब हवा तेज बह रही हो तब कटाई न करें ताकि फसल इधर उधर न बिखर जाये।

संयुक्त कटाई गहाई यन्त्र (कम्बाइन हारवेस्टर)

कम्बाइन हारवेस्टर का उपयोग विकसित देशों मे काफी समय से हो रहा है परन्तु भारत मे इसका प्रयोग कुछ समय पूर्व ही हुआ है अब कम्बाइन हारवेस्टर का निर्माण भी शुरू हो गया है।

कम्बाइन हारवेस्टर के प्रयोग से लाभ

कम्बाइन से गेंहूँ की कटाई और गहाई करने से कुछ मुख्य लाभ है जो निम्न है।

- फसल की कटाई, मड़ाई एवं सफाई एक साथ की जाती है।
- इस यन्त्र के प्रयोग से अधिक क्षेत्र की कटाई कम समय में की जाती है।
- मजदूरों पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं रहती है।
- बारिस या ओलो से होने वाला नुकसान कम हो जाता है।

कम्बाइन हारवेस्टर के प्रयोग की कुछ सीमाएं

- मशीन की कीमत अधिक होने से छोटे किसान खरीद नहीं पाता है।
- कम्बाइन के प्रयोग छोटे साइज के खेत व ऊँचे मेड़ या नालियॉ होने पर चलाने पर मुश्किल होती है।
- कम्बाइन से खेत की कटाई करने से भूसा का नुकसान हो जाता है दूसरे मशीन द्वारा इक्टठा करना पडता है अन्यथा किसान को भूसे की कमी महसूस होती है।
- बडे किसान कट़ाई के बाद खेत में पड़े भूसे या पौध को जला देते है जिससे वतावरण दूषित होता है भूसे को न जलाने पर खेत में दूसरी फसल उगाने पर दीमक का आक्रमण होने का डर रहता है।
- मशीन की मरम्मत रख रखाव व देख भाल ज्यादा करनी होती है कट़ाई का सीजन खत्म होने के बाद मशीन की सफाई ठीक प्रकार से करनी चाहिए।
- प्रयोग में आने जाने वाले खेत की लम्बाई एवं चौडाई की माप उचित होना चाहिए जो कि एक निश्चित कम क्षेत्रफल होने पर कम्बाइन का प्रयोग नहीं हो पाती है।

उपयोग की गयी म□ीनों के परीक्षण का परिणाम

खेत में किये गये परिक्षण से ज्ञात होता है कि रीपर द्वारा एक हेक्टयेर की कटाई 3.57 से 4.17 घन्टे में की जाती है तथा डीजल खपत 1 लीटर/घंटा है। रीपर द्वारा कटाई करने पर जमीन से कटाई की ऊँचाई 45 से 50 मिमी. होती है तथा कटाई की दक्षता 50 से 55 प्रतिशत है। इस मशीन से कटाई करने में कुल खर्च करीब 380 रूपये/हेक्टयेर है जो कि आदमी द्वारा कटाई करने से कटाई के खर्च में करीब 70 प्रतिशत की बचत होती है। यह मशीन छोटे एवं मध्यम किसानो के लिए उत्तम होती है।

सारणी–2 को देखने से ज्ञात होता है कि कम्बाईन हारवेस्टर से एक हेक्टेयर खेत की कटाई करीब 0.8 से 1 घंटे में की जा सकती है जबकि ईधन की खपत 10 लीटर/घंटा के हिसाब से आती है। इस मशीन की कटाई की दक्षता 55 से 60 प्रतिशत होती है जबकि कटाई में छोडने तथा बिखरने में नुकसान का प्रतिशत 1 से 1.5 होता है। कटाई की ऊँचाई जमीन से लगभग 25 से 30 सेन्टीमीटर होती है। इस मशीन द्वारा कटाई तथा मड़ाई मे कुल खर्च 1000 रू/हेक्टेयर आता है जो कि हाथ द्वारा कटाई एवं मडाई करने से 70 से 75 प्रतिशत तक की बचत होती है।

सारणी–2. कम्बाईन हारवेस्टर का तकनीकी माप

विविरण	मूल्य/माप
अ. कम्बाईन हारवेस्टर का तकनीकी माप	
कटिंग बार की लम्बाई (मिमी.)	4500
कटाई की चौडाई (मिमी.)	4320
कम से कम कटाई की ऊचाई (मिमी.)	75–90
इंजन की शाक्ति (यच.पी.)	105
ब. कार्य क्षमता	
कटाई की चाल (किलोमीटर/घन्टा)	4.0–4.5
कटाई की ऊँचाई (मिमी.)	250–300
प्रभावी कटाई की क्षमता (हे./घन्टा)	1.00–1.25
प्रभावी कटाई की क्षमता (घन्टा/हे.)	0.8–1.0
कटाई की दक्षता (%)	55–60
कटाई में छोडने का प्रतिशत	1.0
कटाई में बिखरने से नुकसान (%)	0.5
इर्घन की खपत (लीटर/घन्टा)	10.0
खेत से छोड़े गये भूसे की मात्रा (ग्राम/मी.^{2})	500
कटाई में कुल खर्च (रू./हे.)	1000
ऊर्जा की आवश्यकता (जूल/हे.)	500–550

संसाधन संरक्षण यन्त्र एवं तकनीकें

कंचन सिंह

कृषि प्रणाली अनुसंधान निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ 250 110 (उ.प्र.)

भारत विविध प्राकृतिक संसाधनो यथा जल, मृदा, जलवायु, आदि से परिपूर्ण राष्ट्र है। पिछले 6 दशकों के दौरान हमारी बढ़ती आबादी तथा उसके भरण पोषण हेतु अत्यधिक उत्पादन देने वाली फसलो की सघन कृषि के माध्यम से हमने एक तरफ खाद्यान्न आपूर्ति तो कर ली है लेकिन यह आपूर्ति हमने अपने बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधनो की एक बड़ी कीमत देकर प्राप्त की है। परिणाम स्वरूप बढ़ता मृदा अपक्षरण, उर्वरता ह्रास, घटता जल स्तर, जल व वायु प्रदूषण एक बड़ी चुनौती के रूप में हमारे सामने खड़ी है। साल दर साल उत्पादन लागत में वृद्वि के फलस्वरूप किसानो की आर्थिक दशा दिन प्रतिदिन खराब होती जा रही है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम प्राकृतिक संसाधनो को संरक्षित करने वाली कृषि पद्वतियॉ, यंत्र व तकनीकों का प्रयोग करके उत्पादकता लाभ के साथ–साथ दीर्घकाल तक कृषि को टिकाऊ बनायें व वातावरण को सुरक्षित रखें।

चित्र 1. भून्य कर्शण कृशि

संरक्षण कृशि

संरक्षण कृषि, खेती की वह पद्वति है जिसमें कृषिगत लागत कम रखते हुए अत्यधिक लाभ व टिकाऊ उत्पादकता ली जा सकती है। साथ में प्राकृतिक संसाधनो जैसे जल, मृदा वातावरण व जैविक कारकों में संरक्षण को बढ़ावा मिलता हैं। इसमें कृषि क्रियायें उदाहरणार्थ शून्य कर्षण या अति न्यून कर्षण के साथ–साथ कृषि रसायनों एवं अकार्बनिक व कार्बनिक स्रोतों का संतुलित व समुचित प्रयोग होता है ताकि विभिन्न जैव क्रियाओ पर विपरीत प्रभाव न पड़े।

संरक्षण कृशि के सिद्वान्त व विधियॉ

संरक्षण कृषि तीन प्रमुख सिद्वान्तो पर आधारित है जो कि एक दूसरे के पूरक हैं।

(अ) मृदा का दीर्घ काल तक अति सीमित कर्षण

(ब) भूमि के उपरी सतह का कार्बनिक स्रोतो से ढ़के रहना

(स) फसल विविधीकरण व सघनीकरण

उपरोक्त सिद्वान्तो के आधार पर संरक्षण कृषि की प्रमुख यांत्रिक व शस्य विधियॉ निम्न है।

सीमित कर्शण या न्यूनतम टिलेज

इस तकनीक में स्ट्रिप व रोटरी टिलेज मुख्य है। इसमें खेत की जुताई इतनी कम की जाती है कि बीज के उगने व अच्छी पैदावार हेतु उचित माध्यम तैयार हो तथा साथ में लागत व ऊर्जा का व्यय न्यूनतम हो। उदहारण के तौर पर पंक्ति, जुताई, प्लाऊ–प्लांट टिलेज व ह्वील ट्रेक प्लांटिंग मुख्य रूप से प्रयोग किये जाते है। इनके उपयोग से परम्परागत बुवाई की तुलना में 70 से 80% समय, मजदूर, डीजल, लागत व ऊर्जा की बचत तथा 5% पैदावार में तथा 10% शुद्व लाभ में वृद्वि होती है।

जीरो टिलेज (□ून्य कर्शण)

इस तकनीक में जीरो टिलेज मशीन जो कि सामान्य सीड ड्रिल जैसी होती है तथा इसकी फालें चाकू नुमा होती है जो कि खेत में चीरानुमा कूॅड बनाती है तथा बीज व खाद अलग–अलग गहराई पर डाल देती है। इस मशीन के प्रयोग से परम्परागत बुवाई की तुलना में 75 से 85% समय, मजदूर, डीजल, लागत व ऊर्जा की बचत तथा 8–10% पैदावार व 10–12% शुद्व लाभ में वृद्वि होती है। प्रति एकड़ बचत लगभग 1800 से 2000 रूपये होने की वजह से 10–15 एकड़ में प्रयोग करने से ही मशीन की कीमत वसूल हो जाती है।

बेड प्लांटिंग

इस तकनीक में बेड प्लांटर मशीन द्वारा खेत की बुआई होती है। इससे 2 बेड व तीन क्यारी कम से कम तैयार कर खाद व बीज डालकर विभिन्न फसलों की बुआई की जाती है। इस विधि से बेड के ऊपर कम पानी की

आवश्यकता वाली तथा नाली में अधिक पानी की आवश्यकता वाली फसले बोयी जा सकती है। इस तकनीक से बुवाई में लगभग 76 से 85% समय, मजदूर, डीजल लागत व ऊर्जा की बचत तथा 2–3% पैदावार व 5–6% शुद्व लाभ में वृद्वि होती है। साथ ही लगभग 20 से 30% सिचांई जल की बचत होती है।

धान की सीधी बुवाई

खेत की पडलिंग करके धान की रोपाई की तुलना में सीधी बुवाई कम श्रम के साथ अधिक लाभ देती है। इस विधि से सूखे खेत की जुताई करके धान की बुवाई की जाती है। इस तकनीक से 60 से 70% समय, मजदूर, डीजल लागत व ऊर्जा की बचत के साथ लगभग रोपाई तकनीक के बराबर पैदावार व 10–15% अधिक शुद्व लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

म□ीन से धान की रोपाई

अब स्वचालित एवं हस्तचालित मशीनें उपलब्य हैं जिनसे धान की रोपाई (1 घंटे में आधा एकड़ तक) की जा सकती है। इससे लगभग 60% श्रम व 80% लागत कम होती है जबकि 10% पैदावार व 15–20% शुद्व लाभ में बढ़ोत्तरी होती है।

लेजर पाटा द्वारा भू–समतलीकरण

इस आधुनिक पाटा में लेजर किरणों के प्रयोग से बड़े क्षेत्रफल को पूरी तरह समतल किया जाता है। इससे मेड़ व नाली नहीं बनानी पडती, 3% अतिरिक्त क्षेत्रफल मिलता है, पानी पूरे क्षेत्र में बराबर लगता है जबकि लागत लगभग 500 रूपये प्रति घन्टे लगती है ।

फसल अव□ेश प्रबन्धन

धान की कम्बाइन मशीन से कटाई के उपरान्त हेवी व टर्बो सीडर मशीनों द्वारा गेहूँ की सीधी बुवाई की जाती है। फसल अवशेष सड़कर मिटटी की उर्वरा शक्ति में वृद्वि करता है। मृदा संरचना में सुधार तथा सिंचाई जल उपयोग क्षमता में भी वृद्वि होती है।

इन प्रभावी व पर्यावरण संरक्षण करने वाली कृषि तकनीको को अपनाकर प्राकृतिक संसाधनो का संरक्षण कर उत्पादकता लाभ के साथ–साथ दीर्घकाल तक टिकाऊ खेती की जा सकती है।

फसल कटाई उपरान्त तकनीकी एवं खाद्य प्रसंस्करण

समशेर

संयुक्त निदेशक शोध सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ

फल और सब्जी आहार के महत्वपूर्ण अंग हैं। इनके द्वारा प्रचुर मात्रा में विटामिन्स, मिनरल तथा फाइबर मिलता है जो अनेक बीमारियों से मुक्ति दिलाने में सहायक होता है। मौसमी होने के कारण, सभी फल व सब्जियाँ हर समय और हर स्थान पर प्राप्त नहीं होते अतः इनको भण्डारण के जरिये या फिर प्रसंस्करण व परिरक्षण करके लंबी अबधि तक उपलब्ध कराया जा सकता है। वर्तमान समय में फल एवं सब्जी का कुल वार्षिक उत्पादन लगभग 130 मिलियन टन जिसमें उनका योगदान क्रमशः 37 एवं 63 प्रतिशत है। फल और सब्जी की तुडाई से लेकर उनके उपयोग तक के दौरान लगभग 30 प्रतिशत अंश खराब हो जाता है, इसलिए मौसमी पैदावार अधिक होने की वजह से इनके मूल्यों में गिरावट को रोकने और अधिक दिनो तक इच्छानुसार इस्तेमाल के कटाई उपरांत उनका प्रसंस्करण एवं गुणबत्ता में सुधार हेतु उपलब्ध तकनीक का ज्ञान एवं इस्तेमाल विधियों की जानकारी होना अतियन्त आवश्यक हैं। फलों और सब्जियों में विभिन्न किस्म के रासायनिक यौगिक होते है और उनकी रचना में काफी विविधता होती है। इनमें निम्नलिखित तत्व होते है।

जल

फलों एवं सब्जियों में सबसे ज्यादा पाया जाने वाला तत्व जल ही है, जो इनके सम्पूर्ण वजन का 95 प्रतिशत तक हो सकता है। इनमें जल की मात्रा पौधे को प्राप्त होने वाले पानी, संरचनात्मक विभिन्नता और संवर्धन की अवस्थानुसार विभिन्न हो सकती हैं।

कार्बोहाइड्रेट

सामान्य शर्करा, प्रकाश संश्लेषण का तुरंत उत्पाद हैं और पादप ऊतकों का वृहद् ढाँचा रूप से मोनोसैकराइड के जटिल अणुओं से बनता है। फल एवं सब्जियों का सम्पूर्ण कार्बोहाइड्रेट दो से तीस प्रतिशत के बीच रहता है। फलों में सामान्यतया कार्बोहाइड्रेट उच्चतम मात्रा में होता है और परिपक्व अवस्था में, इसका अधिकांश भाग शर्करा के रूप में होता है।

प्रोटीन

प्रोटीन फल एवं सब्जियों में एक प्रतिशत से भी कम होती है, परन्तु जीवित कोशिका–द्रव्य का एक मुख्य ठोस तत्व होने से इसे भी संरचना का एक आवश्यक तत्व समझना चाहिए। कुछ पत्ती वाले सागों तथा मीठी मक्का

में 4 प्रतिशत से भी ज्यादा प्रोटीन हो सकती है। फलीदार फसलों के बीजों में प्रोटीन प्रचुर मात्रा में होता है जो आठ प्रतिशत तक हो सकता है।

लिपिड

लिपिड की मात्रा एक प्रतिशत से भी कम होती है। यह एवाकेडो और जैतून को छोड़कर पौधों के अंगों की सतह पर, रक्षणीय ऊतकों में ही पाई जाती है।

जैव अम्ल

जैव अम्ल, कार्बोहाइड्रेट के धीरे–धीरे पचने के समय पैदा होते हैं। फल एवं सब्जियाँ, स्वाद में मूल रूप से खट्टे होते हैं। खटास की मात्रा नींबू में 6 प्रतिशत तक होती है। आडू में मैलिक अम्ल की मात्रा अधिक पाई जाती है। पालक में आक्सैलिक अम्ल तथा अंगूर में टार्टरिक अम्ल की वजह से खटास होती है।

खनिज और विटामिन्स

खनिज लवण की मात्रा 0.1 से 4.4 प्रतिशत तक हो सकती है। फल एवं सब्जियों में खनिज लवण की मौजूदगी इनकी किस्म, भूमि तथा उर्वरक इत्यादि पर निर्भर करती है। सब्जियों में खनिज लवण की मात्रा फलों की अपेक्षा अधिक होती है। कुछ लवण प्रचुर मात्रा में होते हैं जैसे पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, लोहा, गंधक, फास्फोरस, नाइट्रोजन इत्यादि तथा कुछ सूक्ष्म मात्रा में रहते हैं, जैसे तांबा, मैगनीज, जस्ता, बोरॉन, क्लोराइड इत्यादि।

फल एवं सब्जियों में विटामिन का अंश, उनकी ताजगी, किस्म और बढ़वार के दौरान जलवायु सम्बन्धी अवस्था पर निर्भर करता है। फल एवं सब्जियों में विटामिन 'ए' कैरोटीन के रूप में रहता है। पीले रंग के फल जैसे आम, पपीता, कद्दू और हरी सब्जियाँ जैसे गाजर इत्यादि कैरोटीन का मुख्य स्रोत हैं। विटामिन 'सी' भी आंवला, अमरूद, बेर, नींबू वर्गीय फलों, टमाटर, आलू और हरी सब्जियों में बहुतायत में पाया जाता है। 'बी' समूह के विटामिन भी फल और सब्जियों में पाये जाते हैं।

परिरक्षण/प्रसंस्करण की विधियाँ

फल एवं सब्जियों के परिरक्षण एवं प्रसंस्करण की अनेक विधियाँ हैं। इनका प्रयोग फल एवं सब्जियों की अवस्था, किस्म व उपयोग, अवधि, पौष्टिकता इत्यादि कई बातों पर निर्भर करता है। प्रसंस्करण एवं परिरक्षण की मुख्य विधियों का वर्णन निम्नलिखित है।

1. सुखाना एवं निर्जलीकरण
2. ताप उपचार–पास्तेतीकरण (Pasteurization) और निर्जमीकरण (Sterilization)
3. निम्न–ताप उपचार –प्रशीतन और हिमीकरण

4. विभिन्न रासायनिक योज्य (Additives)

5. आयनकारी विकिरण (Ionizing radiations)

6. फल एवं सब्जी उत्पाद–जैम, जेली, अचार, सिरका, स्क्वैश, डिब्बाबंद फल एवं सब्जी, टमाटर केचप, चटनी इत्यादि।

फल एवं सब्जियों को निम्न विधियों के द्वारा सुखाया जा सकता है।

(i) धूप (सूरज की रोशनी) द्वारा, (ii) पाली हाउस/सोलर ड्रायर, (iii) ट्रे ड्रायर, (iv) वैक्यूम ड्रायर, (v) फ्लूडाइज्ड बेड ड्रायर, (vi) स्प्रे ड्रायर, (vii) ड्रम ड्रायर,(viii) फ्रीज ड्रायर, (ix) माइक्रोवेव हीटिंग द्वारा।

उद्यमिता विकास सम्बन्धी जानकारियाँ

प्रसंस्करण की इकाइयों की स्थापना कहाँ, कैसे और क्यों की जाये? इन सभी बातों पर ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए जिससे नई फैक्ट्रियाँ स्थापित करने और भविष्य में विस्तार करने में सुविधा हो। उद्यमिता विकास के लिए निम्नलिखित व्यावसायिक जानकारी प्राप्त करना बहुत आवश्यक है।

निवे

भूमि, इमारत और मशीनरी का निवेश पूँजी लागत में शामिल होता है। व्यवसाय चलाने के खर्च में कच्चा माल, श्रम, संसाधन, संचयन, परिवहन और वितरण भी शामिल रहता है।

फैक्टरी स्थल–

फैक्टरी की इमारत–

जल व्यवस्था–

स्वच्छता–

निकास–

मजदूरी–

मशीनरी व अन्य सम्बधित उपकरण–

अन्य प्रबन्ध–कच्चा माल, शीत भण्डार व्यवस्था, गोदाम, प्रयोगशाला–

फल उत्पाद आदेश (1955, 1974 (संशोधित) – (फूड प्राडक्ट्स आर्डर)

निदेशक (फल और सब्जी परिरक्षण), खाद्य व पोशाहार मण्डल, खाद्य विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ही अनुज्ञापन अधिकारी होता है। यहीं, व्यावसायिक तौर पर फल और सब्जी परिरक्षित उत्पाद बनाने के वास्ते अनुज्ञापत्र जारी करता है। बिना इस अनुज्ञापत्र के कोई भी व्यक्ति परिरक्षित उत्पाद न तो बना सकता है और न बेच सकता है।

फल एवं सब्जी के विभिन्न उत्पाद

– सुखे फल एवं सब्जी	:	आम, केला, चीकू, गाजर, मूली, शलजम, तथा अन्य फल एवं सब्जी से सूखे उत्पाद बनाये जा सकते हैं।
– फल एवं सब्जी पाउडर	:	मशरूम, चीकू, पपीता, आंवला, टमाटर इत्यादि।
– डिब्बाबन्द फल एवं सब्जी (कैन्ड)	:	अमरूद, अंगूर, आड़ू, आलू बुखारा, आम, केला, खुमानी, पपीता, नाशपाती, स्ट्रोबेरी, नारंगी, मशरूम, आलू, गाजर, चुकन्दर, टमाटर, पत्तागोभी, पालक, फूलगोभी, मटर, शकरकंद, शलजम, सेम
– जैम, जैली एवं मार्मलेड	:	जैम–सेव, पपीता, चीकू, बेर, सन्तरा, नाशपाती, आम, जैली–अमरूद, अंगूर, स्ट्राबेरी, अन्य खट्टे फल, मार्मलेड–नीबू, सन्तरा, माल्टा
– फल रस और पेय	:	विशुद्ध फल रस, स्क्वाश, फल शर्बत, कार्डियल, नेक्टर, आर.टी.एस. पेय। उपरोक्त पेय चीकू, बेर, नीबू वर्गीय फल, गूज बेरी, आम व स्ट्राबेरी से बनाये जा सकते हैं।
– मुरब्बा व कैन्डी	:	आंवला, कच्चे आम, गाजर, बेर
– अचार, चटनी व सॉस	:	नींबू, आम, करौंदा, फूलगोभी, मिर्च, गाजर
– टमाटर के उत्पाद	:	टमाटर रस, प्यूरी, पेस्ट, कैचप, चटनी, सॉस, सूप इत्यादि उत्पाद बनाये जा सकते हैं।

फल एवं सब्जियों के अपशिष्ट पदार्थो (बाई–प्राडक्ट्स) से भी अन्य उत्पाद जैसे तेल, पेक्टिन, नीबू अम्ल, फेस पैक तथा सिरका इत्यादि बनाये जाते हैं।

डिब्बाबन्दी की विधि

फल /सब्जियों का चयन

⬇

छँटाई एवं श्रेणीकरण

⬇

धुलाई

⬇

फल एवं सब्जी के छिलके छीलना
(हाथों द्वारा, उष्मा द्वारा, यांत्रिक छीलन, लाई द्वारा छीलन)

⬇

छोटे–छोटे टुकड़ों में कटाई

⬇

श्वेतन क्रिया (ब्लांचिंग)

⬇

ठंडा करना (शीतलन)

⬇

डिब्बा भरना

⬇

शरबत एवं लवण जल भरना

⬇

ढक्कन लगाना

⬇

श्रेचन (एक्झास्टिंग)

⬇

डिब्बा बन्द करना
(डबल सीमिंग)

⬇

तप संसाधन

⬇

शीतलन

⬇

लेबल लगाना

⬇

भण्डारण एवं वितरण

खेती में लागत कम तथा ज्यादा लाभ कैसे

एस.पी. सिंह एवं नवल सिंह

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम मेरठ

राष्ट्र की समृद्वि व विकास केवल अत्याधिक कृषि व औद्योगिक उत्पादन पर निर्भर न होकर बचत व वास्तविक आय को बढाने के उपयुक्त नये नये तरीके, प्रणालियां व साधनों की खोज अति महत्वपूर्ण है। पैदा की जाने वाली फसलों में कौन सी फसल अत्यधिक लाभदायक है। फार्म पर पाली जाने वाली गायों, भैंस, मुर्गियों, में कौन सी नस्लें अधिकतम आय वाली हैं। फसलों के रोगों की रोकथाम करने के लिए कौन सी दवा, खाद की लागत बहुत कम है। किन किन खेती करने की तकनीकियों से कम खर्च करके अधिक लाभ कमाया जा सकता है। प्रत्येक कृषक का उद्देश्य अपने फार्म से अधिक उत्पादन करना ही नही अपितु कम उत्पादन व्यय करके आय को बढ़ाना है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए विभिन्न आर्थिक कृषि सिद्वान्तों का प्रयोग करके फार्म उत्पादन में वृद्धि के साथ साथ उत्पादन लागत को घटाने के लिए भिन्न–भिन्न तरीके निम्न प्रकार से है।

किसान दो तरीके से प्रक्षेत्र की आय को बढ़ा सकता है

उत्पादन को बढ़ाकर : फार्म पर अनेक उद्योग धन्धे होते है जिनमें प्रत्येक की अलग–2 सफलता पर ही कुल फार्म की सफलता निर्भर करती है। अधिक उत्पादन तथा आय कैसे बढ़ायें उत्पादन व्यय कैसे कम करें। इन दोनों लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए निम्न तीन बातों पर ध्यान देना चाहिए

अ. भाव

ब. उत्पादन व्यय प्रति इकाई उपज

स. उपज प्रति हेक्टेयर

प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रुप से भाव, उत्पादन–व्यय तथा उपज प्रति एकड़ की अनुकूलता व प्रतिकूलता पर ही कृषि, कृषक व देश का भाग्य निर्भर करता हैं।

उत्पादन लागत को कम करके

कुल लागत या चल या अस्थिर लागत + अचल या स्थिर लागत

अस्थिर या अपरिवर्तनशील लागत : इससे अभिप्राय उस व्यय से है जोकि उत्पादन बढ़ने अथवा घटने के साथ साथ बढ़ता अथवा घटता है। अर्थात यदि फार्म पर उत्पादन न होगा तो अस्थिर लागत भी शून्य होगी। उदाहरणतः श्रमिक, बीज, खाद दवाईयों, सिंचाई खर्च, परिवहन एवं विपणन चल पूजी पर ब्याज आदि।

स्थिर अथवा अपरिवत□ील लागत : इससे तात्पर्य उस व्यय से है जो कि उत्पादन घटने, बढ़ने अथवा बिल्कुल भी उत्पादन न होने से सर्वत्र अप्रभावित रहता है। उदाहरणतः बीमा, विमूल्यन, लगान, ब्याज, स्थाई श्रम, पशुओ का जीवन निर्वाह आदि लागत उसे कहते है जिसे कुछ प्राप्त करने के लिए खर्च किया जाता है। उदाहरण के तौर पर टैक्स, बीमा, घसरा, लगान, ब्याज, स्थाई श्रम व पशुओं का जीवन–निर्वाह व्यय आदि।

इन दो लागतों के अतिरिक्त पांच और लागतें होती है जिनका जन्म अप्रत्यक्ष रुप से इन्ही दो लागतों के द्वारा होता है ये निम्नलिखत है :

1. कुल लागत
2. औसत लागत
3. औसत–स्थिर लागत
4. औसत–अस्थिर लागत
5. अतिरिक्त या सीमांन्त लागत

उत्पादन लागत प्रति हेक्टेयर व प्रति कुंन्तल या प्रति किलो

प्रति हेक्टेयर लागत या कुल लागत–सह उत्पादन की कीमत/फसल का क्षेत्रफल हेक्टेयर में प्रति कुंन्तल उत्पादन लागत या कुल लागत–सह उत्पादन की कीमत/मुख्य उत्पादन कुंन्तल में

सारणी–1. संसाधनो में विमूल्यन

क्रम.स0	विवरण	प्रति□ात
क.	**फार्म बिल्डिंग**	
	1. पक्का हाउस	2–5
	2. निम्न गुणवत्ता का पक्का हाउस	5
	3. कच्चा हाउस	10
ख	**दराती टोकरा,रस्सा आदि**	100
ग	**प्रक्षेत्र यंत्र**	
	1. लकडी के बने हुए	20
	2. बैल गाडी	15
द	**म□ीन**	
	1. चारा काटने की मशीन	15
	2. गन्ना पिराई की मशीन	10
	3. आयल इन्जन	10
	4. ट्रैक्टर	7

फार्म के संसाधनो में निम्न प्रकार विमूल्यन होता है। विमूल्यन के कुल चार्ज को विभिन्न फसलों के कुल क्षेत्रफल से गुणा करके निकालना चाहिये और जो फसल जितने महीने की है उतने से गुणा कर उस फसल की लागत में जोड देना चाहिए।

चल पूंजी पर ब्याज : इसको बैंक रेट पर फसल के आधे समय के लिए गणना की जाती है।

अपनी जमीन का किराया : यह प्रचलित रेट या उत्पाद का 1/6 लगाया जाता है।

जोखिम

खेती में जोखिम दो प्रकार के होते है

1. **व्यवसाय जोखिम** : जलवायु, बीमारियों तथा कीमतो के घटने बढ़ने से होती है।
2. **फाइनेसिंयल जोखिम** : कब और कहॉ से धन का इंतजाम करना चाहिए। धन देने वाले की जोखिम उसका मुख्य धन, ब्याज तथा अन्य देनदारियां है।
3. **अनिश्चितता** : यह निम्न प्रकार की होती है

(अ) **साधनों की** – भूमि, श्रम एवं पूजी की उपलब्धता

(ब) **उत्पादन** – उत्पादन में उतार चढ़ाव के ज्ञान में कमी से गुजरना पड़ता है

(स) **तकनीकी** – किसान को कृषि तकनीकी का ताजा ज्ञान होना चाहिये

(द) कीमत उत्पादन एवं कारको की कीमत का पूर्ण ज्ञान होना जरूरी है

(इ) **संस्थागत** – यह भूमि के लगान की शर्तों व ऋण देने वाली संस्थाओं एवं किसानों के दृष्टिकोण पर निर्भर करता है

निर्णय कैसे लें

निर्णय लेते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। हमेशा एक से ज्यादा फसल उगाना चाहिये साथ ही दूसरे व्यवसाय जैसे पशुपालन, मधुमक्खी पालन, बकरीपालन आदि करने से जोखिम कम होता है तथा लाभ ज्यादा होता है।

लचीलापन : फार्म की योजना बनाते समय योजना में लचीलापन रहना चाहिए जिससे जरूरत पड़ने पर तुरन्त बदलाव किया जा सके।

तरलता : कुछ ऐसे श्रोत्र होने चाहिये कि जरूरत पड़ने पर तुरन्त पैसा मिल सके जिससे यदि कोई कारक खाद या बीज खरीदने पर बचत की जा सके।

1. **केंपिटल रा□ानिंग** : सभी लाभकारी योजनाओ में खर्च करने के लिये ऋण लिया जा सकता है। लाभकारी व्यवसायों को क्रमवद्ध करना चाहिये जिससे ज्यादा से ज्यादा लाभ कमाया जा सकें।

2. **बीमा** : यह जोखिम को कम करता है तथा किसान का साहस बढ़ाता है।

3. ऐसे फसल व व्यवसाय चुनने चाहिये जिसके उत्पादन व उत्पाद की कीमतों में उतार चढ़ाव कम हो।

अभी तक किये गये अनुसंधानों से निम्नलिखित तकनीकियां लाभकारी पायी गई है जिनके द्वारा फसल का उत्पादन व्यय कम करके अधिक लाभ प्राप्त कर सकते है।

तकनीकियों से लाभ

1. **भून्य कर्शण** : हरियाणा के कैथल, करनाल, कुरूक्षेत्र, पानीपत एवं यमुनानगर तथा उत्तराखण्ड के उधमसिंह नगर जिलो में किसानो के आर्थिक अध्ययन से पता चला है कि शून्य कर्षण में 10–11 घन्टे प्रति हेक्टेयर समय तथा 4500 से 5500 रू तक की बचत होती है। इसके के साथ साथ 40 से 45 लीटर डीजल की बचत होती है। कुल करीब रू 3000 प्रति हे0 से ज्यादा लाभ प्राप्त हुआ। कृषि प्रणाली अनुसंधान निदेशालय मोदीपुरम मेरठ 2003–04 में किये गये एक अध्ययन के अनुसार गेंहू की शून्य कर्षण तकनीक के अन्तर्गत बुआई करने से सिचाई की मात्रा में करीब एक चौथाई की बचत की जा सकती है। इसके अतिरिक्त डीजल की प्रति हे0 खपत में 60 लीटर, प्रचालन लागत में 35.4 प्रतिशत तथा बीज की मात्रा में 6.8 प्रतिशत तक की बचत की जा सकती है। इसके अलावा खरपतवार की मात्रा में 20 प्रतिशत की कमी तथा जमाव करीब तीन दिन पहले हो जाता है क्योंकि इस तकनीक में खेत की तैयारी का समय 9.6 प्रतिशत बच जाता है तथा उर्वरक एवं बीज उचित स्थान एवं गहराई पर पड़ते है। परन्तु लाभ होते हुऐ भी किसान इस तकनीक को नहीं अपना रहे है उसके निम्नलिखित कारण है :

   - यह हल्की भूमि में उपयुक्त नहीं है।
   - शून्य कर्षण मशीन समय से उपलब्ध नहीं होना।
   - बीज की मात्रा की सही गणना न होना।
   - कुछ किसानो का मानना है कि इसका अंकुरण कम होता है तथा खतपतवार ज्यादा होते है।

2. **फसल पद्वतियां अपनाकर** : विभिन्न प्रकार की फसल प्रणाली जैसे गन्ना–पेडी–गेहूॅं, धान–आलू–सूरजमुखी, धान–आलू–गेहूॅं, व मक्का–आलू–प्याज इत्यादि फसल क्रमो को अपनाकर कम लागत में अधिक उत्पादन व अधिक लाभ कमा सकते है।

3. **हरी खाद बनाना** : रबी की फसल काटने व खरीफ की फसल बोने के मध्य काफी समय खेत खाली पड़े रहते है। अतः इस बीच के समय में हम हरी खाद लेकर अगली फसल की रसायनिक खाद की पूर्ति के साथ–साथ भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ा सकते है। जिससे उत्पादन में वृद्वि की जा सकती है।

4. **लेजर लैण्ड लैवलर से खेतों को समतल करना :** खेत का समतल होना भी आवश्यक होता है अन्यथा असमतल खेत में सभी जगह सिचाई का पानी भी नहीं पहुँचता है। जिससे जगह–जगह नमी की कमी हो जाती है और बीज का अंकुरण व पौधों की भौतिक वृद्वि वाधित होती है। इसके निदान हेतु आधुनिक यंत्र लेजर लैण्ड लैवलर से खेत को समतल कराना चाहिए। एक अध्ययन में पाया गया है कि लेजर संचाालित जमीन समतलीरण यंत्र से समतल किये गये खेतों में बिना समतल की तुलना में प्रत्येक सिचाई के दौरान करीब 25 प्रतिशत पानी की बचत होती है साथ ही साथ सपाट बुआई के मुकाबले पतली तथा हल्की उठी हुई ऐसी क्यारियों, जिनके दोनो तरफ सिचाई नालियां हों, बुआई करने से कुल सिचाई की मात्रा में लगभग 20 प्रतिशत की कमी आ जाती है। इस प्रकार लेजर लैंड लेवलर से समतल करने से प्राकृतिक सम्पदा (पानी) की बचत होगी और उत्पादन में भी वृद्वि होगी।

5. **संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करना :** प्रायः यह देखा गया है कि फसल को उर्वरकों की जरूरत न होते हुए भी किसान उसमें उर्वरक डालता रहता है। जिससे उत्पादन व्यय बढ़ जाता है और फसल की भौतिक वृद्वि भी अधिक हो जाती है। जिसके फलस्वरूप फसल गिर जाती है। इसका मुख्य नुकसान यह होता है कि फसल में या तो दाना पड़ता ही नहीं है और यदि दाना पड़ता भी है तो उसका आकार छोटा रह जाता है। जिससे उत्पादन प्रभावित होता है। अतः मिट्टी की जांच कराकर व फसल की मांग के अनुसार उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। इससे उत्पादन भी अधिक होगा और उत्पादन लागत कम आयेगी।

6. **मुख्य फसल में अन्तः फसलों की बुवाई करना :** यदि कृषक की जोत छोटी है तो वह मुख्य फसल जैसे सरसों, गेहूँ व गन्ना के साथ बीच में अन्तः फसलो के रूप में जैसे मसूर, चना, मटर के रूप में लेकर अपने परिवार की दाल व सब्जी की पूर्ति कर सकता है। साथ ही साथ मुख्य फसल की पैदावार अच्छी होती है। इस पद्वति से उत्पादन भी अधिक होता है।

7. **स्ट्रिप टिल ड्रिल विधि से फसलो की बुआई करना :** इस मशीन से बुआई करने से दोहरा लाभ होता है (1) खेत की तैयारी में जो ऊर्जा व पैसा का खर्चा कम लगता है दूसरे समय से फसल की बुवाई हो जाती है। अतः इसका प्रयोग करके भी अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

8. **बैड प्लांटिंग से बुआई करना :** इस विधि में बैड प्लान्टिंग रबी व खरीफ सीजन में बुवाई करके खाद व बीज की बचत की जा सकती है। इस विधि का सबसे बड़ा फायदा यह है कि सिंचाई में एक तिहाई पानी की बचत हो जाती है।

9. **स्प्रिंकलर सिस्टन व ड्रिप विधि से सिचाई करना :** इन दोनो विधियों से सिंचाई करने से पानी की काफी बचत हो जाती है साथ ही साथ भूमि में हर समय नमी बनी रहती है। जिससे फसल अच्छी तरह पकती है परिणामस्वरूप उत्पादन अधिक होता है। साथ ही साथ प्राकृतिक संसाधनों का अधिक दोहण होने से बचा जा सकता है।

10. कृशि विविधीकरण : जिस फार्म पर किसी एक व्यवसाय या वस्तु से आय पूरे फार्म की आय का 50 प्रतिशत से कम होती है उस फार्म को बहुप्रकारीय फार्म कहतें है। इस फार्म पर कृषि करने की क्रिया को बहुप्रकारीय खेती कहते है बहुप्रकारीय खेती को सामान्य खेती भी कहा जाता है। इस प्रकार के फार्मों पर कृषक विभिन्न प्रकार के साधनों पर निर्भर रहता है।

बहुप्रकार खेती के लाभ

बहुप्रकार खेती के निम्नलिखित लाभ होते है

- फार्म पर कार्यो का वितरण पूरे वर्ष समान रुप से रहता है।
- मृदा उर्वरता कर सुरक्षा फसलों के हेर फेर से सम्भव होती है।
- मिश्रित फसलों का बोना, भूमि पर अनुकूल फसलों का उगाना।
- फार्म के यन्त्रों का आर्थिक दृष्टि से ठीक–ठीक प्रयोग करना होता है।
- जेखिम कम हो जाती है।
- फार्म पर आय शीघ्रतापूर्वक और क्रम में हो जाती है।
- विभिन्न आय के साधनों के परिणामस्वरुप फार्म पर पूजीं नियोजन निर्भयता पूर्वक किया जा सकता है।
- बाजार भावों के उतार चढ़ाव बहुप्रकारीय खेती को अपेक्षाकृत कम प्रभावित करते है।
- नये सिरे से खेती करने वाले मनुष्य के लिए यह उत्तम प्रणाली है।

बहुप्रकार खेती से हानियां : बहुप्रकार खेती के निम्नलिखित हानियां होती है

- फार्म पर अधिक क्षमता व शक्ति वाली मशीन रखना असम्भव हो जाता है।
- फार्म के सभी कार्य यन्त्रों द्वारा नही किये जा सकते।
- फार्म पर विभिन्न प्रकृति के अधिक कार्य होने के कारण छोटी–छोटी चोरियों का पता लगाना मुश्किल हो जाता है।
- बाजार से क्रय विक्रय कम क्षमता से होते है।
- किसान को अवकाश कम मिलता है।

बहुप्रकार खेती की जरूरतें :

- यातायात की पर्याप्त सुविधाएं चाहिएं।
- श्रमिकों की आवश्यकता वर्ष भर आवश्यक है।

- मांग का अधिक होना आवश्यक है।
- किसान के पास पर्याप्त पूजीं होनी चाहिए।
- कृषक में एक सफल व्यापारी की क्षमता होनी चाहिए।

अधिक जोत वाले किसानों के साथ–साथ कम जोत वाले किसानों के लिए भी यह लाभप्रद है इसमें कृषि के साथ–साथ मछली पालन, मधुमक्खी पालन, मुर्गी पालन, सूअर पालन भी कर सकते है। जिससे कृषि उत्पादन के साथ इन एन्टरप्राइजेज से आमदनी बढ़ती है। इनको मुहुर्तरूप देने के लिये अधिक भूमि या पैसे की जरूरत नहीं होती है। और यदि कृषक की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है तो एन्टरप्राइजेज अपनाने के लिये सरकारी बैंको से ऋण भी उपलब्ध कराये जाते हैं। जिसको कृषक अपनी आमदनी के अनुसार आसान किश्तों में ऋण का भुगतान कर सकते है इस प्रकार कृषक सीमित क्षेत्र में भी अधिक लाभ अर्जित कर सकता है।

नीचे दी गयी सारणी–2 (हरिओम एट आल 2008) से यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि फसल उत्पादन, पशुपालन, मधुमक्खी पालन, और मिर्च की नर्सरी से क्रमशः रू0 522010, 29900, 225800 और 50000 तथा कुल आय 827710 रूपये प्राप्त होती है। लाभ व्यय का अनुपात क्रमशः 2.50, 1.28, 2.70 और 1.24 है। सबसे अधिक लाभकारी एन्टरप्राइजेज में फसलउत्पादन और मधुमक्खी पालन है जो कि कुल आय का क्रमशः 53.54 और 22.09 प्रतिशत है।

सारणी–2. चयनित फार्म के विभिन्न व्यवसायों का आर्थिक स्तर 2006–07

क्र.स.	एन्टरप्राइजेज	फसल उत्पादन	प□ुपालन	मधुमक्खी पालन	मिर्च की नर्सरी	फार्म की कुल आय
1	य्निट इकाई	25 एकड	भैस–5, गाय–1	225 कालोनी	0.5 एकड	0
2	कुल आय	869050	135600	358550	260000	1623200
3	कार्य व्यय	347040	105700	132750	210000	795490
4	कुल आय	522010	29900	225800	50000	827710
5	बी सी रेशो	2.5	1.28	2.7	1.24	2.04
6	फार्म आय में अनुपात	53.54	8.35	22.09	16.02	0
		208804	11960	90320	20000	331084

स्रोत– हरिओम एट आल 2008, कृषि विज्ञान केन्द्र कुरुक्षेत्र (चौ0 चरणसिंह कृषि विश्वविघालय) हिसार से प्रकाशित पत्रिका डाईवर्सीफिकेशन थ्रो फार्मिग सिस्टम अप्रोच 2006–07

अन्य तकनीक

उपरोक्त फसल उत्पादन की सभी तकनीकियों से लम्बे समय तक प्रभाव के अध्ययन (कृषि प्रणाली की वार्षिक प्रतिवेदन 2010–11) से प्राप्त आकड़ों से ज्ञात हुआ है कि गेंहू की परम्परागत बुआई की तुलना में शून्य, पटटी और रोटरी ड्रिल से क्रमशः 0.55, 0.41 एवं 0.44 हे0 प्रति घन्टे क्षेत्र बुआई हुई जिससे 57 से 86 प्रतिशत तक समय, श्रम, डीजल, लागत और ऊर्जा की बचत हुई। गेंहू की अधिक उपज 16 से 22 प्रतिशत, शुद्ध लाभ 27 से 31

प्रतिशत लागत प्रभावशीलता 24 से 27 प्रतिशत ऊर्जा दक्षता 34 से 37, खरपतवार में कमी 43 से 76 प्रतिशत और सिचाई जल उपयोग में कमी 9 से 10 प्रतिशत पाई गई है। गेंहू की परम्परागत बुआई की तुलना में बैड प्लान्टर से 0.35 हे0 प्रति घन्टे के साथ–2, 72–86 प्रतिशत समय, श्रम, डीजल, लागत उर्जा और 37 प्रतिशत सिचाई जल की बचत कर उच्च उपज 15 प्रतिशत शुद्ध लाभ 30 प्रतिशत लागत प्रभावशीलता 26 प्रतिशत, और गेंहूसा में 69 प्रतिशत एवं अन्य खरपतवारों में 67 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई।

उत्पाद का श्रेणीकरण :– कृषि उपज को गुणो के आधार पर बांटना अत्यन्त आवश्यक है। प्रत्येक श्रेणी के लिए विशेष नाम दिया जाना चाहिए इस श्रेणी के आधार पर कृषि उपज का विक्रण मूल्य तय किया जाता है।

संग्रहण :– कृषि उत्पादन मौसमी होता है। प्रत्येक कृषि उत्पाद वर्ष के विशेष महीनों मे ही आती है कुछ समय बाद पूरे वर्ष उनकी कमी बनी रहती हैं अतः यदि किसान उत्पाद को कहीं संग्रहण कर लेता है और उसे जब निकालता है जब उस उत्पाद की कमी होती है तो उसे उसका अच्छा मूल्य मिल जाता है।

वि□ीश उत्पाद की मंडियो का होना :– अनाज, सब्जी व गुड मंडियो के अलावा अन्य प्रकार जैसे फूल, औषधि पौधो, शहद, इत्यादि को सीधे विक्रय हेतु जिला स्तर या तहसील स्तर पर सरकारी केन्द्र होने चाहिये जिसे कृषक को उसका सही मूल्य प्राप्त हो सके।

जोखिम उठाना :– खेत से फसल को काटने और उसके विक्रय तक एक लम्बा समय होता है जिसके मध्य अनेक जोखिम जैसे आग लगना, अधिक वर्षा होना, औले पड़ना इत्यादि होते है इस जोखिम वाले समय का बीमा करके भी होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है।

ऋण व्यवस्था का अभाव :– कृषक को बीज, खाद, व कीटनाशी खरीदने हेतु कम ब्याज दर पर ऋण नहीं मिलता है। ऋण की व्यवस्था करने के अधिक ब्याज देना पड़ता है जिससे उत्पादन लागत बढ़ जाती है। अतः फसलों की बुआई के समय कृषक को कम ब्याज पर ऋण मिलना चाहिये जिससे उत्पादन लागत कम की जा सकती है।

विपणन सूचनाओं का प्रसारण :– उत्पादन की मूल्य की सूचनाओं का अधिक पारदर्शी व उपलब्ध होनी चाहिये कभी कभी दूरस्थ गांवो के किसानो को सूचना उपलब्ध नहीं हो पाती है। जिससे मध्यस्थ उत्पाद का सही मूल्य न देकर कृषक को नुकसान पहुचाता है और कृषक लाभ से वंचित रह जाता है।

किसी भी फार्म की आय को मापने के लिए निम्नलिखित माप दण्ड प्रयोग में लाये जाते है।

फार्म आय या वास्तविक आय :– फार्म के कुल उत्पादन मूल्य में से कुल उत्पादन लागत कम करके फार्म की वास्तविक आय की गणना की जाती है।

श्रम आय :– श्रम आय, वास्तविक आय में से पारिवारिक श्रम की आय तथा ब्याज घटाकर प्राप्त की जाती है।

श्रमो पार्जन :– यह श्रमिक आय के परिवार द्वारा उपयोग गये सामान का मूल्य तथा फार्म इमारत का किराया जोडकर प्राप्त की जाती है।

पारिवारिक श्रम आय :– श्रमोपार्जन में परिवार के सदस्यों के श्रम की मूल्य तथा पूंजी पर ब्याज जोड़कर इसकी गणना की जाती है।

समन्वित कृषि प्रणाली में सूचना का महत्व

हरबीर सिंह

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ (उ.प्र.) 250 110

कृषि क्षेत्र मे हो रहे आमूल–चूल परिवर्तन के परिपेक्ष में ठीक समय पर उपयुक्त जानकारी किसानो को मिलने का अत्याधिक महत्व है। हालंकि हमारी कृषि प्रसार प्रणाली दुनिया की सबसे बड़ी व्यवस्थाओ में से एक है, लेकिन इसका एक बड़ा हिस्सा, खासतौर पर राज्य–स्तर पर, काफी हद तक अव्यवस्था से ग्रस्त है। कृषि क्षेत्र में असंतोषजनक विकास एंव किसानो की खेती के प्रति रूचि में कमी का एक मुख्य कारण यह भी है कि उन्हें सही समय पर उपयुक्त सूचनाएं नहीं मिल पाती। जॅहा तक कृषि शोध व तकनीकी से सम्बन्धित जानकारी हस्तान्तरण का प्रश्न है, यह कार्य केन्द्र तथा राज्य स्तर पर कार्यरत कृषि संस्थाए करती है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद यह कार्य जिला स्तर पर देश भर मे फैले अपने कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा करती है। इस समय देश में लगभग 588 कृषि विज्ञान केन्द्र हैं और देश के लगभग हर जिले में यह केन्द्र मौजूद है। कृषि विज्ञान केन्द्र केवल कृषि तकनीक व सूचना का प्रसार ही नही करते बल्कि ये केन्द्र स्थानीय परिस्थितियों के हिसाब से कृषि तकनीक की प्रासंगिकता सुनिश्चित करते हैं और आवश्यकतानुसार ऐसी तकनीकी का परिष्करण (रिफाइनमेंट) भी करते है जिसकी उपयोगिता स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप हो। सार्वजनिक क्षेत्र के कृषि सूचना हस्तांतरण के प्रयासों के अलावा निजी क्षेत्र (प्राइवेट सेक्टर) भी संचार के आधुनिक साधनो का इस्तेमाल करते हुए कृषि सूचना प्रसार में अपना योगदान दे रहे है। वर्तमान परिवेश में किसानो द्वारा मांगी जाने वाली जानकारीयॉ भी बदल रही है। उदाहरण के तौर पर जहॉ पहले उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया जाता था वही अब कृषि आय बढ़ाने से सम्बन्धित जानकारी का महत्व दिन प्रति दिन बढ़ रहा है।

कृशि जानकारी की आव□यकताऐं

कृषि क्षेत्र में विभिन्न पहलुओ पर सूचना प्रसार का असीम क्षेत्र है। क्या उगाया जाए कब उगाया जाये, कितना उगाया जाये, कब और कहॉ कितना उत्पाद बेचा जाये जिससे की किसान को अच्छी कीमत मिल सके, ये ऐसे प्रश्न है जिनका समाधान सतत तरीके से उन्नत और आधुनिक कृषि सूचना उपलब्ध कराकर किया जा सकता है। कृषि सूचना का एक मुख्य पहलू यह भी है कि छोटे और सीमांत किसानों की सूचना मॉग बड़े काश्तकारों की सूचना मॉग से भिन्न होती है। चूंकि हमारे देश में छोटे व सीमांत किसानों की संख्या 85 प्रतिशत से भी ज्यादा है, अतः ऐसे किसान समुदाय के लिए कृषि सूचना समयोचित उपलब्ध कराने के लिए अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। इसका एक मुख्य कारण यह है कि ऐसे किसानों के पास सीमित उत्पादन संसाधन होते है और इनकी जोखिम उठाने की क्षमता भी सीमित होती है, अतः अपने फार्म पर उत्पादन व आय की अधिकतम प्राप्ति के लिए वे कम लागत व कम जोखिम वाली कृषि तकनीकी की मांग कर सकते है। अभी हाल ही में यह तथ्य भी समने आया है कि भारतीय कृषि में महिला अधिकार वाली जोतो की संख्या में बढ़ोतरी हुई है, ऐसी स्थिति में

महिला कृषकों से सम्बन्धित कृषि जानकारी का प्रसार और अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। मुख्य रूप से किसानों को अद्योलिखित विषयों पर जानकारी की आवश्यकता होती है।

कृशि तकनीक

अच्छी किस्मों की फसलों के बीज, बागवानी के लिए अच्छी–अच्छी किस्म के पौधे, उत्तम नसल के पशु इत्यादि कहॉ से प्राप्त करें, कब और कैसे बोयें तथा क्या–क्या सावधानी बरतें ताकि अधिक से आधिक आमदनी प्राप्त की जा सके।

उर्वरक एवं दवाऐं

कृषि में उपयोग होने वाली खाद एवं उर्वरकों व दवाइयों की कितनी मात्रा कब–कब फसल में देनी चाहिए, बहुत हद तक इस बात पर निर्भर करता है कि किसान भाइयों को फसल विशेष की विभिन्न आवश्यकताओं की कितनी जानकारी है। यदि उन्नत किस्म के उर्वरक और शुद्व दवाईयों को फसलों में देने की समयोचित जानकारी किसानो तक पहुॅचे तो निशचित ही वे इनका उपयोग कर अपनी आमदनी बढ़ाने का हर सम्भव प्रयास करेंगें।

फसल भंडारण और कीट सुरक्षा

कृषि उत्पाद को यदि भंडारण करके सही समय पर बाजार में बेचा जाये तो अधिकतम लाभ की संम्भावना होती है। लेकिन किसानो को यह जानकारी होनी चाहिए कि वे अपने कृषि उत्पाद कहॉ–कहॉ भण्डारण कर सकते है और ऐसे केन्द्रो से किसानो को क्या–क्या अन्य सूचनाएं एवं सहायता मिल सकती है।

कृशि ऋण और फसल उत्पाद मूल्य

यह एक विदित तथ्य है कि हमारे किसान भाइयों के पास तरल मुद्रा की कमी होती है। चूकि कृषि कार्य सही समय पर होने पर ही अच्छी उपज आमदनी दे सकते है, ऐसे में यह आवश्यक है कि किसानों को उचित मात्रा में कृषि ऋण के लिए सरकार द्वारा उचित प्रावधान किये है, लेकिन कृषि ऋण उपयोग की स्थिति अभी भी संतोषजनक नहीं है। ऐसी स्थिति में किसानों को इस तरह की जानकारी मिलना कि कृषि ऋण किस संख्या से आसानी से और उचित लागत पर मिल पायेगा, बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है।

कृशि सूचना के स्रोत

आज का समय सूचना क्रान्ति का युग कहा जाता है। लेकिन खेद का विषय यह है कि बहुत सी उपयोगी और नवीनतम कृषि जानकारी किसानों तक सही समय पर पहुॅच नहीं पाती है। कई अनुसंधान सर्वेक्षणों की रिपोर्ट में बताया गया है कि अभी भी खेती से सम्बन्धित जानकारी के लिए किसानों का आपस में सूचना का आदान प्रदान एक मुख्य सूचना स्रोत है। इसके बाद कृषि इनपुट जैसे बीज, उर्वरक, रसायन, इत्यादि बेचने वाले दुकानदार भी कृषि सूचना किसानो तक पहुॅचाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। यह खेद का विषय है कि हमारे वर्तमान परिवेश में सूचना प्रसार के अत्याधुनिक साधन उपलब्ध होते हुए भी किसानों तक आवश्यक कृषि सम्बन्धी सभी

जानकारीयां समय पर नहीं पहुॅच पाती। हालाकि हाल के वर्षे में सार्वजानिक एंव निजी क्षेत्र द्वारा किये गये सूचना प्रसार के प्रयासो की किसानों द्वारा सराहना भी की गई है। वर्तमान समय में आवश्यकता इस बात की है कि हम सूचना प्रसार के सभी साधनो (अखबार, पत्रिकाएं, रेडियो, दूरदर्शन, इन्टरनेट, ईमेल, एस.एम.एस, सेटेलाइट प्रसारण, इत्यादि) का समुचित उपयोग करके कृषि सम्बन्धी सभी पहलुओ पर सूचना/जानकारी किसानों तक पहुॅचाए जिससे के बदलते परिवेश में वे अपने सीमित साधनो से अधिकतम आय प्राप्त कर सकें।

सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों के प्रयास

सार्वजनिक क्षेत्र ने कृषि सूचनाएं समय पर किसानों तक पहुॅचाने के लिए कई पहल की है। उदाहरण के तौर पर ए.टी.एम.ए केन्द्र (कृषि प्रौद्योगिकी प्रबन्धन एजेंसी) लगभग हर जिले में कृषि के अनवरत विकास के लिए विभिन्न कृषि सम्बन्धी कार्यकलाप करते है। इनका मुख्य उद्देश्य नई कृषि तकनीक को पूरे जिले में पहुॅचाना होता है। ए.टी.एम.ए. केन्द्र स्थानीय स्तर के विभागों के साथ सामंजस्य बिठाकर कार्य करते है। और उनका कार्य सराहनीय पाया गया है। इसके अलावा भारतीय कृषि अनुसंधान द्वारा वित पोषित कृषि विज्ञान केन्द्र सतत रूप से किसानों को जानकारी देते है। जिससे कि उत्पादन एवं उत्पादकता के मध्य अतंराल को कम किया जा सके और किसानों में स्व–रोजगार के अवसर को बढ़ावा दिया जा सके। ये केन्द्र बहुसंकाय वाले क्षेत्रों में कौशल एवं ज्ञानोनमुख प्रशिक्षण प्रदान करते है।

निजी क्षेत्र ने भी चुनिंदा फसलों और कृषि गति विधियों से सम्बन्धित जानकारी उपलब्ध कराने में सराहनीय प्रयास किये है ई–चौपाल, किसान–मित्र, इफको किसान संचार सेवा ऐसे ही कुछ प्रयास है जिनके द्वारा किसानों को कृषि के विभिन्न पहलुओं की विस्तृत जानकारी दी जाती है। हांलाकि निजी क्षेत्र के ये प्रयास कुछ सीमित फसलों और क्षेत्रों तक ही प्रभावी ढंग से लागू किये गये है जहॉ पर निजी क्षेत्र अपने व्यापार की अच्छी सम्भावना देखता है।

आज का युग सूचना क्रान्ति का युग है हमारे पास ऐसे साधनों की भरमार है जिनके द्वारा किसी सूचना/जानकारी को एक जगह से दूसरी जगह शीघ्र अति शीघ्र पहुॅचाया जा सकता है लेकिन आवश्यकता इस बात की है कि हम इन सूचना साधनो का अधिक प्रभावी तरीके से उपयोग करें जिससे कि कृषि क्षेत्र से सम्बन्धित किसी भी नवीन तकनीक की जानकारी किसानों तक सही समय पर और स्थानीय भाषा में पहुॅच सके। समयोचित एवं उपयोगी कृषि सूचना से किसानों को न केवल अधिक उत्पादन और आमदनी बढ़ाने में मदद मिलेगी बल्कि इसके द्वारा कृषि से होने वाले नये–नये आयामों की जानकारी मिल सकेगी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कृषि सम्बन्धी सही सूचना उपयुक्त समय पर किसानों को सतत् रूप से मिलने पर किसान भाइयों को जहॉ अपनी आमदनी बढ़ाने में मदद मिलेगी वही सतत् और टिकाऊ कृषि प्रणाली को बढ़ावा मिलेगा जिससे कि आने वाले समय में हमारे देश की कृषि सम्बन्धी आवश्यकताएं पूरी होगी और कृषि व्यवसाय एक आकर्षक जीवोकोपार्जन का साधन बनेगा।

भारतीय कृषि में सूचना प्रौद्योगिकी का महत्व

सुनील कुमार एवं नंद किशोर जाट

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम, मेरठ (उ.प्र.)

ग्रामीण भारत में कृषि आजीविका का प्रमुख साधन है। कृषि क्षेत्र में, किसानों को नवीनतम विचारों और बेहतर तकनीक की जानकारी देने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी का बहुत महत्व है। कृषि सूचना प्रौद्योगिकी कृषि प्रसार को तकनीकी सहायता प्रदान करता है। 21वीं सदी में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आई.टी.) कृषि विकास प्रक्रिया को तेजी से बढ़ाने में एक प्रेरणा शक्ति के रूप में कार्य कर रही है। सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से किसानों की हर आवश्यकता की सूचना मिल पा रही है। इससे किसानों को कृषि तकनीकी के संबंध में जानकारी, नए तरीकों का आविष्कार, नई फसल, बीज, कीटनाशक, पोषक तत्व प्रबंधन और उत्पादन, कृषि विपणन, उर्वरकों की बेहतर उत्पादकता, फसल कीट प्रबंधन के उपाय, फसल चक्र से मिट्टी की उर्वरता, डेयरी, मधुमक्खी पालन, सुअर पालन, मुर्गीपालन, मछली पालन की गतिविधियों के संबंध में एंव स्थानीय और क्षेत्रीय स्तर पर मौसम अनुमान आदि जानकारी आसानी से उपलब्ध हो पाती है। इस तरह इलेक्ट्रोनिक्स, दूरसंचार, कम्पयूटर और मल्टीमीडिया के तीव्र विकास ने कृषि प्रौद्योगिकी में नई संभावनाए पैदा कर दी है। इसके अतिरिक्त कृषि में सूचना प्रौद्योगिकी को अनेक रूप से इस्तेमाल किया जा सकता है। यथा कृषि बाजारों के बीच सम्पर्क और निर्यातकों, उत्पादकों, व्यापारियों उद्योग एंव उपभोक्ताओं के मध्य विस्तृत राष्ट्रीय नेटवर्क स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इस प्रकार कृषि के चहुँमुखी विकास के लिए सुचना प्रौद्योगिकी का कृषि में अनुप्रयोग आज की आवश्यकता है।

हमारे देश में भारतीय कृषि की संरचना पर एक नजर डाले तो उसमें सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग की असीम सम्भवनाएं नजर आती है। उदाहरणार्थ भारत में 130 से भी अधिक विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्र, विशाल जैव विधिता और प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण है। लेकिन विभिन्न क्षेत्रों में कृषि व्यवसाय व कृषि जोत के अनुसार सूचना की मांग भी भिन्न प्रकार की है। जैसे कि धान–गेहूं फसल चक्र वाले किसानों की सूचना आवश्यकता फल–फूल उत्पादकों से एकदम भिन्न होती है। कृषि व्यवसाय से जुड़ी प्रमुख समस्यों एंव जानकारियां जिन पर ध्यान देना आवश्यक है वह इस प्रकार है।

कृशि से सम्बंधित महत्वपूर्ण सूचनाएं

1 रोग एंव कीट नियंत्रण
2 उर्वरक अनुप्रयोग
3 खाद्य प्रसंस्करण
4 विभिन्न सरकारी योजनाएं
5 ग्रेडिंग संकुल
6 कटाई

7 सिंचाई/वर्षा जल प्रबंधन
8 भूमि की तैयारी
9 ऋण और वित
10 विपणन
11 पौध संरक्षण
12 बीज और आदानों की उपलब्धता
13 मृदा परीक्षण
14 बुआई/रोपाई
15 भंडारण
16 मौसम/ग्रीन हाउस

कृशि में सूचना प्रौद्योगिकी हस्तांतरण उपकरण

- रेडियो
- दूरदर्शन
- टेलिफोन
- कंप्यूटर/इंटरनेट

रेडियो

रेडियो संचार का सबसे पुराना उपकरण होने के नाते यह आम जनता के लिए सबसे सस्ता और मनोरंजक साधन है। आप चाहे खेत में हो या घर पर, रेडियों हर जगह कवरेज प्रदान करता है। यह विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से देश के भौगोलिक एंव आर्थिक क्षेत्र की सही जानकारी उपलब्ध कराता है। किसानों के लिए ग्रामीण विकास के कृषि कार्यक्रम फस्लोत्पादन, पशुपालन, पादप संरक्षण एंव मौसम से संबधित जानकारी चौपाल, खेत की बातें, खेत और खलियान और अन्य विभिन्न क्षेत्रीय सेवाओं द्वारा प्रसारित करता है।

सारणी–1. रेडियो पर प्रसारित दैनिक कृशि कार्यक्रम

प्रसारण का समय	विशय	कार्यक्रम वि□शज्ञ
6.30 से 6.35 तक सुबह	खेती की बातें	कृषि अधिकारियों व वैज्ञानिकों द्वारा
2.00 से 2.30 तक दोपहर	खेत खलियान	
6.20 से 6.50 तक शाम	कृषि जगत	

दूरद□न

कृषि प्रौद्योगिकी हस्तांतरण में दूरदर्शन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आज के तकनीकी युग में दूरदर्शन वास्तव में सबसे शक्तिशाली और बहुमुखी मीडिया है। जो जागरूकता लाने और सदेंश देने में लोगों को विशेष रूप से प्रभावित करता है। भारत में राष्ट्रीय टेलीविजन 'दूरदर्शन' दुनिया में सबसे बड़ा स्थलीय नेटर्वक है। विगत

दर्शकों में 'दूरदर्शन' से ग्रामीण आबादी में सरकारी नीतियों की जानकारी और प्रौद्योगिकी की उपलब्धता में वृद्वि हुई है।

सारणी–2. राश्ट्रीय दूरद□ान (डी.डी. 1) दिल्ली से प्रसारित दैनिक कृशि कार्यकम

प्रसारण का समय	विशय	कार्यक्रम वि□ाशज्ञ
6:30 सुबह 5 मिनट	खेती की खबरें	कृषि वैज्ञानिकों द्वारा
3 मिनट	मंडी भाव	
3.30 मिनट	किसान कॉल सेंटर	

पांच राष्ट्रीय दूरदर्शन चैनल, डी.डी.1, डी.डी 2, डी.डी. न्यूज, डी.डी. भारती, डी.डी. स्पोर्टस और डी.डी. उर्दू है। इसके अतिरिक्त ग्यारह क्षेत्रीय भाषाओं के उपग्रह चैनल डी.डी. उत्तर पूर्व, डी.डी. बंगाली, डी.डी. गुजराती, डी.डी. कन्नड़, डी.डी. पंजाबी, डीडी. पोधी गई और डी.डी. सप्तगिरी है। विभिन्न राज्यों में स्थानिय भाषाओं में क्षेत्रिय कृषि सूचनाओं के लिए दूरदर्शन के क्षेत्रिय स्टेशन हैदराबाद, गुवाहटी, पटना, रायपुर, अहमदाबाद, शिमला, श्रीनगर, रांची, बैंगलोर, तिरूअनंतपुरम, भोपाल, मुम्बई, भुवनेश्वर, जालंधर, जयपुर, चेन्नई, लखनऊ एंव कोलकता शहरों में स्थित है जो किसानों को सीधें तौर पर सरल भाषा में कृषि क्रियाओं संबधित सूचनाएं प्रसारित करते है।

टेलीफोन

आज की जरूरतों के अनुसार एक आम आदमी से लेकर बड़े उद्योगपतियों तक टेलीफोन संचार का सबसे लोकिप्रिय साधन बन गया है। टेलीफोन के माध्यम से कृषि समस्याओं के समाधान के लिए 1 जनवरी 2004 को समस्त देश में 13 कॉल सेंटरों की स्थापना की गई जिसका हेल्प लाइन नम्बर 1800–180–1551 व 1800–425–4085 जो कृषि संबधित जानकारी उपलब्ध कराते है। ये टोल फ्री नंबर है जिस पर किसी भी भाषा में जानकारी ली जा सकती है। इसके अतिरिक्त टेलीफोन तकनीकी से एस.एम.एस. सुविधा द्वारा भी बाजार भाव एंव मौसम संबधित जानकारी हासिल की जा सकती है।

कंप्यूटर/इंटरनेट

कृषि में कंप्यूटर प्रणाली का बहुत महत्व है। कम्पयूटर/इंटरनेट प्रणाली से हम कृषि से जुड़ी हर वो जानकारी प्राप्त कर सकते है जो हमें खेती में मदद कर सकती है। जैसे हम अपने घर बैठकर ही अपने देश में किस किस्म की फसल उगाई जाती है, और कौन सी फसल किस समय पर उगायी जाती है, उसके बोने के तरीके, कितना बीज खेत में डालना है, कितना खाद और किस समय पर डालना है, पानी की मात्रा कितनी होनी चाहिए, फसल पकने पर उसका सही मूल्य क्या है, आज के बाजार में उसकी आवश्यकता कितनी है, आने वाले समय में उस फसल में लोगों का क्या रूझान है कि सूचना प्राप्त की जा सकती है। इसके अतिरिक्त कंप्यूटर पर किसी भी समय खेती पर आधारित विडियों फिल्म देखी जा सकती है। इस प्रकार कृषक अपनी खेती को बेहतर बना सकते है। कम्पयूटर की मदद से हम मंडीयों के भाव और किस समय लोगों को कौन सी फसल की ज्यादा जरूरत है इन सभी बातों की विस्तुत जानकारी प्राप्त कर सकते है।

कृशि संबधित जानकारी के कुछ वेब साईट

http://agmarknet.nic.in यह सेवा मार्च 2000 में शुरू की गई। इसको शुरू करने का मुख्य उददेश्य कृषि उत्पाद उपलब्धता, फसलों की कीमतों, उपलब्धता, प्रवृत्तियों और कृषि से जुड़ी जानकारी को उपलब्ध करना है। आज वर्तमान समय में 'एगमार्कनेट' ने देश भर में बीस से ज्यादा भाषाओं में और रोजमर्रा के जीवन में 400 से ज्यादा वस्तुओं की जानकारी एंव 2900 बाजारों व सभी महत्वपूर्ण एपीएमसी को जोडने की पहल की है। इस वेबसाइट ने देश में कृषि विपणन नीतियों में कार्यान्वयन व विक्रेता के हितों के साथ–साथ उपभोक्तओं में और राज्य सरकारों के बीच भी एक निकट संपर्क बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

http://dacnet.nic.in इस वेब साइट का उदेश्य सूचना और विशिष्ट विषयों कृषक समुदाए के लिए को सूचनाएं उपलब्ध करवाना है जो कि तिलहनों पर व्यापक रूप से उत्पादन के बारे में जानकारी उपलब्ध करवाता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न कार्यक्रमों/योजनाओं, फसलों, कीट–बीमारियों से संबंधित, बीज, किस्मों, उत्पादन और उपज, तिलहन फसलों की बुवाई का समय, कीमतों इत्यादि की जानकारी देता है।

http://agricoop.nic.in यह वेबसाईट राज्य कृषि विपणन बोर्ड (एसएएमबी) कृषि विपणन कि योजना और बाजार में तय की गई कीमतों की सूचना तहत ग्रामीण आबादी की कनेक्टिीवटी कों जोडता है। जो किसानों के जीवन की गुणवत्ता में विकास का काम करती है। देश में किसानों को अच्छी सुविधा देने के लिये 2004 में किसान कॉल सेंटरों की भी शुरूवात हुई। किसान कॉल सेंटर के माध्यम से स्थानीय भाषा में कृषि/बागवानी विभाग, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के विशेषज्ञों और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद इत्यादि संस्थाओं को जोड़ा गया।

http://seednet.gov.in इस वेबसाइट पर विभिन्न क्षेत्रों में बीजों की उपलब्धता एंव आपूर्ति के अलावा फसल चक्र प्रणाली का डेटाबेस भी उपलब्ध हैं। इस पर बीज के इष्टतम् उपयोग की सारी जानकारी उपलब्ध करवाई गई है।

http://www.eagrikiosk.in, http:// www.cau.org.in इस वेब साईट का निर्माण इस उद्देश्य से किया गया कि भारत के पूर्वोत्तर में (ई एग्रीकलचर) को आईसीटी के माध्यम से आदिवासी किसानों को कृषि की बेहतर सेवाएं उपलब्ध करा सके ताकि आदिवासी किसानों को आधुनिक कृषि के बारे में बताया जा सके जिससे वो अपनी कृषि को और बेहतर बना सके और अपनी आय को बढ़ा सके। इस परियोजना में केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, अरूणाचल प्रदेश और वैज्ञानिक एंव औद्योगिक अनुसंधान विभाग (डीएसआईआर) भी शामिल है।

http:// www.eidparry.com http:// www.murugappa.com (ईआईडीपैरी.काम) की स्थापना थोमस पैरी ने की थी जो कि एक ब्रिटिश था। भारत में इसकी स्थापना 1981 में मुरगुप्पा ग्रुप द्वारा शुरू की गई। आंध्र प्रदेश में भारत ग्रामीण वर्ल्ड परियोजना का शुरू करने का उद्देश्य यह था कि भाषाओं में विभिन्नताए होने के कारण कृषि ज्ञान को उनकी ही भाषाओं में किसानों को कृषि के महत्व को बताया जा सके। किसानों की फसलों को उच्चतम दाम दिलाने के लिये इस परियोजना को 1999 में कोओपसन टेक्नोलोजीज लिमिटेड, हैदराबाद ने शुरू किया। तमिलनाडू में मूरगप्पा समूह द्वारा ईआईडी पैरी परियोजना का आरम्भ 2002 में किया गया। इसका फायदा कृषक समूदाय की विशिष्ट सूचना जरूरतों को पूरा करना है जैसे कि फसलों से संबंधित भाव, बीज, इत्यादि का ज्ञान।

http;//www.assamagribussiness.nic.in इस वेबसाइट का उदेश्य यह है कि (1) उत्पादक एंव नियंत्रित संगठन को प्रेरित वित्त पोषण करना (2) कृषक आय को बढ़ाने के लिए परपंरागत कृषि प्रणाली से व्यवापारिक स्तर पर तकनीकी आधारित टिकाऊ खेती में रूपांतरण को बढ़ावा देना। (3) किसानों एंव पर्यावरण की भलाई के लिए कृषि–व्यापार को बढ़ाना देना (4) कृषि से आमदनी को बढ़ावा देना। इसका मिशन एक व्यवसायिक मॉडल में कृषक सरकारी बैंक संस्थान एंव निजी भागीदारी से टिकाऊ के साथ कृषक आय को बढ़ाकर अधिकाधिक जिविकोपार्जन विधाओं का सर्जन करना है। असम आशा परियोजना को सामुदायिकी सूचना केन्द्र के माध्यम से कृषि व्यवसाय को और बढ़ाने व राष्ट्रीय सूचना विज्ञान (एन.आईसी) केन्द्र, ओरेकल, निकनेट, असम राज्य केन्द्र, समाधान आर्किटेकट और नेटर्वक ऑपरेशन ग्रुप आई टी विभाग ने एक संयुक्त उपक्रम बनाया है। जिससे मध्य प्रदेश, हरियाणा, उत्तराखंड, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, केरल और तमिलनाडू में ई–1 चौपाल, आईटी कंपनी ने 6500 ई 40000 भारतीय गांवों में चौपाल का सेट है और अधिक करने के लिये 2010 तक 1 लाख गांवों में 20000 ई चौपाल शुरू में ग्राम पंचायत प्रधान, शिक्षकों व गांव के पोस्टमैन जैसे संचालित व्यक्तियों द्वारा निर्धारित लक्ष्य था अब शिक्षित किसानों ने भी संचालक के रूप में कार्य करना शुरू कर दिया है।

इलेक्ट्रॉनिक मेल व कम्पयूटीकरण के लाभ

- व्यक्तियों संदेश के माध्यम से चयनित व्यक्तियों को सूचना भेजने की सुविधा उपलब्ध कराता है।
- कंप्यूटर ई–मेल और कंम्प्यूटर पर विडियो कॉन्फ्रेंसिंग से कृषकों को लाभ होता है प्रक्षिक्षण उपकरण के रूप में मल्टीमीडिया का उपयोग इस क्षेत्र में लाभप्रद है।
- सूचना प्रौद्योगिकी को विभिन्न बाजारों के मध्य कनेक्विटी प्रदान करने में और निर्यातकों, उत्पादकों, व्यापारियों, उद्योग, उपभोक्ताओं के विस्तृत क्षेत्र के नेटवर्क के माध्यम से राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संपर्क से दिन प्रतिदिन की जानकारी प्राप्त कर सूचना प्रौद्योगिकी का कृषि विपणन में महान सुविधा के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।
- इससे हम कृषकों का बेहतर सूचनाएं प्रदान कर उनकी कृषि संबधित समस्याओं का निदान कर नए विचारों एंव नई तकनीकियों को किसानों तक पहुंचा सकते है।
- समय और मानव शक्ति की बचत कराता है और इसके साथ–साथ ही 100 प्रतिशत की शुद्वता का प्रमाण भी देता है।
- मांग के अनुसार सूचना की उपलब्धता प्रदान कराता है।

प्रमुख सिफारि

- विस्तार सेवाओं और बाजार के बीच में अधिक तालमेल की जरूरत है।
- हर डाटाबेस को अपडेट करके इंटरनेट पर संबधित वेबसाइट पर डालना चाहिए।

- सभी एजेंसियों के लिए एकीकृत हो कर काम करने की जरूरत है।
- भविष्य में यह भी ध्यान में रखना होगा की जहां पर सूचना प्रौद्योगिकी की कमी है वहां पर भी कृषि सूचनाएं भेजने का प्रयास करना होगा।
- छोटे एंव मध्यम किसानों की संसाधनों की कमी को पूरा करके उन्हे नई दिशा देनी होगी।
- भारतीय किसानों को आज नई सोच के साथ नई पद्वित को उपनाना होगा।

निश्कर्श

- आज सूचना प्रौद्योगिकी हमारी आर्थिक जरूरत बन गया है।
- इलेकट्रोनिक उपकरणों की मदद से सूचना प्रौद्योगिकी किसानों के लिए ई–कियोस्क, ई–चौपाल, कृषि विज्ञान केन्द्र व कृषि विभाग से समय–समय पर जानकारी मिलती रहती है।
- सूचना प्रौद्योगिकी की सेवाएं से ग्रामीण व शहरी क्षेत्र में एक नई सूचना क्रांति का जन्म हुआ है और इसे कृषि क्षेत्र में और अधिक बढ़ाना चाहिए जिससें हमारे देश की उन्नति हो।

किसानों की समस्याओं को कैसे जाने एवं उनके निदान के उपाय

अनिल कुमार एवं बृजेन्द्र कुमार शर्मा

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशलय, मोदीपुरम, मेरठ – 250110

हमारा देश सदियों से कृषि प्रधान देश रहा है और आज भी देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। इस जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग अशिक्षित एवं गरीब होने के कारण आधुनिक कृषि तकनीक के अंगीकरण में अनेक समस्याएँ आती हैं। इसके अलावा देश की भौगोलिक स्थिति कुछ इस प्रकार है कि अलग–अलग क्षेत्रों में अलग–अलग प्रकार की जलवायु एवं प्राकृतिक सम्पदा पाई जाती है। इसके कारण विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग प्रकार की कृषि–परिस्थितिकी पाई जाती है जिसमें कृषि से संबन्धित समस्याएँ व उनके निदान भी अलग–अलग होते हैं। अतः कृषि–परिस्थितिकी एवं किसानों की सामाजिक व आर्थिक स्थिति दो ऐसे कारक हैं जो देश में कृषि के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की समस्याएँ पैदा करते हैं जिनके निदान के लिए रणनीतिक उपाय करने पड़ते हैं।

किसानों की समस्याओं को जानने के लिए हमारे देश में कई प्रकार की विधियाँ प्रचलित हैं। इनमें किसानों के साथ गोष्ठी अथवा समूह चर्चा सबसे पुरानी एवं सबसे प्रचलित विधि है। इनके अलावा वैज्ञानिकों तथा प्रसार कार्यकर्ताओं द्वारा ग्रामीण इलाकों का प्रक्षेत्र भ्रमण करके, रैपिड रूरल एप्राइजल अथवा पार्टीसिपेटरी रूरल एप्राइजल के तहत किसानों से व्यैक्तिक रूप से अथवा समूह में बातचीत करके उनकी समस्याओं की जानकारी प्राप्त की जाती है। आधुनिक युग में इलैक्ट्रॉनिक मीडिया के बढ़ते प्रभाव के कारण टेलीकॉन्फ्रेंसिंग तथा वीडियोकॉन्फ्रेंसिंग के द्वारा टेलीफोन, रेडियो एवं टेलीविजन पर किसानों की समस्याओं के बारे में विशेषज्ञों को जानकारी प्राप्त होती है:

1. **समूह चर्चा:** इस विधि में विशेषज्ञों द्वारा किसानों के समूह के साथ चर्चा की जाती है तथा उनकी समस्याओं की जानकारी प्राप्त की जाती है। इस चर्चा में अधिक से अधिक लोगों की भागीदारी होने से प्रमुख समस्याओं एवं उनके वास्तविक कारणों की सही जानकारी प्राप्त होती है। कई बार समूह चर्चा में किसानों की समस्याओं का निदान भी निकल आता है।

2. **प्रक्षेत्र भ्रमण:** इस विधि में विशेषज्ञों द्वारा किसानों के गाँव एवं खेतों का भ्रमण किया जाता है तथा वहाँ पाई जाने वाली समस्याओं को सीधे तौर पर दर्ज किया जाता है। इसमें किसानों से भी सीधे बातचीत की जाती है ताकि उनकी समस्याओं का पता लगाया जा सके। इस विधि को सर्वेक्षण विधि भी कहते हैं जिसके मुख्यतः दो प्रकार हैं।

क. रैपिड रूरल एप्राइजल (आर.आर.ए.): इस विधि में पहले से तैयार प्रश्नावली की मदद से गाँव के कुछ चुने हुए किसानों से व्यक्तिगत रूप से वार्त्ता की जाती है। किसानों द्वारा उपलब्ध कराई गई जानकारी को प्रश्नावली में दर्ज कर दिया जाता है। दर्ज की गई सूचना का बाद में विश्लेषण किया जाता है ताकि सर्वेक्षण किए गए क्षेत्र की प्रमुख समस्याओं के बारे में निष्कर्ष निकाला जा सके।

ख. पार्टीसिपेटरी रूरल एप्राइजल (पी.आर.ए.): यह विधि किसानों की समस्याओं के बारे में सही एवं त्वरित जानकारी प्राप्त करने के लिए अत्यन्त कारगार मानी जाती है। इसमें किसानों के साथ छोटे–छोटे समूहों में वार्त्ता की जाती है ताकि उनकी समस्याओं की सही जानकारी प्राप्त हो सके। इस विधि में किसी प्रश्नावली का प्रयोग नहीं किया जाता है, लेकिन विशेषज्ञों द्वारा कुछ बातों को कागज पर नोट किया जाता है ताकि उन सूचनाओं को बाद में विश्लेषण हेतु प्रयोग किया जा सके। इस विधि में कई तकनीक अपनाई जाती हैं, जैसे टाइम लाइन, ऋतु कलैण्डर, सामाजिक मानचित्र, संसाधन मानचित्र, समस्या–कारण विश्लेषण, मैट्रिक्स रैंकिंग, इत्यादि। इस विधि की प्रमुख विशेषता यह है कि किसानों की समस्याओं की पहचान एवं उनके निदान के उपाय किसानों द्वारा ही सुझाए जाते हैं तथा इसमें विशेषज्ञों की भूमिका केवल सुविधाकर्त्ता के रूप में ही होती है।

3. इलैक्ट्रॉनिक मीडिया:

आधुनिक युग में इलैक्ट्रॉनिक मीडिया जैसे टेलीफोन, टेलीविजन, रेडियो आदि के बढ़ते प्रचार–प्रसार के कारण खेती के क्षेत्र में भी इनकी भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है।

क. टेलीफोन सेवा: पुराने समय में दूरदराज के किसान विशेषज्ञों तक अपनी समस्याएँ पहुँचाने तथा उनके निदान हेतु डाक द्वारा पत्र भेजा करते थे। परन्तु अब घर–घर में टेलीफोन की उपलब्धता होने के कारण किसान टेलीफोन के माध्यम से ही विशेषज्ञों को अपनी समस्याएँ बता देते हैं। इसके लिए कृषि से संबन्धित विभिन्न संस्थानों में किसान टेलीफोन सेवा केन्द्र की स्थापना की गई है। इस सेवा केन्द्र में एक विशेषज्ञ नियमित रूप से होता है जो किसानों के टेलीफोन कॉल्स को सुनकर उनकी समस्याओं को विषय–विशेषज्ञों तक पहुँचा देता है तथा उनका निदान भी प्राप्त करता है।

ख. रेडियो कार्यक्रम: आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों द्वारा कुछ विशेष समय कृषि कार्यक्रमों के लिए निर्धारित किया गया है। इन कार्यक्रमों में किसानों से पत्र अथवा टेलीफोन द्वारा प्राप्त समस्याओं पर चर्चा की जाती है तथा उनका निदान सुझाया जाता है। इन कार्यक्रमों में आजकल लाइव फोन–इन कार्यक्रम बहुत ही प्रचलित हो रहा है क्योंकि इस कार्यक्रम में किसान स्टूडियो में बैठे विशषज्ञों से सीधे बातचीत कर अपनी समस्या बता सकते हैं तथा उनका निदान भी प्राप्त कर सकते हैं।

ग. टेलीविजन कार्यक्रम: रेडियो कार्यक्रम की तरह ही दूरदर्शन के विभिन्न केन्द्र भी कुछ समय कृषि कार्यक्रमों के लिए आबंटित करते हैं, जिनमें किसानों की समस्याओं को दर्ज करके उनका निदान किया जाता हैं।

समस्याओं के निदान के उपायः

किसानों की समस्याओं के निदान हेतु हमारे देश में अनेक विधियाँ अपनाई जाती हैं। ये विधियाँ किसानों की सामाजिक, आर्थिक तथा भौगोलिक स्थिति को देखते हुए प्रयोग में लाई जाती हैं। कोई भी एक विधि सभी प्रकार के किसानों के लिए कारगर सिद्ध नहीं हो सकती है। देश की भौगोलिक एवं सामाजिक जटिलताओं के कारण विभिन्न प्रकार के किसानों की समस्याओं के निदान के लिए अलग–अलग विधि प्रयोग में लाना आवश्यक होता है। उदाहरण के लिए कम पढ़े–लिखे तथा पिछड़े किसानों को व्यक्तिगत रूप से कृषि तकनीकों के बारे में बताया जाता है, जबकि प्रगतिशील किसानों के लिए सामूहिक विधियों से ही जानकारी देना प्रभावी होता है। इसी प्रकार दूर–दराज के क्षेत्रों में रहने वाले किसानों के लिए मीडिया द्वारा जानकारी उपलब्ध कराना अधिक कारगर साबित होता है, जबकि संस्थानों के नजदीक रहने वाले किसानों के लिए व्यक्तिगत विधियाँ प्रभावी होती हैं।

किसानों की समस्याओं के समाधान हेतु व्यक्तिगत विधियों में प्रक्षेत्र निरीक्षण, विधि प्रदर्शन, पत्राचार तथा टेलीफोन द्वारा वार्त्ता प्रमुख हैं। सामूहिक विधियों में प्रशिक्षण कार्यक्रम, परिणाम प्रदर्शन, किसान गोष्ठी, किसान मेला, प्रक्षेत्र दिवस तथा रेडियो एवं टेलीविजन पर वार्त्ता प्रमुख हैं।

1. व्यक्तिगत विधिः

क. प्रक्षेत्र निरीक्षणः इसमें विशेषज्ञ किसानों के खेतों का निरीक्षण कर खेत में मौजूद समस्याओं का आकलन करते हैं तथा उनका समाधान किसानों को मौके पर ही बता देते हैं। यह विधि विशेषज्ञों को खेतों की समस्याएँ सीधे तौर पर जानने में मदद करती है।

ख. विधि प्रद□ानः विधि प्रदर्शन में कृषि तकनीक की नई पद्धति अथवा पुरानी पद्धति को नए ढंग से अपनाने के लिए किसानों को कार्य करके सिखाया जाता है। इस विधि में प्रत्येक किसान को उसके खेत में प्रदर्शन लगाकर तकनीक को अपनाने की विधि व्यक्तिगत रूप से दिखाई जाती है। इस प्रदर्शन द्वारा किसी पद्धति के परिणाम को सिद्ध नहीं किया जाता है, बल्कि पद्धति को अभ्यास में लाने की प्रक्रिया को दर्शाया जाता है। यह तकनीक करके सीखने के सिद्धान्त पर आधारित है।

ग. पत्राचारः यह विधि पुराने समय से ही काफी प्रचलित रही है जिसमें किसान अपनी समस्याओं के बारे में कृषि संस्थानों के विशेषज्ञों को पत्राचार के माध्यम से अवगत कराते हैं। संस्थानों के विशेषज्ञ पत्र में वर्णित समस्याओं का समाधान लिखकर किसानों के पास जवाब भेज देते हैं। यह विधि अत्यन्त प्रभावी एवं सस्ती है, लेकिन इसमें समय अधिक लगता है।

ध. टेलीफोनः नब्बे के दशक में टेलीफोन के प्रचार–प्रसार से यह जीवन के हर क्षेत्र में संचार का एक प्रबल माध्यम बन गया है। इक्कीसवीं शताब्दी में भारत के ग्रामीण इलाकों में टेलीफोन की बढ़ती उपलब्धता एवं प्रयोग से कृषि के क्षेत्र में सूचना के आदान–प्रदान का यह एक महत्वपूर्ण माध्यम बन चुका है। अब किसान टेलीफोन द्वारा विशेषज्ञों से सीधे सम्पर्क कर अपनी समस्याओं का समाधान पूछते हैं। यह सेवा प्रदान करने

हेतु प्रत्येक कृषि संस्थान में किसान टेलीफोन सेवा केन्द्र की स्थापना भी की गई है। इन केन्द्रों को टेलीकॉन्फ्रेंसिंग के द्वारा किसान काल सेंटर से भी जोड़ा गया है।

2. सामूहिक विधियाँ:

क. प्रशिक्षण कार्यक्रम: प्रशिक्षण एक ऐसी विधि है जिसमें किसानों को कृषि तकनीक अपनाने की पद्धति में दक्षता प्रदान की जाती है तथा नई तकनीकों के बारे में उनकी सोंच में भी परिवर्तन किया जाता है। यह विधि भी स्वयं कार्य करके सीखने के सिद्धांत पर आधारित है। किसानों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम दो प्रकार के होते हैं – संस्थानों में प्रशिक्षण (ऑन कैम्पस) तथा गाँव में प्रशिक्षण (ऑफ कैम्पस)। संस्थानों में प्रशिक्षण के तहत किसानों को संस्थान में बुलाकर विषय विशेषज्ञों द्वारा संस्थान में हो रही नई–नई खोजों एवं आधुनिक तकनीकों के बारे में जानकारी दी जाती है। ये जानकारियाँ किसानों की समस्याओं के निदान पर आधारित होती हैं ताकि किसान उन जानकारियों के आधार पर अपनी फसलों, पशुओं, आदि से संबन्धित समस्याओं का समाधान कर सकें। दूसरी तरफ गाँव में प्रशिक्षण कार्यक्रम के तहत विषय–विशेषज्ञ स्वयं गाँव में जाकर किसानों को उनकी समस्याओं के समाधान हेतु प्रशिक्षित करते हैं। यह विधि अक्सर अधिक प्रभावी साबित होती है क्योंकि इसमें किसानों को अपने गाँव/खेत के माहौल में ही आधुनिक तकनीक/पद्धति सीखने का अवसर प्रदान होता है। इस परिस्थिति में किसान बेहतर ढंग से सीखने में समर्थ होते हैं।

ख. परिणाम प्रदर्शन: इसमें नई कृषि क्रियाओं के तरीकों की महत्ता को प्रदर्शित किया जाता है। परिणाम प्रदर्शन का मुख्य उद्देश्य किसानों के समक्ष यह साबित करना है कि नई मान्यताएं/तकनीक स्थानीय स्थिति में भी सफल या प्रयोगात्मक हो सकती हैं। इस विधि में प्रदर्शन किसानों के ही खेत में, उन्हीं की परिस्थिति में, उन्हीं के द्वारा लगवाये जाते हैं तथा अन्त में परिणाम भी उन्हीं के द्वारा, उन्हीं के समक्ष प्राप्त किए जाते हैं।

ग. किसान गोश्ठी: यह विधि किसानों की समस्याओं के समाधान हेतु अत्यन्त लोकप्रिय विधि है। इस विधि में विषय–विशेषज्ञ किसानों के समूह से अनौपचारिक रूप से बात करते हैं तथा उनकी समस्याओं का समाधान बताते हैं। इसमें किसान बारी–बारी से अपनी समस्याओं को बताते हैं तथा विषय–विशेषज्ञ तत्काल उनका समाधान सुझा देते हैं। यह विधि अन्य विधियों के साथ भी प्रयोग में लाई जाती है, जैसे किसान मेला, प्रक्षेत्र दिवस, आदि में किसान गोष्ठी एक महत्वपूर्ण अंग होता है।

घ. किसान मेला: किसान मेला किसानों के साथ वृहत तौर पर सम्पर्क का एक माध्यम है जिसमें किसानों के लिए एक ही स्थान पर कम समय में अनेक प्रकार की जानकारियाँ तथा सेवाऐं उपलब्ध होती हैं। इसमें किसानों की समस्याओं के समाधान पर आधारित प्रदर्शनी लगाई जाती है तथा कृषि–सामग्री भी उपलब्ध कराई जाती है। किसानों की समस्याओं के समाधान हेतु किसान गोष्ठी का भी आयोजन किया जाता है। मेले में किसानों के लिए उपयुक्त कृषि पाठन सामग्री जैसे लीफलेट, पैम्फलेट, न्यूजलेटर, फोल्डर, पत्रिका, आदि मुफ्त में उपलब्ध कराये जाते हैं।

ड़. **प्रक्षेत्र दिवसः** इसमें किसानों के समूह को उस क्षेत्र में चल रहे विभिन्न फसलों से संबन्धित प्रयोगों तथा प्रदर्शनों को वहां ले जाकर दिखाया जाता है। प्रदर्शनों/प्रयोगों में अपनाई गई उन्नत तकनीक किसान की तकनीक से किस तरह बेहतर है, यह किसानों के समूह को विस्तार से समझाया जाता है तथा किसानों की समस्याओं का निदान किया जाता है।

च. **रेडियो वार्त्ताः** रेडियो एक ऐसा माध्यम है जिसके जरिए काफी बड़े जनसमूह को कम खर्च एवं कम समय में अधिक–से–अधिक लोगों तक जानकारी पहुँचाई जा सकती है। रेडियोवार्त्ता में विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ, वैज्ञानिक, प्रसार कार्यकर्त्ता तथा प्रगतिशील किसानों द्वारा विभिन्न विषयों पर चर्चाएँ, व्याख्यान, विभिन्न समस्याओं के निदान आदि कराये जाते हैं। आकाशवाणी द्वारा ऐसे कृषि कार्यक्रमों को प्रसारित करने का समय रोजाना शाम को 6–8 बजे तक का नियत किया गया है। आकाशवाणी पर आजकल लाइव फोन–इन कार्यक्रम काफी लोकप्रिय हो रहा है जिसमें किसान स्टूडियो में बैठे विशेषज्ञ से टेलीकॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से टेलीफोन पर सीधे बातचीत कर सकते हैं। विशेषज्ञ किसानों की समस्याओं का समाधान त्वरित रूप से रेडियो तथा टेलीफोन पर बता देते हैं।

छ. **टेलीविजन वार्त्ताः** टेलीविजन संचार का एक सशक्त माध्यम है। इसमें कृषि क्षेत्र में हो रही नई–नई खोज, तकनीक, कृषि के क्षेत्रों में सफल किसानों की कहानी, किसानों की समस्याएँ एवं उनका निदान, कृषि वार्त्ता, आदि समय के हिसाब से टेलीविजन पर दिखाते हैं ताकि कृषि क्षेत्र की उपलब्धियाँ किसानों तक पहुँचाई जा सकें। दूरदर्शन पर ऐसे कृषि कार्यक्रमों को प्रसारित करने का समय रोजाना शाम को 6–8 बजे तक नियत किया गया है। आकाशवाणी की तरह दूरदर्शन पर भी कृषि से संबन्धित लाइव फोन–इन कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं जो काफी लोकप्रिय हो चुके हैं।

कृषि प्रणाली अनुसंधान निदेशालय के वैज्ञानिकों द्वारा किसानों की समस्याओं को जानने हेतु एवं उनके समाधान हेतु उपरोक्त वर्णित कार्यक्रमों में से कुछ को उपयोग में लाया जाता है। इनमें से प्रमुख हैं– सर्वेक्षण कार्यक्रम, प्रशिक्षण कार्यक्रम, किसानों के लिए व्याख्यान, समूह चर्चा, प्रयोगशाला एवं फार्म का भ्रमण, कृषि प्रदर्शनी, प्रक्षेत्र दिवस, विधि एवं परिणाम प्रदर्शन, कृषक खेत परीक्षण, रेडियो एवं टेलीविजन पर वार्त्ता, पार्टीसिपेटरी रूरल एप्राइजल, आदि। ये कार्यक्रम वैज्ञानिकों द्वारा सीमित स्तर पर चलाए जाते हैं, चूँकि प्रसार कार्यक्रम निदेशालय का मुख्य उद्देश्य नहीं है। लेकिन इन कार्यक्रमों द्वारा तकनीक को वैज्ञानिकों से सीधे किसानों तक पहुँचाने में मदद मिलती है ताकि ऐसे कार्यक्रम एक आदर्श के रूप में स्थापित हो सकें। दूसरी तरफ वैज्ञानिकों को भी किसानों की समस्याओं को सीधे तौर पर समझने का अवसर प्राप्त होता है ताकि इनका उपयोग शोध के कार्यों में कर किसानों की समस्याओं का समाधान किया जा सके।

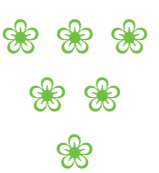

कृषि प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

मोदीपुरम, मेरठ–250 110 (यू.पी.), भारत

दूरभाष : 0121-288 8571, 295 6309; Fax : 0121-288 8546

ई–मेल : director@pdfsr.ernet.in, directorpdfsr@yahoo.com

भाकृअनुप
ICAR

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch